भूषण-ग्रंथावली

संपादक

ब्रजरत्नदास, बी० ए० (प्रयाग)
एल-एल० बी० (काशी)

प्रकाशक

रामनारायण लाल
प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता
इलाहाबाद

दूसरी बार १०००]   १९५०   [मूल्य २)

विषय-सूची

संपादन-सामग्री

इस ग्रंथावली के संकलन तथा संपादन में जिन पुस्तकों से सहायता ली गई है उनकी सूची नीचे दी जाती है और उनके संपादकों तथा लेखकों के प्रति इस ग्रंथ का संपादक अपना हार्दिक धन्यवाद प्रकट करता है।

१—भूषण ग्रंथावली— पं० श्यामबिहारी मिश्र।
२—भूषण ग्रंथावली—पं० रामनरेश त्रिपाठी।
३—प्रभा।
४—माधुरी व० ४ खं० २ सं० ४, व० ३ खं० १ सं० २, व० २ खं० २ सं० ६।
५—समालोचक भा० १, २, ३, ४।
६—मनोरमा व० ३ खं० १-२, व० ४ खं० १।
७—किनकेड पारसनीस कृत 'मराठों का इतिहास' भाग १-३।
८—शिवाजी, प्रो० यदुनाथ सर्कार-कृत नया संस्करण।
९—औरंगजेब " भा० १-३।
१०—इलिअट डाउसन कृत 'हिस्टरी ऑव इंडिया एज टोल्ड बाई इट्स ओन हिस्टोरिअन्स' जि० ६-८।
११—मूतानेणसी की ख्यात।
१२—काशी नागरी प्रचारिणी पत्रिका भा० ६ सं० १९८२।
१३—टॉड्स राजस्थान भा० २।
१४—मआसिरुल् उमरा-हिन्दी अनुवाद।
१५—मआसिरे-आलमगीरी।

१६—भारत के प्राचीन राजवंश भा० ३ ।

१७—इम्पीरिअल गजेटिअर जि० १-१५ ।

१८—ऐतिहासिक एटलस, चार्ल्स जोप्पेन ।

१९—मतिराम ग्रंथावली सं० पं० कृष्णबिहारी मिश्र बी० ए० एल-एल० बी०, सं० माधुरी वा समालोचक ।

२०—हिन्दी-साहित्य का इतिहास प्रो० पं० रामचन्द्र शुक्ल ।

२१—भूषण-ग्रंथावली सं० पं० वेदव्रत शास्त्री ।

२२—सम्पूर्ण-भूषण सं० पं० रामचंद्र गोविंद काटे ।

छत्रपति शिवाजी

भूमिका

हिन्दी-साहित्य का इतिहास देखने से यह ज्ञात हो जाता है कि उस पर राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक तथा सांप्रदायिक परिस्थितियों का कितना प्रभाव पड़ा है। यद्यपि हिन्दी भाषा कहीं अधिक प्राचीन है, पर हिन्दी-साहित्य का आरम्भ विक्रमाब्द ग्यारहवीं शताब्दी से माना जाता है। यह समय भारत के इतिहास में वह था जब कि एक ओर इस देश पर मुसलमानों के आक्रमण पर आक्रमण हो रहे थे और दूसरी ओर भारतीय नरेशगण उन्हें रोकने तथा अपने अपने देश को अन्यदेशीय शत्रुओं से पददलित न होने देने के प्रयत्नों में सतत लगे हुए थे। यही कारण है कि इस काल के कविगण ऐसे ही भारतीय आदर्श वीरों को सामने रखकर अपनी कवित्व-शक्ति दिखला गये हैं। चित्तोड़ के रावल खुम्माण ने चौबीस युद्ध कर म्लेच्छ आक्रमणकारियों को परास्त कर भगा दिया था, जिस पर खुम्माण रासो रचा गया था। भारत के अंतिम सम्राट् प्रातःस्मरणीय महाराज पृथ्वीराज की वीरता, युद्ध-नैपुण्य, साहस, शील आदि के वर्णन में पृथ्वीराज रासो सा बृहत् ग्रन्थ लिखा गया है। विजयपाल रासो, बीसलदेव रासो आदि भी इस प्रकार के अनेक ग्रन्थ इस काल में प्रणीत हुये थे। तीन शताब्दियों के भीतर भीतर मुसलमानों का आधिपत्य भारत भर में अच्छी प्रकार जम गया तथा वे अन्य धर्मीय विजेतागण भी इस देश में दूर दूर तक आ बसे जिससे यहाँ की राजनीतिक तथा सामाजिक

परिस्थिति बहुत कुछ बदल गई । अब राजाओं तथा सम्राटों से नवाब, सुलतान तथा बादशाह बड़े समझे जाने लगे । देश के प्रबन्ध तथा रक्षा का भार प्रायः विदेशियों के हाथ में चला गया और यहां के छोटे छोटे बचे खुचे राजे इन बादशाहों के मांडलिक और सामन्त बनकर रहने ही में अपना मान समझने लगे थे । साथ ही एक बिलकुल नये धर्म के आ जाने से सांप्रदायिक मतमतांतर के सिवा एक नया धार्मिक द्वन्द्व भी मच गया था । विजेतागण यहाँ के देशीय धर्मों को शस्त्र के जोर पर उखाड़कर अपना धर्म फैलाना चाहते थे जो भारतीय रुचि के अनुकूल न था । इस कारण 'निधन के धन राम' तथा 'निबल के बल श्याम' के अनुसार यहाँ वाले अपनी सांत्वना के लिए ईश्वर की शक्ति तथा दया के भिखारी होने लगे । देव-मंदिरों के गिराये जाने तथा देवमूर्तियों के खंडन से उनके हृदय निराकार उपासना की ओर भी झुक पड़े । हिंदू तथा मुसलमानों के सहवास से राम रहीम की एकता दिखलाना भी आवश्यक हो चला । इसलिये प्रायः सत्रहवीं शताब्दी विक्रमाब्द तक हिन्दी कविता देवी मीरा बाई बनकर प्रकृति के अनुसार कविता देवी कामिनी रूप के शृङ्गार में भी लग गई और यह इसी कार्य में लगी हुई थी कि देश में कुछ विशेष राजनीतिक विप्लव होने के कारण इन्हें पुनः चंडिका का रूप भी धारण करना पड़ा था ।

यह वह काल था जब कई विशिष्ट कारणों से मुसलमानों के हाथ से भारतीय आधिपत्य निकलकर पुनः इसी देश के राजाओं के हाथ में आ रहा था और 'अब तक जानत हे बड़े होत पातसाह अब पातसाहन से राजा बड़े होत हैं । दक्षिण में मराठों का उत्कर्ष-सूर्य शिवाजी के रूप में पश्चिमी घाटों पर

उदय हो चुका था। बुंदेलखंड में महाराज छत्रसाल स्वातंत्र्यसुधाकर को उदीयमान कर प्रत्येक बुंदेले वीर के मृत हृदय में उत्साह भर रहे थे। राजस्थान में महाराणा राजसिंह राठौड़ वीर दुर्गादास आदि की सहायता कर राजपूतों को सुषुप्त राज्यलक्ष्मी को अरावली पर्वत के प्रत्येक शृंग से रणभेरियाँ बजाकर जगा रहे थे। उसी काल के इन्हीं प्रचंड तथा यशस्वी वीरों के रक्त का फल है। कि आज भारत के मानचित्र में इतने राजवंशों के राज्य अंकित है। अस्तु इसी काल का प्रभाव था कि शृंगारिक काव्यों तथा रीति ग्रन्थों के बीच में वीरगाथा काल के से दो चार ग्रन्थ दिखाई दे जाते हैं। शिवराज भूषण, छत्रप्रकाश, राजविलास आदि रचनाएँ अपने समय की परिस्थिति की द्योतका हैं। यदि ये वीरगण न हुये होते तो वीर रस के ये कविगण भी शृंगारिक कविता करते और स्यात् अपनी उद्दंडता का परिचय उसी में दे डालते।

भूषण का समय हिन्दी साहित्य के इतिहास के रीति काल के अंतर्गत है और इनका प्राप्य प्रधान ग्रन्थ भी अलकार ग्रन्थ है, पर ऊपर जैसा कहा जा चुका है उसके उदाहरण शृंगार रस पूर्ण न होकर आदर्श के अनुरूप वीर रस से ओत प्रोत हैं। भूषण स्वयं कहते हैं कि—

भूषन यों कलि के कविराजन राजन के गुन पाय नसानी।
पुन्य चरित्र सिवा सरजै बर न्हाय पवित्र भई पुनि बानी॥

वास्तव में इन कविराजों पर अपने समय के आश्रय देने वाले राजाओं का प्रभाव पड़ता ही था और ये उन्हें प्रसन्न करना ही चाहते थे, इसीलिए उन्हीं के रुचि के अनुकूल कविता करते थे। भूषण जी ने एक प्रकार से वैसा ही किया है और उसी से उन्हें बहुत संपत्ति भी प्राप्त हुई थी, पर जिसे वह प्रसन्न करना

चाहते थे वह भारत के सच्चे मुखोज्ज्वलकारी सुपुत्र थे। जिन्हें प्रशंसा अवश्य प्रिय थी पर चाटुकारी नहीं। सच्ची स्तुति से तो ईश्वर भी प्रसन्न होता है। ऐसे ही सुकवि का अब परिचय दिया जाता है जो प्रस्तुत साधनों से उपलब्ध हो सका है।

१—कवि-परिचय

शिवराजभूषण के छंद २६ तथा २७ में कवि के वंश तथा जन्मस्थान का परिचय इस प्रकार दिया है कि भूषण जी रत्नाकर के पुत्र थे तथा काश्यपगोत्रीय त्रिपाठी कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे। इनका जन्मस्थान यमुना नदी के तटस्थ त्रिविक्रमपुर ग्राम था जहाँ इनके पिता सदा से रहते थे। इसी स्थान में राजा बीरबल से सुकवि हुए और विश्वेश्वर के समान जहाँ बिहारीश्वर का मन्दिर है। यह त्रिविक्रमपुर घाटमपुर तहसील के एक मौजा अकबरपुर-बीरबल के पास है, जो यमुना नदी के बाएँ किनारे पर कानपुर से ३१ मील दक्षिण है। यह कानपुर जिले ही के अंतर्गत है। कानपुर से हम्मीरपुर जाने वाली सड़क पर घाटमपुर से लगभग ९ मील पर त्रिविक्रमपुर अर्थात् वर्तमान तिकवाँपुर गाँव बसा है। यह अकबरपुर-बीरबल भूषण कवि के अनुसार सम्राट अकबर के अंतरंग मित्र राजा बीरबल का जन्म-स्थान था और उन्होंने अपने आश्रयदाता तथा अपने नाम पर इस मौजे का नया नामकरण किया है। इसके पहिले इसका क्या नाम था इसका कुछ पता नहीं चला। इस मौजे में राधाकृष्ण का एक प्राचीन मन्दिर भी वर्तमान है जिसे ही भूषण ने बिहारीश्वर लिखा है।*

---

*आर्कियोलोजिकल सर्वे ऑव इन्डिया द्वारा प्रकाशित पश्चिमोत्तर

इस प्रकार ऐसे स्थान में रत्नाकर जी के पुत्ररत्न होकर भूषण जी ने अपना बाल्यकाल समाप्त किया तथा पठन पाठन से निवृत्त होकर यह राज्याश्रय की खोज में बाहर निकले। यह पहिले पहिल पास ही के एक राजा के पास गए, जो शिवराज-भूषण के पद २८ के अनुसार बड़े ही साहसी तथा शीलवान थे। इनका नाम हृदयराम तथा रुद्रराम दोनों हो सकता है; पर इन दोनों नाम में पिता पुत्र का सम्बन्ध अवश्य है अर्थात् हृदयराम-सुत रुद्र या हृदयराम, सुत रुद्र। यह सोलंकी क्षत्रिय थे तथा चित्रकूटपति इनकी पदवी थी। भूषण के इन्हीं आश्रयदाता ने इन्हें इनकी कवित्व-शक्ति पर प्रसन्न होकर 'भूषण' की पदवी दी, जो इतनी प्रसिद्ध हुई कि उसने इनके नाम का निशान तक न छोड़ा। उक्त ग्रन्थ के पद २५ से ऐसा स्पष्ट ज्ञात होता है कि इस प्रकार भूषण की पदवी प्राप्त करने के अनन्तर तथा पद २४ के अनुसार शिवाजी के रायगढ़ राजधानी बनाने के उपरान्त भूषण कवि भी वहाँ शिवाजी के दरबार में अन्य गुणियों के साथ पहुँचे। सन् १६६२ ई० में शाह जी की सम्मति पर शिवाजी ने रैरी शृंग पर रायगढ़ दुर्ग बनने की आज्ञा दी थी और उसके पूर्ण होने पर उसमें कोष आदि भेजे थे। सन् १६६४ ई० में शाह जी की मृत्यु होने पर इन्होंने अहमदनगर द्वारा प्राप्त पैतृक राजा की उपाधि धारण कर रायगढ़ में टकसाल खोली थी। इससे यह कहा जा सकता है कि सन् १६६४ ई० के बाद ही भूषण शिवा-जी के दरबार में गए। परिशिष्ट ङ कालचक्र देखने से भी यह ज्ञात हो जाएगा कि उस समय तक शिवाजी की ख्याति भारतवर्ष भर में इतनी फैल गई थी तथा उनका स्व-अर्जित राज्य भी इतना

प्रांत और अवध के प्राचीन इमारत और लेख', सम्पादक डा० फुरेर भा० २ पृ० १६५।

विस्तृत और समृद्धिशाली हो गया था कि दूर दूर से गुणी लोग उनका यश सुन कर आश्रय लेने आने लगे थे।

शिवाजी के दरबार में प्रवेश हो जाने पर और वहाँ से धन वृत्ति आदि मिलने पर अपने ऐसे उदार आश्रयदाता की प्रशंसा में भूषण ने कुछ रचना करने का विचार किया। उन्हीं दिनों—

शिवचरित्र लखि यों भयो कवि भूषन के चित्त।
भाँति भाँति भूषननि सों भूषित करौं कवित्त॥

शिवा जी के चरित्र स्वभाव आदि का अच्छी प्रकार निरीक्षण कर कविराज ने शिवराजभूषण नामक अलङ्कार ग्रन्थ की रचना की और उदाहरणों में अपने उस वीररसावतार आश्रयदाता के चरित्र के अनुरूप ही वीररस पूर्ण गुणानुवाद किया जिसने—

बीजापुर गोलकुंडा जीत्यो लरिकाई ही में
ज्वानी आए जीत्यो दिलीपति पातसाह को।

यह ग्रन्थ ज्येष्ठ कृष्ण १३ सं० १७३० वि० रविवार को समाप्त हुआ और तब भूषण ने इसे अपने आश्रयदाता को भेंट कर इसके उपलक्ष में बहुत कुछ पुरस्कार प्राप्त किया होगा। इस प्रकार कई वर्ष तक शिवाजी के राजदरबार में रहने तथा एक ग्रन्थ पूर्ण कर प्रचुर पुरस्कार पाने पर यह अपने घर अवश्य गए होंगे। यद्यपि सं० १७३१ वि० का शिवाजी का राज्याभिषेकोत्सव अत्यन्त महत्वपूर्ण घटना थी; पर इतने ही समय के बीच भूषण का घर से लौट कर आ जाना सम्भव नहीं था। ग्रन्थ-समाप्ति तथा अभिषेकोत्सव के बीच केवल एक वर्ष का समय मिलता जिसमें बहुत सा समय आते जाते ही व्यतीत हो जाता और

इसी से भूषण इस उत्सव में सम्मिलित नहीं हो सके। भूषण की प्राप्त कविता में सं० १७३० वि० तक की घटनाओं का जितनी प्रचुरता से वर्णन मिलता है उससे कहीं कम, नहीं के समान, बाद की घटनाओं का उल्लेख है। इस अभिषेकोत्सव के विषय में तो कुछ भी नहीं कहा गया है। केवल शिवा बावनी के पद सं० ३२ में कहते हैं कि—

> राजन के राज सब साहन के सिरताज,
> आज शिवराज पातसाही चित धरी है।
> बलख बुखारे कसमीर लौं परी पुकार,
> धाम धाम धूम धाम रूम साम परी है॥

सं० १७३७ वि० में शिवाजी की मृत्यु होने पर शम्भा जी गद्दी पर बैठे। अपने राजत्व के आरम्भ में चार पाँच वर्ष तक इन्होंने युद्ध-प्रियता दिखलाई जो क्रमशः मन्द पड़ते पड़ते सं० १७४३ वि० में विषयवासना के अंधकार में लुप्त हो गई। शम्भा जी के विषय में जो कवित्त कहा गया है, उसका मुख्य अंश यों है—

> भूषन जू खेलत सितारे में सिकार शम्भा,
> शिवा को सुवन जाते दुवन मँचै नहीं।
> बाजी सब बाज से चपेटैं चंग चहूँ ओर,
> तीतर तुरुक दिल्ली भीतर बचैं नहीं॥

इससे यह स्पष्टतः नहीं कहा जा सकता कि भूषण ने शम्भा जी के दरबार में पहुँच कर यह पद उनकी प्रशंसा में बनाया हो। शम्भा जी के दरबार में कलश कवि की प्रधानता थी, जिसे स्यात् भूषण जी से उद्दण्ड प्रकृति के कवि सहन न कर सके हों और इसलिए इस दरबार में न गए हों। सं १७४६ वि० में शम्भा जी मारे भी

गए और इसी कारण इनके बुर्हानपुर, भड़ोच आदि लूटने तथा पुर्तगीजों पर प्राप्त विजयों का कुछ भी वर्णन नहीं किया गया है। शम्भा जी के अल्पवयस्क पुत्र शिवाजी द्वितीय सं० १७४६ वि० में गद्दी पर बैठे और उसी वर्ष के अंत में मुग़लों के हाथ क़ैद हुए। औरंगज़ेब ने इनका नाम बदल कर साहू रखा। इनके विषय में कहे गए दोनों पद इसके बाद ही के हो सकते हैं क्योंकि दोनों में साहू जी नाम दिया है। इनके विषय में कहे गए पदों के कुछ अंश इस प्रकार हैं—

> साहू जी की साहिबी दिखात कछु होनहार,
> जाके रजपूत भरे जोम बमकत हैं।
> दच्छिन के आमिल भे सामिल ही चहूँ ओर,
> चम्बल के आर पार नेजा चमकत हैं॥
> रूम रूँदि डारै खुरासान खूँदि मारै खाक,
> खादर लौं झारै ऐसी साहू की बहार है।

ऐसी प्रशंसा कारागारस्थित साहू की कोई भी कवि नहीं कर सकता। उस हालत में किसी की साहिबी को होनहार कहना प्रशंसा नहीं, प्रत्युत् अभिशाप कहलायेगा। इससे यही निश्चय है कि सं० १७६४ वि० में कारागार से छूटने और सितारा की गद्दी पर बैठने के बाद ये दोनों पद बने होंगे। साथ ही यह भी निश्चय पूर्वक कहा जा सकता है कि होनहार शब्द उसकी रचना का साहू के राजत्वकाल के बिलकुल आरम्भ में होना बतला रहा है। इन विचारों से यह स्पष्ट है कि भूषण द्वितीय बार सं० १७६४-५ वि० में दक्षिण गए थे।

एक पद और है जिसमें 'साहू को सराहौं के सराहौं छत्रसाल को' लिखा गया है। यह पद भी पूर्वोक्त विचारों से सं० १७६४ वि०

के बाद ही रचित हो सकता है। इसका कुछ लोग यों पाठ भेद मानते हैं—'शिवा को सराहौं कै सराहौं छत्रसाल को,' पर यह ठीक नहीं जँचता। शिवाजी की मृत्यु के समय तत्कालीन इतिहास में छत्रसाल का स्थान क्या था? उस समय तक यह एक साधारण विद्रोही राजा के रूप में मिलते हैं, जिन पर सं० १७३७ वि० में तहव्वर खाँ आदि सर्दारों को औरंगजेब ने भेजना उचित समझा था। इसके पहिले वे उसी देश के छोटे मोटे ज़मीदार आदि को परास्त कर करद बनाने में लगे हुए थे। इसलिये दूसरा पाठ तो शुद्ध नहीं है, पहिला पाठ ही ठीक है। अब देखना है कि सं० १७६४ वि० में इन्हीं महाराज छत्रसाल का भारत-साम्राज्य में क्या स्थान था। उस समय इनकी अवस्था छप्पन वर्ष की थी और इन्होंने मुग़ल साम्राज्य के बड़े बड़े अनेक सर्दारों को परास्त कर अपना राज्य दृढ़ कर लिया था। इसी वर्ष बहादुर शाह ने भी इनको इनके अर्जित राज्य की सनद दे दी थी। तात्पर्य यह कि उस समय महाराज छत्रसाल इस योग्य हो गए थे कि मराठा साम्राज्य के अधिपति साहू जी से उनकी समुचित तुलना की जा सकती थी। इस तर्कावली से यह सिद्ध हो जाता है कि भूषण जी सं० १७६४-६५ वि० में साहू के दरबार में गए थे और वहाँ से अच्छी प्रकार पुरस्कृत हो कर यह स्वदेश लौटते हुए महाराज छत्रसाल के दरबार में भी गए होंगे। यहीं इनका अभूतपूर्व आदर हुआ था।

किंवदन्ती है कि भूषण जी की बिदाई करते समय महाराज छत्रसाल ने उनकी पालकी में स्वयं कंधा लगा दिया था, जिससे कविराज जी बड़े प्रसन्न हुए और उसी समय एक दशक रच डाला। इसके समर्थन में कुछ लोग विचित्र बिचित्र तर्क करते हैं। एक तर्क यों है कि ऐसा आदर करना विशेषतः युवकों ही के योग्य है, जो समय पर कोई विचार उठते ही उसे चट

कर डालते हैं, इसलिए भूषण छत्रसाल के दरबार में शिवराज-भूषण की समाप्ति के बाद ही देश लौटने पर गए थे। वे यह नहीं सोचते कि छत्रसाल के दशक की ऐतिहासिक घटनाएँ घटित होने के पहले ही उसका उल्लेख कैसे हो गया। साहू जी प्रशंसा योग्य कब हुए, यह भी आवश्यक विचार है। अस्तु, इस किंदंती में जो कुछ सार हो, तात्पर्य इतना ही है कि भूषण जी का महाराज छत्रसाल ने अवश्य ही बहुत कुछ आदर किया होगा। वे स्वयं कवि थे और कवियों के आश्रयदाता थे। भूषण जी महाराज शिवाजी के राजकवि थे और उनकी कविता की चारों ओर धूम थी। इधर छत्रसाल भी भूषण के मनोनुकूल चरितनायक थे। पाँच सवार तथा कुछ पैदल लेकर मुगल साम्राज्य के हृदय में एक स्वतंत्र राज्य का संस्थापन करने वाला वीर असाधारण पुरुष था। यदि भूषण ने ऐसे सर्वमान्य भारतमुखोज्ज्वलकारी वीरश्रेष्ठ की प्रशंसा में दस बारह पद बना दिए तो उसके लिए इस दंतकथा मात्र को कारण मानना निर्मूल है।

खाए मलिच्छन के छोकरा पै तबौ डोकरा को डकार न आई।

एक छंद का अन्तिम पद है जिसमें भूषण उपनाम नहीं आया है। इस पद को लेकर एक सज्जन कहते हैं कि इसे भूषण ने, जो उस समय 'छोकरा' थे छत्रसाल के लिए जो उस समय प्रायः चौहत्तर वर्ष के डोकरे थे यह छंद बनाया था; पर यह बिलकुल भ्रांत कल्पना है।

अब यह देखना है कि सं० १७३१ वि० और सं० १७६४ वि० के बीच चौंतीस वर्ष तक भूषण घर ही पर रहे या अन्य राजाओं के यहाँ जाते आते रहते थे। रुद्रशाह ने तो इन्हें उस समय भूषण की पदवी दी थी जब इन्होंने कविता बनाना आरंभ किया था और इसलिये उनकी प्रशंसा में एक दोहा और एक कवित्त रचा गया था।

शिवाजी तथा उनके पुत्र और पौत्र का ऊपर उल्लेख हो चुका है। छत्रसाल जी की दरबारदारी का भी वर्णन हो जाने पर छः सात राजे बच जाते हैं, जिनकी प्रशंसा में भूषण के एक-एक या दो-दो छंद मिलते हैं। एक आध सज्जन ने इनके चार पाँच अन्य आश्रयदाताओं को भी खोज निकाला है। महाकवि मुरारि के अनर्घ्यराघव नाटक में एक स्थान पर कहा गया है कि—

स्थितिः कवीनामिव कुंजराणां स्वमंदिरे वा नृपमंदिरे वा।
गृहे गृहे किं मशका इवैते भवंति भूपालविभूषितांगाः॥

इस श्लोक में कवि तथा कुंजर की तुलना की गई है कि वे दोनों ही राजाओं की सभाओं (गजशाला) में या अपने ही गृहों (जंगल) में रहते हैं और मशकों के समान घर घर नहीं घूमते फिरते। महाकवि भूषण महागजेंद्र के समान थे, जिन्हें हर एक साधारण राजा बाबू न प्रसन्न ही कर सकता था और न इन्हें ही भारत के मुग़ल सम्राट औरंगज़ेब से प्रतापी शत्रु का सफलता-पूर्वक सामना करने वाले प्रतिद्वंद्वी छत्रपति महाराज शिवाजी तथा उनके वंशजों का आश्रय प्राप्त करने पर अन्य छोटे छोटे राजाओं की सभासदी करना शोभा देता था। पंडितराज जगन्नाथ ने सत्य ही कहा है कि—

दिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो वा मनोरथान् पूरयितुं समर्थः।
अन्ये नृपाः यद्ददतीहि काले शाकाय वा स्यात् लवणाय वा स्यात्॥

उस पर किंवदंती के अनुसार शिवाजी से भूषण जी को इतना अधिक धन प्राप्त हुआ था कि उन्होंने एक साथ एक लाख रुपये का लवण अपने गृह पर भेजा था। भूषण जी ने अपनी कविता में शिवाजी को बराबर जगदीश्वर का अवतार माना है। ऐसी अवस्था में भूषण जी का एक आध दर्जन छोटे छोटे रजवाड़ों तथा

बबुआनों में जाना और वहाँ भी उन लोगों की एक एक दो दो छंद में कुछ प्रशंसा कर उनसे लाख दो लाख रुपये न लेकर कुछ व्यंग्य-बाण छोड़ कर लौट आना उनके उपयुक्त नहीं समझ पड़ता। यदि कहा जाय कि उनमें धनतृष्णा अधिक थी तो 'कमायूँ नर नाह' के यहाँ कुछ रुपये के पुरस्कार का त्याग देना कोरी दंतकथा मात्र रह जाती है।

भूषण के जिन आश्रयदाताओं का नाम लिया जाता है उनमें मुख्य मुख्य का ऊपर उल्लेख हो चुका है। बचे हुओं में प्रायः आधे अज्ञात हैं और जो ज्ञात हैं उनके लिए भी जो एक दो छन्द कहे गये हैं उनमें किसी में भी ऐसी ऐतिहासिक घटना का उल्लेख नहीं है जिससे उन छन्दों के निर्माण का समय निश्चित किया जा सके। अस्तु, यही निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि सं० १७३१ वि० तथा सं० १७६४ वि० के बीच का समय, जिस काल में मराठा राज्य पर औरंगज़ेब के दक्षिण में रहने से विशेष आपत्ति आपड़ी थी और उनके राज्य के दक्षिणी सीमांत के जिंजी आदि दुर्ग तक मुग़लों के हाथ में चले गए थे, भूषण जी उत्तरी भारत में पर्यटन करते रहे हों और अपने भाई बंधु आदि के आग्रह से उनके आश्रयदाताओं के दरबार में भी गए हों। वे सं० १७६४ वि० के बाद ही कहते भी हैं कि 'और रांव राजा एक मन में न ल्याऊँ अब साहू को सराहौं कि सराहौं छत्रसाल को।' अर्थात् उस समय तक जिन दरबारों में वे जा चुके थे उनसे वे इतने असंतुष्ट थे कि अब वे ऐसे स्थानों को मन में भी स्थान नहीं देना चाहते थे। इस कथन के बाद उनका कहीं अन्यत्र जाना और वह भी साधारण जमींदारों के यहाँ जाना किसी बहुत ही असाधारण कारण ही से हो सकता था, जो अभी तक नहीं ज्ञात हुआ है।

इस प्रकार महाकवि भूषण की जीवनी की पर्यालोचना

करने पर मेरा अनुमान है कि इनका जन्मकाल सं० १७०० वि० के लगभग हुआ होगा। बीस बाइस वर्ष की अवस्था में यह आश्रय की खोज में घर से बाहर निकले और 'कुल सुलंक चितकूटपति हृदय राम सुत रुद्र' के यहाँ कुछ दिन ठहर कर 'भूषण' पदवी प्राप्त की। इसके अनंतर शिवाजी की उदारता तथा वीरता की ख्याति सुनकर सं १७२४ वि० के लगभग उनके दरबार में गए। यहीं शिवराज भूषण नामक ग्रन्थ की रचना की. जो ज्येष्ठ कृष्ण १३ भानुवार सं १७३० वि० को समाप्त हुआ। इसके कुछ दिन अनंतर यह अपने घर लौटे और अपना समय सुख से उत्तरी भारत में पर्यटन में व्यतीत करने लगे। इनके गृह लौटने के छ वर्ष बाद शिवाजी की मृत्यु हुई, मुग़ल सम्राट औरंगजेब दक्षिण पहुँचे, शंभा जी मारे गए तथा साहू जी कैद हुए। इन कारणों से यह साहू जी के छूटने पर सं० १७६४ वि० के बाद दक्षिण गए। वहां से यह वृद्धता के कारण शीघ्र ही लौटे और छत्रसाल जी से भेंट करते घर चले गए। इसके बाद ही सत्तर पछहत्तर वर्ष की अवस्था में या कुछ अधिक वृद्ध होकर यह वीरलोक गए होंगे।

भूषण ने अपने वंश. पिता, जन्म स्थान आदि के विषय में स्वयं जो कुछ लिखा था उसका ऊपर उल्लेख हो चुका है। उनके भाइयों के विषय में यह कहा जाता है कि ये चार भाई थे पर अधिक मत तीन ही भाई मानता है। चौथे जटाशंकर उपनाम नीलकंठ के भ्रातृत्व के विषय में सब का एक मत नहीं है। चिंतामणि भूषण तथा मतिराम ये तीन भाई इसी वयानुक्रम से माने जाते हैं। इन कवियों ने स्वयं कहीं अपने भाइयों का उल्लेख नहीं किया है। जिन साधनों से इन तीन कवियों का भ्रातृत्व माना जाता है, उनमें सब से प्राचीन मौलाना गुलाम अली आजाद का 'तज़किरः सर्वे आजाद' है, जिसमें चिंतामणि के

विषय में लिखा गया है कि मतिराम और भूषण चिंतामणि के दो भाई थे तथा वे कोड़ा जहानाबाद के निवासी थे। गुलाम अली का जन्म सन् १७०४ ई० में हुआ था और सन् १७८६ ई० में इनकी मृत्यु हुई थी। इनके पितामह मीर अब्दुल जलील बिलग्रामी सैयद रहमतुल्ला के मित्र थे जिन्होंने चिंतामणि जी को पुरस्कृत किया था। गुलाम अली फारसी के सुकवि, इतिहासज्ञ तथा प्रसिद्ध गद्य-लेखक थे। इन्होंने कई ग्रंथ लिखे हैं और इन तीनों ही कवियों को वृद्धावस्था में वे संसार में आ चुके थे और उनकी मृत्यु के समय स्यात् युवा भी हो चुके थे। इनके इस भ्रातृ-संबंध विषयक कथन को अकारण ही अशुद्ध मान लेने का कोई कारण नहीं है। अब यहाँ भूषण के अतिरिक्त अन्य तीन कवियों का संक्षिप्त परिचय दे दिया जाता है।

चिंतामणि जी के छंदविचार, काव्यविवेक, काव्यप्रकाश, रामायण तथा कविकल्पतरु नामक पाँच ग्रंथ शिवसिंह के पुस्तकालय में थे। अंतिम विनोदकारों के पुस्तकालय में भी है। इनका छंदविचार ही भाषापिंगल नाम से खोज में प्राप्त हुआ है। रसमंजरी एक और ग्रंथ खोज में मिला है। इनका बनाया रामाश्वमेध ग्रंथ का कुछ अंश मिला है. जिससे इनका कश्यपगोत्री कान्यकुब्ज त्रिपाठी होना ज्ञात हुआ है। इनके आश्रयदाताओं में शाहजहाँ, औरंगजेब, जैनदी अहमद, रुद्रसाह सोलंकी तथा मकरंदशाह भोंसला का नाम लिया जाता है।

मतिराम जी ने ललितललाम, छंदसार पिंगल, साहित्यसार, रसराज, लक्ष्मण शृङ्गार, मतिराम सतसई, अलङ्कार पंचाशिका, फूलमंजरी तथा वृत्तकौमुदी रचा है, ऐसा कहा जाता है। जहाँगीर, भाऊसिंह हाड़ा. शम्भूनाथ सोलंकी तथा स्वरूप सिंह बुंदेला इनके आश्रयदाता थे। मतिराम नाम ही के एक कवि का

लीथो में प्रकाशित 'राजवंशावली' भी मिली है। वृत्तकौमुदी का रचना-काल सं० १७५८ वि० है, जिसके रचयिता मतिराम अपना परिचय यों देते हैं—

तिरपाठी बनपुर बसै बत्स गोत्र सुनि गेह।
बिबुध चक्रमनि पुत्र तहँ गिरिधर गिरिधर देह॥
भूमिदेव बलभद्र हुव तिनहिं तनुज मुनि गान।
मंडित पंडित मंडली मंडन मही महान॥
तिनके तनय उदारमति विश्वनाथ हुव नाम।
द्युतिधर श्रुतिधर को अनुज सकल गुनन को धाम॥
तासु पुत्र मतिराम कवि निज मति के अनुसार।
सिंह स्वरूप सुजान को बरन्यो सुजस अपार॥

सं० १८७२ बि० में समाप्त हुई 'रसचंद्रिका' नामक पुस्तक के रचयिता कवि बिहारीलाल जी ने अपना वंश परिचय उसी ग्रन्थ में इस प्रकार दिया है।

बसत त्रिविक्रमपुर नगर कालिंदी के तीर।
विरच्यो भूप हमीर जनु मध्य देश को हीर॥
भूषन चिंतामनि तहाँ कवि-भूषन मतिराम।
नृप हमीर सनमान तें कीन्हें निज निज धाम॥
है पंती मतिराम के सुकवि बिहारीलाल।
जगन्नाथ नाती विदित सीतल सुत सुभ चाल॥
कस्यप बंस कनौजिया बिदित त्रिपाठी गोत।
कविराजन के बृन्द में कोविद सुमति उदोत॥
विविध भाँति सनमान करि ल्याये चलि महिपाल।
आए विक्रम की सभा सुकवि बिहारीलाल॥

यह चरखारी-नरेश राजा विजय बहादुर विक्रमाजीत और उनके पुत्र महाराजा रत्नसिंह के दरबार के राजकबि थे।*

* (चरखारी का इतिहास अँ० पृ० ३६,३८)।

ये दोनों ही राजे सुकवि तथा हिंदी-प्रेमी थे। बिहारी लाल का यह वंशपरिचय भूषण, मतिराम तथा चिंतामणि के भ्रातृत्व का स्पष्टतः न उल्लेख करते हुए भी उसका एक प्रकार से समर्थन करता है। भूषण ने अपना जो गोत्र, कुल, जन्मस्थान आदि लिखा है, वह सब बिहारीलाल द्वारा कथित मतिराम के विषय में भी ठीक उतरता है। बिहारीलाल राजा विक्रमाजीत के दरबार में गए थे, जो सं० १८४५ वि० में महाराज खुमानसिंह के युद्ध में मारे जाने पर गद्दी पर बैठे थे। इससे मतिराम का समय अठारहवीं शताब्दी के अंतगत पड़ता है।

मतिराम की रचनाओं में फूलमंजरी जहाँगीर की आज्ञा से बनी, जिसका राज्यकाल सं० १६६०--१६८४ वि० है। यह रचना इसी बीच की हो सकती है। ललितललाम ग्रन्थ राजा भाऊसिंह हाड़ा के आश्रय में बना था, इससे इसका निर्माणकाल सं० १७२८ वि० के पूर्व ही है। अलंकार पंचाशिका कुमायूँ नरनाह ज्ञानचंद के लिए सं० १७४७ वि० में बनी थी। वृत्तकौमुदी का निर्माणकाल सं० १७५८ वि० के पूर्व ही है। अन्य ग्रन्थों में रचनाकाल नहीं दिया है। इन सब बातों में से किसी को भी अशुद्ध मानने का कोई कारण नहीं है इससे यही निश्चय है, कि एक से अधिक मतिराम अवश्य उस काल में वर्तमान थे। चिंतामणि जी ने रामाश्वमेध को छोड़ कर अन्यत्र न स्वयं ही अपने विषय में कुछ लिखा है और न उनके किसी वंशज ही ने उनका उल्लेख किया है। अस्तु, अभी तक इन तीनों सुकवियों के भ्रातृत्व के विषय में ऐसा कोई कथन नहीं मिला है, जिससे उक्त सम्बन्ध अशुद्ध प्रमाणित हो सके।

नीलकंठ उपनाम जटाशंकर भी इन त्रिपाठी-त्रय के भाई कहे जाते हैं पर न सर्वे-आजाद में और न रसचंद्रिका ही में इनका

उल्लेख है। इन्होंने अमरेश विलास नामक एक ग्रन्थ लिखा है, जिसका रचनाकाल एक दोहे में यों दिया है।

बरष सै सोरह ठानबे सातैं सावन मास।
नीलकंठ कवि उच्चरिय श्री अमरेश विलास॥

इससे यह ग्रन्थ स० १६९८ वि० में निर्मित हुआ ज्ञात होता है, जो अमरसिंह के लिए लिखा गया है। रीवाँ नरेश अमरसिंह सं० १६८३ वि० में जहांगीर के दरबार में गए थे और सं० १६६२ वि० में अब्दुल्लाखाँ बहादुर के साथ युद्ध पर गये थे। इनके पूर्वजों में रामसिंह तथा बीरसिंह भी हुए हैं जैसा कि इस ग्रंथ में उल्लेख है। यह सब होते हुए भी इन्हें स्पष्टतः त्रिपाठी-त्रय का भाई कहना ठीक नहीं ज्ञात होता।

पूर्वोक्त बिहारीलाल के वंशपरिचय से यह भी ज्ञात होता कि भूषण के वंशजगण उसी ग्राम में उनकी मृत्यु के बाद भी रहते थे। भूषण के विषय में इससे अधिक अभी कुछ ज्ञात नहीं हुआ है। इनकी रचनाओं तथा आश्रयदाताओं का अन्यत्र विवरण दिया गया है।

२—भूषण-विषयक दंतकथाएँ

१—निमक की कथा

चिन्तामणि, भूषण, मतिराम तथा जटाशङ्कर नामक चार पुत्रों को छोड़कर जब पं० रत्नाकर जी त्रिपाठी का स्वर्गवास हो गया तब गृहस्थी के निर्वाहार्थ धनोपार्जन के लिए यत्न करना आवश्यक हुआ। चिन्तामणि तथा मतिराम गृहस्थी के प्रबन्ध के

लिए भूषण को घर ही पर छोड़कर जीविका की खोज में निकले। चिन्तामणि जी की दिल्ली सम्राट् के दरबार में पहुँच हो गई और वे धन कमाकर घर पर भेजने लगे। मतिराम जी भी आश्रय की खोज में लगे हुए थे। जटाशङ्कर साधु प्रकृति के पुरुष थे और वे सत्संग ही करने में व्यस्त रहते थे। भूषण उद्दण्ड स्वभाव के थे और केवल घर के प्रबन्ध आदि की देख-भाल करते थे। तात्पर्य यह कि उस समय तक चिन्तामणि जी ही उन चारों भाइयों में कमासुत थे और प्रकृत्या उनकी स्त्री को अपने पति के इस सार्थक गुण पर बहुत गर्व था। उसकी आँखों के सामने केवल भूषण ही थे जिस पर वह व्यंगोक्ति कस सकती थी और एक दिन उसने स्त्रीसुलभ स्वभाव से साधारण सी बात पर अपने मन की कसक मिटा ही ली। एक दिन भोजन में निमक कम होने से भूषण ने उससे माँगा। इस पर उनकी भावज साहेबा ने ताना मारकर कहा कि बहुत सा निमक कमा कर ला रखा है, जो उठाकर दे दूँ। बात भी किसी समय की ऐसी लग जाती है कि तीखे स्वभाव वाले को मरण कष्ट सा होने लगता है। भूषण को यह व्यंग असह्य हो उठा और उन्होंने उसी समय जीविकोपार्जन के लिए 'निकल घर से बस राह जङ्गल की ली।' इसके अनन्तर घूमते फिरते जब कभी यह शिवाजी के दरबार में पहुँचे और 'अठारह या बावन' लाख रुपया, गाँव और हाथी एक बार ही प्राप्त किया तब इस प्रकार एक साथ ही अपने भाग्य-कपाट के खुल पड़ने से ऐसे प्रसन्न हुए कि एक लाख रुपया का निमक खरीद कर अपनी भावज के पास भेज दिया। ज्ञात नहीं कि वह सब निमक उनकी भावज साहबा ने किस प्रकार खर्च किया। भूषण के ग्रन्थों के कुछ संपादकों को यह कथन स्यात् इतना अत्युक्तिपूर्ण मालूम हुआ कि उन्होंने पुरस्कार-प्राप्ति में हाथी, गाँव के साथ

लाख के स्थान पर सहस्र कर दिया और एक लक्ष के लवण के बदले केवल कई बोरे ही भेजवाए।

कालेज की शिक्षा के समय की एक बात याद आ गई। एक मौलवी साहब, जो अपने को बादशाहों का वंशज बतलाया करते थे, अपने यहाँ के व्यय आदि का कक्षा में खूब बढ़ाकर वर्णन किया करते थे। एक दिन बातों ही में आपने कह डाला कि हमारे यहाँ तीन कनस्टर मिट्टी का तेल नित्य खर्च हो जाता है। सभी आश्चर्य से यह बात सुन रहे थे कि किसी चिलबिले लड़के ने आड़ से आवाज़ दी कि क्या पूरियाँ भी इसी में तली जाती हैं। मौलवी साहब क्रोध से चुप रह गए। साधारणतः इसी प्रकार दंतकथाएँ बनती जाती हैं।

२—कबूतरी घोड़ी

भूषण के बड़े भाई चिन्तामणि जी बादशाही दरबार में जमे हुए थे। इसलिए यह भी इधर उधर घूमते हुए वहीं पहुँचे। कहा जाता है कि इन्होंने भूषण को बादशाह के सामने पेश किया और कविता सुनाने की आज्ञा दिलवाई। जब औरंगजेब ने कविता सुनाने की आज्ञा दे दी तब आपने 'हुक्म दिया' कि 'दरबार के अन्य कवियों की शृंगारी कविता सुनते सुनते आपके हाथ ठौर कुठौर पड़ते रहे हैं इसलिए आप हाथ धो लें क्योंकि हम ऐसे कवि की वीररसमयी कविता सुनकर आपके हाथ मोछों पर पहुँचेंगे'। यह सुनकर औरंगजेब ने कहा कि यदि ऐसा न हुआ तो तुम्हें प्राणदण्ड दिया जायगा। इन्होंने इस शर्त को स्वीकार कर लिया तब औरंगजेब हाथ को स्यात् यमुना-जल से पवित्रकर कविता सुनने को सन्नद्ध हो बैठा।

भूषण ने अपनी कविता सुनानी आरम्भ की और अन्त में ऐसा भी हुआ कि औरंगजेब के हाथ बलात् मोछों पर पहुँच कर उनकी खबर लेने लगे । बादशाह इस पर अत्यन्त प्रसन्न हुआ ।

एक दिन कवि-सम्मेलन हो रहा था और उसमें बादशाह भी उपस्थित थे । उस दिन न जाने बादशाह को क्या सूझी कि आप कहने लगे कि तुम लोग हमारी सर्वदा प्रशंसा ही किया करते हो, क्या हमारे में कोई ऐब नहीं है कि उसका भी वर्णन करो। चापलूसों ने यही कहा होगा कि श्रीमान् में कोई दुर्गुण होते तो अवश्य ही उनका उल्लेख अब तक हो जाता, पर ऐसे कोई हैं ही नहीं । भूषण जी वहाँ उपस्थित थे। इन्होंने क्षमा का वचन लेकर औरंगजेब का दुर्गुण-गान आरम्भ किया और स्फुट संग्रह के पद सं० ३७ और ३८ पढ़ डाला । औरंगजेब इस सत्यस्तव पर बड़ा क्रुद्ध हुआ, पर वचन देने के कारण उसने इन्हें प्राणदण्ड नहीं दिया। इन्होंने दरबार में जाना छोड़ दिया। एक दिन औरंगजेब जुम्मा मस्जिद में निमाज़ पढ़ने जा रहा था कि सामने से भूषण जी महाराज अपनी कबूतरी घोड़ी पर सवार आ पहुँचे। बादशाह इनके सलाम बन्दगी न करने पर अत्यन्त क्रुद्ध हुआ और इन्हें पकड़ने के लिए आज्ञा दी, पर इन्होंने जो ऐड़ मारी तो पीछा करने वाले मुख देखते ही रह गए और यह हवा हो गए।

इस कहानी को कुछ लोग बड़ी श्रद्धा से निमक मिर्च लगा कर कहते हैं। भूषण ने 'इसी बीच महाराज शिवाजी को भी वहाँ देखा था' ऐसा भी लोगों ने लिखा है; पर यदि यह कथन सत्य है तो भूषण ने भारी भूल की। यदि वह इस अलिफलैला के हवाई घोड़े सी या पुष्पकविमान सी घोड़ी शिवाजी को

भेंट कर देते तो वे बहुतेरे संकटों से बच जाते और इनका भी रायगढ़ में अधिक अभूतपूर्व सत्कार हुआ होता।

३—अठारह बार या बावन बार

ऐसा कहा जाता है कि जब भूषण दक्षिण में रायगढ़ के पास पहुँचे तब वहाँ के तत्कालीन नरेश से उनसे राजधानी से बाहर किसी कूँए पर भेंट हुई। बातचीत में इन्होंने अपने आने का प्रयोजन भी कह डाला क्योंकि वह राजा उस समय एक उच्च अफसर के छद्मवेश में था। इनका परिचय पाकर उसने इनसे कुछ कवित्त सुनाने के लिए प्रार्थना की। भूषण ने उसके द्वारा दरबार में शीघ्र प्रवेश पाने के विचार से उसे प्रसन्न करना उचित समझकर एक कवित्त पढ़ डाला। इसे सुनकर वह अति प्रसन्न हुआ और उसे पुनः सुनना चाहा। भूषण ने उसे फिर बड़ी तड़क भड़क से पढ़ा, परन्तु सुनने वाले का मन नहीं भरा और उसने पुनः सुनने की इच्छा प्रकट की। इस प्रकार अठारह बार उसी कवित्त को सुनाते सुनाते कवि जी थक गए और चुप हो रहे। अफसर महाशय अपनी प्रसन्नता प्रकट करते और दरबार में आने का निमंत्रण देते चले गए। दूसरे दिन जब भूषण दरबार में पहुँचे तो क्या देखते हैं कि वही महाशय गद्दी पर विराजमान हैं और स्वयं सेनापति न होकर महाराष्ट्रपति हैं। महाराज ने इनसे कहा कि हमने कल यह स्थिर किया था कि आप जितनी बार उस कवित्त को पढ़ेंगे उतने ही लक्ष रुपए, ग्राम तथा हाथी आपको भेंट में दिए जाएँगे, इसलिए आप इस भेंट को स्वीकार करें। तब से भूषण जी उसी दरबार में रहने लगे।

कुछ लोग इस नरेश का नाम शिवाजी और कुछ लोग साहू जी बतलाते हैं। साथ ही ऐसी भी किंवदंती है कि अठारह संख्या के बदले बावन संख्या ठीक है और एक ही पद न हो कर भिन्न बावन पद कहे गए थे। यही संग्रह पीछे से शिवा बावनी कहलाया। अठारह बार पढ़ा जाने वाला छंद शिवराजभूषण का ५६ वाँ पद है।

इस दंतकथा से यह भी आभास मिलता है कि भूषण दो बार दक्षिण गए थे। पहिली बार शिवाजी से भेंट हुई थी और 'इन्द्र जिमि जंभ पर' वाला कवित्त अठारह बार सुना कर उनके दरबार के राजकवि हुए थे। और दूसरी बार साहू जी के समय में गए तथा उनको उनके पितामह की कीर्ति के बावन पद सुनाए थे।

३—आश्रयदाता गण

शिवराज भूषण के पद २५-३० से यह ज्ञात होता है कि भूषण जी को "भूषण" उपाधि देने वाले चित्रकूटपति 'हृदयराम सुत रुद्र' तथा शिवाजी दो ही वास्तव में इनके आश्रयदाता थे। इनमें भी द्वितीय ही प्रधान हैं। यह भूषण जी ने स्वयं स्वीकार किया है। इन दो के सिवा भूषण जी ने प्रायः एक दर्जन तत्कालीन राजाओं के विषय में प्रशंसात्मक रचनाएँ की हैं जिनमें किसी के लिए एक ही कवित्त तथा किसी के लिए दो तीन तक कह डाला है। केवल एक पन्नानरेश छत्रसाल के लिए इन्होंने दशक बनाने का परिश्रम उठाया है। नीचे एक तालिका दी जाती है जिससे ज्ञात हो जायगा किसके लिए कितने और कौन

छन्द कहे गए हैं। इसमें सोलंकी भी आ जाते हैं क्योंकि इनके सम्बन्ध में भी भूषण ने विशेष कुछ नहीं कहा है।

संख्या	नाम	पदसंख्या	ग्रन्थावली की छन्द सं०
१	चित्रकूटपति 'हृदयराम सुत रुद्र' सुलंकी	२	२८, ३१ स्फु०
२	छत्रसाल बुन्देला	१३	दशक २६ स्फु०
३	शम्भाजी	१	२८ स्फु०
४	साहूजी	२	२९, ३० स्फु०
५	राव बुद्ध सिंह	२	३३, ३९ स्फु०
६	अवधूत सिंह	१	३४ स्फु०
७	कमायूँ नरेश	१	३६ स्फु०
८	मिर्जाराजा जयसिंह	२	४०, ४२ स्फु०
९	महाराज रामसिंह	१	४० स्फु०
१०	अनिरुद्धसिंह पौरच	१	४३ स्फु०
११	बाजीराव	१	५८ स्फु०
१२	दाराशाह	३	४१,३७,३८ स्फु०
१३	औरंगजेब	२	३७, ३८ स्फु०
१४	छत्रसाल हाड़ा	२	१-२ छत्र द०

भूषण जी के ५०६ पद इस ग्रन्थावली में संगृहीत हैं। शिवराज भूषण तथा शिवाबावनी में केवल शिवाजी ही की प्रशंसा है। छत्रसाल दशक में केवल पन्नानरेश छत्रसाल की प्रशंसा है। हाँ

उसी नाम के संबंध से बूँदीनरेश छत्रसाल हाड़ा का भी प्रथम दो दोहों में उल्लेख है। अब केवल साठ स्फुट पद बचे। इनमें भी बत्तीस पद शिवाजी ही की प्रशंसा में हैं, बारह शृङ्गार रस के हैं और बचे हुए १६ पदों में भूषण के अन्य सब आश्रयदातागण, यदि वे इस नाम से पुकारे जा सकते हैं, निपटा दिये गये हैं।

ऊपर तालिका में जो चौदह नाम आये हैं उनमें एक नाम 'औरंगजेब' इस लिये नहीं रखा गया है कि भूषण ने उसकी सुप्रशंसा की है प्रत्युत उसकी कुप्रशंसा (निन्दा) के लिये रखना आवश्यक हुआ। अब पहिले शिवा जी, उनके पुत्र और पौत्र तथा छत्रसाल बुंदेला की जीवनी देकर उसके बाद छत्रसाल हाड़ा आदि अन्य आश्रयदाताओं पर विचार किया जायगा। इन सज्जनों के संक्षिप्त परिचय परिशिष्ट में दिए गये हैं।

छत्रपति महाराज शिवाजी

(१६८४—१७३७)

मेवाड़ के सूर्यवंशावतंस सीसोदिया नरेशों के एक वंशज दक्षिण में आ बसे थे, जिनकी कई पीढ़ी बाद एक बाबा जी हुये जिनके मालोजी तथा बिठोजी दो पुत्र थे। मालो जी ने अहमदनगर के निजामशाह के एक जागीरदार लाखाजी जादवराव के यहाँ नौकरी कर ली। कुछ दिनों में यह उसी राज्य के स्वतंत्र जागीरदार हो गए और अपने पुत्र शाह जी का लाखा जी जादव की पुत्री जीजाबाई से सं० १६६१ वि० में विवाह किया। निजामशाह ने मालो जी को पाँच हजारी मंसब प्रदान कर पूना

और सूपा की जागीर चाकण तथा शिवनेरी दुर्गों के साथ दी। सं० १६७६ वि० में मालो जी की मृत्यु होने पर शाह जी भी अहमदनगर राज्य की सेवा करते रहे। इनके बहुत कुछ प्रयत्न करने पर भी सन् १६३७ ई० में उस राज्य का अंत हो गया और यह बीजापुर के सुलतान की सेवा में चले आये।

सं० १६८४ वि० में शिवनेरी दुर्ग में शिवाजी का जन्म हुआ था और प्रायः दश वर्ष तक यह अपनी माता के साथ कभी इस दुर्ग में कभी उस दुर्ग में प्राणरक्षा के लिये फिरते रहे। सं० १६६४ में बीजापुर से संधि हो जाने तथा शाहजहाँ के इनके पिता को क्षमा करने पर यह बीजापुर गए और वहाँ तीन वर्ष शांति से व्यतीत करते हुए उस मुसलमान दरबार के सब रहस्यों को जान गए। इसके अनंतर शाह जी कर्णाटक की चढ़ाई पर गये और अपने पुत्र को माता के साथ अपनी जागीर पूना में भेज दिया। दादा जी कोणदेव को शिवाजी की शिक्षा तथा जागीर के प्रबन्ध का भार सौंपा गया। इन्हें रामायण, महाभारत तथा पुराणों की कथा सुनने तथा अस्त्रविद्या सीखने का बहुत प्रेम था। यह बड़े उत्साह से आस पास के पर्वतों में घूमते तथा पहाड़ी मनुष्यों से मित्रता स्थापित करते थे। दादा जी ने अपने नाम के अनुसार ही राजोचित तथा वीरोचित इन्हें शिक्षा दी और यह कुछ ही दिनों में अस्त्रविद्या में निपुण हो गए।

सं० १७०३ वि में शिवाजी ने अपनी पहिली चोट तोरण दुर्ग पर की और उसपर अधिकार कर लिया। यहाँ इन्हें कुछ गड़ा हुआ धन मिल गया, जिससे उन्होंने मोरबंद पर्वत शृंग पर राजगढ़ दुर्ग बनवाया। बीजापुर दरबार ने शिवाजी के इस कार्य की सूचना शाह जी को भेजकर उन्हें शिवाजी को ऐसे कार्य से रोकने के लिए लिखा। शाह जी ने दादा को लिखा, पर वह

जराग्रस्त होकर सं० १७०४ में मृत्यु-मुख में चले गए। इसके अनंतर शिवाजी ने जागीर का कुल प्रबन्ध अपने हाथ में लेकर कोंढाना तथा पुरंधर दुर्गों पर भी अधिकार कर लिया। इस प्रकार इस वर्ष के अंत तक पूना प्रान्त पर इनका पूर्ण अधिकार हो गया। इसके अनंतर शिवाजी ने उत्तरी कोंकण पर चढ़ाई की और वहाँ के बीजापुरी प्रांताध्यक्ष मौलाना अहमद के कल्याण में आबाजी सोनदेव द्वारा पकड़े जाने पर उनका उस प्रान्त पर दक्षिण में सावंत बाड़ी तक अधिकार हो गया। इस प्रान्त में नौ बड़े दुर्ग थे। जिनमें लोहगढ़, राजमाची तथा रैरी प्रसिद्ध हैं। आबा जी सोनदेव ने मौलाना अहमद की पुत्रवधू को, जो अत्यन्त सुन्दरी थी, शिवाजी के लिए भेजा था; पर मराठा राज्य के संस्थापक युवक वीर ने उस युवती को देखकर मुसकरा कर केवल इतना ही कहा कि यदि माता जी इसकी आधी भी सुन्दरी होती तो मैं ऐसा कुरूप न होता। यह कहकर उसे शिवाजी ने मौलाना के पास भेज दिया।

बीजापुर दरबार ने यह शंका कर कि शाह जी ही के संकेत पर शिवाजी ने इस प्रकार विद्रोह मचा रखा है और शाह जी स्वयं कर्णाटक में राज्य स्थापित करना चाहते हैं षड्यंत्र कर मुधोल के बाजी घोरपदे की सहायता से उन्हें पकड़ लिया। चार वर्ष तक शाह जी कारागार में रहे। राजनीतिकुशल शिवाजी ने इसके उत्तर में मुगल सम्राट् से संधि प्रस्ताव आरम्भ किया, जिससे बीजापुर दरबार डर गया, क्योंकि यदि विजित प्रान्त को शिवाजी मुगलों को दे देते तो वे बीजापुर राजधानी के बहुत पास पहुँच जाते। इधर कर्णाटक में भी गड़बड़ मचा हुआ था, इसलिए अंत में शाह जी सं० १७१० में छूट गए और कर्णाटक भेजे गए।

उत्तरी कोंकण के दक्षिण में जावली प्रान्त था, जिसका राजा

कृष्णा जी बाजी चंद्रराव मोरे था। इसने सं० १७०९ वि० में बीजापुर के बाजी श्यामराजे को शिवाजी को धोखे से पकड़ने के निष्फल प्रयत्न में सहायता दी थी। उसका राज्य भी शिवाजी के राज्यविस्तार में बाधक हो रहा था, इसलिए इन्होंने उसे मिलाने का बहुत प्रयत्न किया पर असफल रहे। तब सं० १७१२ वि० में इनके दो अफसर रघूबल्लाल तथा शंभा जी काव जी ने षड्यन्त्र रच कर चन्द्रराव मोरे को मार डाला और शिवाजी की छिपी हुई सेना ने अवसर पर पहुँचकर जावली पर अधिकार कर लिया। शृंगारपुर तथा सावंतबाड़ी के सर्दारों ने भी शिवाजी की अधीनता स्वीकार कर ली।

बीजापुर दरबार इस बीच मुगलों के चक्र में पड़ा हुआ था, इस लिए वह शिवाजी को दमन करने का प्रयत्न नहीं कर सका था। सं० १७०७ वि० में औरंगजेब दक्षिण का सूबेदार होकर आया। सं० १७१२ वि० में इसने गोलकुण्डा पर चढ़ाई कर उसे अपने अधीन कर लिया। इसके दूसरे वर्ष बीजापुर का सुलतान मुहम्मद आदिल शाह मर गया और उसका पुत्र अली उन्नीस वर्ष की अवस्था में गद्दी पर बैठा। औरंगजेब ने ऐसा अवसर चूकना नहीं सीखा था, इसलिए सं १७१३ वि० में उसने बीजापुर पर चढ़ाई कर दी। यह राज्य मरणप्राय हो चला था कि शाहजहाँ की रुग्णावस्था के समाचार ने उसके पुत्रों में साम्राज्य के लिए युद्ध छिड़वा दिया, जिसके फल स्वरूप तीन नष्ट हो गये और एक यही औरंगजेब बादशाह हुआ। बीजापुर बच गया और औरंगजेब ने झटपट संधि कर भाइयों से लड़ने के लिये दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। शिवाजी ने औरंगजेब के बीजापुर जाने पर जुनेर लूटा था तथा अहमदनगर तक गए थे, पर हार कर लौट आए थे। बीजापुर से संधि हो जाने पर शिवाजी ने भी औरंगजेब के पास क्षमा याचना का पत्र भेज दिया।

सं० १७१६ वि० में बीजापुर में खवास खाँ प्रधान मंत्री हुआ और उसने अफज़ल खाँ को फ़ारसी तवारीखों के अनुसार दस सहस्र सवार तथा भूषण के अनुसार बारह सहस्र सवार देकर शिवाजी को दमन करने के लिए भेजा। यह प्रसिद्ध सेनापति तथा भारी डीलडौल का मनुष्य था। मार्ग में इसने तुलजापुर की अंबा भवानी का मंदिर भ्रष्ट कर डाला। शिवाजी इस चढ़ाई का वृत्तांत सुनकर राजगढ़ से प्रतापगढ़ चले आए, जिस समाचार को सुनकर अफजल भी माणिकेश्वर, पंढरपुर आदि स्थान अपवित्र करता हुआ वहीं पहुँचा। यहाँ से इसने शिवाजी को फँसाने के लिए कृष्णा जी भास्कर को भेजा। शिवाजी भी ऐसे प्रसिद्ध सेनापति के साथ युद्धक्षेत्र में लड़कर अपने नए राज्य को विषम समस्या में डालना नीतिविरुद्ध समझ रहे थे और किसी प्रकार उस पर सहज ही में विजय प्राप्त करना चाहते थे। अफजल ही की नीति ने उनकी सहायता की और दोनों ही ने एकांत में मिलने का षड्-यन्त्र रचा। दोनों ही एक दूसरे को उसी एकांतस्थल में समाप्त करने के विचार में लगे थे। अंत में प्रतापगढ़ के नीचे एक मील हट कर पार गाँव में अफजल खाँ आ टिका और दूसरे दिन इन दोनों स्थान के बीच में पहाड़ पर एक खेमे में दोनों सेनानियों की भेंट हुई। मिलते ही समय अफजल खाँ ने छोटे डील वाले शिवाजी को बाँए हाथ से खूब कस कर दाब लिया और दाहिने हाथ से छूरा खींचकर उन पर चोट की। शिवाजी कवच पहिने हुए थे, जिससे उनकी प्राणरक्षा हुई पर अफजल खाँ शिवाजी के बघनखे तथा बिछुए की चोट से न बच सका। इस प्रकार अफज़ल खाँ को मारकर शिवाजी ने दुर्ग में पहुँचते ही तोप छुड़वा दी, जिसे सुनते ही छिपी हुई मराठी सेना मुसलमानों पर टूट पड़ी और लगभग तीन सहस्र सैनिक मारे गए। उस सेना का पूरा सामान शिवाजी के हाथ आया।

शिवाजी इस विजय से ही संतुष्ट न होकर कुछ सेना राज्य के रक्षार्थ छोड़कर अधिकांश सेना के साथ दक्षिण को चले और कोल्हापुर जिले के पन्हाला, विशालगढ़ रंगाना, पवनगढ़ आदि कई दुर्ग विजय कर लिए। ये सब मेराज के फौजदार रुस्तमजमाँ की जागीर में थे जो परास्त होकर भाग गया। शिवाजी सेना सहित लूट मार करते बीजापुर तक पहुँचे और वहाँ से लौट पड़े। बीजापुर दरबार ने एक भारी सेना सीदी जौहर की अधीनता में भेजी, जिसके साथ अफजल का पुत्र फज्लमुहम्मद भी था। इस सेना ने शिवाजी को पन्हाला दुर्ग में घेर लिया। कई महीनों के घेरे के अनंतर दुर्ग टूटने को हुआ तब शिवाजी ने संधि का प्रस्ताव किया और जब शत्रु को असतर्क पाया उस समय उस दुर्ग से निकल कर दूसरे दुर्ग रंगाना होते हुए प्रतापगढ़ चले गए। इसी कार्य में जब शत्रु ने जानने पर शिवाजी का पीछा किया तब बाजीप्रभु देशपांडे ने पंढरपानि दर्रे में दो प्रहर तक शत्रु के सब आक्रमणों को निरर्थक करते हुए उन्हें रोका और अंत में अपने प्राण विसर्जन कर स्वामी को दुर्ग में सुरक्षित पहुँच जाने का अवसर दिया था।

सं० १७१८ वि० में बीजापुर की सेना बाड़ी के सावंत तथा मुधोल के घोरपदे की सहायता से शिवाजी पर आक्रमण करने की तैयारी कर रही थी कि इन्होंने एकाएक मुधोल पर धावा कर उसे लूटकर तथा आग लगाकर कर नष्ट दिया। इसके बाद सावंतवाड़ी पर भी अधिकार कर लिया। तब अंत में बीजापुर के दरबार ने शाह को मध्यस्थ बनाकर शिवाजी से संधि कर ली। इसी समय शाह जी अपने प्रतापी पुत्र से मिलने आये थे, जिसने उनका पुत्रवत् बहुत कुछ आदर सत्कार किया।

इसके दो वर्ष बाद सं० १७२१ वि० में घोड़े से गिर पड़ने के कारण शाह जी की मृत्यु हो गई। इसी के आस पास शिवाजी ने अपनी राजधानी राजगढ़ से रायगढ़ में बदल दी। इस दुर्ग को स्वयं शिवाजी ने बनवाया था, जिसका प्रधान कोट सं० १७२१ तक तैयार हो गया था।

इस प्रकार बीजापुर की ओर से निश्चिंत होकर शिवाजी ने मुगल साम्राज्य में लूट मार आरंभ की। सं० १७१९ वि० में नाथा जी पालकर ने औरंगाबाद तक धावा मारा और बहुत सी लूट रायगढ़ में लाकर जमा कर दी। जो मुगल सेना उस समय औरंगाबाद में थी, वह मराठों का सामना नहीं कर सकी। औरंगजेब ने अपने मामा शायस्ता खाँ अमीरुल्उमरा को दक्षिण का सूबेदार नियुक्त कर महाराज यशवंत सिंह के साथ शिवाजी को दमन करने के लिए भेजा। सं० १७२० वि० में यह औरंगाबाद से भारी सेना लेकर, भूषण तथा मानकर की हस्तलिखित प्रति के अनुसार एक लाख सवार के साथ, पूना की ओर चला। मार्ग में मराठे सवार चारों ओर सामान आदि लूटते जाते थे। अंत में वर्षा व्यतीत करने को पूना में पड़ाव डाला गया और शिवाजी सिंहगढ़ में चले गए। मुगलों ने चाकण दुर्ग घेरा जिसे वे तीन मास के घेरे के अनंतर संधि करके ले सके। पूना में ऐसा कड़ा प्रबंध था कि कोई अनजान आदमी बिना आज्ञा लिए हुए आ जा नहीं सकता था। इसी समय शायस्ता खाँ ने शिवाजी को एक श्लोकार्ध लिख भेजा था कि 'तुम बंदर की तरह पर्वत में क्या छिपे बैठे हो'। शिवाजी ने उत्तर भेजा कि हाँ, पर याद रहे कि बंदरों ही ने रावण तथा उसकी सेना को नष्ट किया।' इसीके अनंतर शिवाजी ने ऐसा उपाय निकाला कि एक रात्रि वह चुने हुए मावलों

सैनिकों* के साथ पूना के भीतर वहाँ पहुँच गए जहाँ शायस्ता खाँ सोया हुआ था और उस शोरगुल में शायस्ता खाँ का एक लड़का तथा बहुत से अन्य आदमी मारे गये। शायस्ता खाँ तीन उँगलियाँ कटाकर खिड़की से कूदकर भागा।† उसी गड़बड़ी में शिवाजी भी अपने सैनिकों के साथ निकल गये और कुशलपूर्वक सिंहगढ़ पहुँच गए। शायस्ता खाँ बुला लिया गया और उसके स्थान पर शाहजादा मुअज्जम सूबेदार होकर आया।

जिस समय प्रांताध्यक्षों का अदल बदल हो रहा था, उसी बीच सं० १७२१ वि० में शिवाजी ने पहली बार सूरत लूटा। इसी वर्ष महाराज जसवंत सिंह ने कोंदाना अर्थात् सिंहगढ़ घेरा, पर उसे नहीं ले सके। भाऊसिंह हाड़ा भी इनके साथ थे और इसी घटना का भूषण ने 'जाहिर है जग में जसवन्त लियो गढ़ सिंह में गीदड़ बानो' में उल्लेख किया है। औरंगजेब शायस्ता खाँ की दुर्दशा तथा सूरत की लूट का वृत्तांत सुनकर अपने योग्यतम सेनापति महाराज जयसिंह को अन्य प्रसिद्ध सरदारों दिलेर खाँ, दाऊद खाँ कुरेशी, रायसिंह सिसोदिया, सुजानसिंह बुँदेला, मुल्ला यहिया आदि के साथ भेजा। सं० १७२२ वि० के आरम्भ में इन्होंने दक्षिण के सूबेदार शाहजादा मुअज्जम से भेंट

---

* भूषण लिखते हैं—तो सो को शिवाजी जेहि दो सौ आदमी सों जीत्यो जंग सरदार सौ हजार असवार को। सरकार कृत 'शिवाजी' में भी दो सौ सिपाही लेकर ही शिवाजी का उस महल में जाना लिखा है, जिसमें शायस्ता खाँ रहता था। (पृ० ६४)

† भूषण कहते हैं—सायस्ता खाँ दक्खिन को प्रथम पठायो तेहि बेटा के समेत हाथ जायिके गँवायो है।

कर महाराज जसवंत सिंह से सेनापतित्व का भार ले लिया, जो बादशाही आज्ञानुसार दिल्ली चले गये। जयसिंह बड़े ही राजनीति-कुशल पुरुष थे। इन्होंने शिवाजी के सभी शत्रुओं को उनके विरुद्ध उभाड़ा। यह बड़ी सतर्कता से मार्ग खुला रखने के लिये थाने बनाते हुए पूना पहुँचे और वहाँ कुछ सेना छोड़ कर आगे बढ़े। पुरंधर घेरा गया और ढाई महीने के घेरे पर जब अंत में शिवाजी ने यह देखा कि यह दुर्ग अब टूटा चाहता है तथा वे जयसिंह का सामना करने में समर्थ नहीं हैं तब संधि कर ली। इस संधि की एक शर्त यह भी थी कि शिवाजी अपने पैंतीस, भूषण के पंचतीस, दुर्गों में से तेईस दुर्ग मुग़ल सम्राट् को सौंप दें और बारह अपने लिये रखें। दूसरी शर्त के अनुसार शिवाजी ने बीजापुर के विरुद्ध मुगलों की सहायता करना स्वीकार किया। इन शर्तों से ज्ञात होता है कि जयसिंह ने शिवाजी पर तीन ही महीने में ऐसी विजय प्राप्त कर ली थी कि उन्होंने अपने राज्य का आधे से कहीं अधिक भाग देकर भी संधि करना उचित समझा।

इनके अनंतर महाराज जयसिंह शिवाजी को साथ लेकर बीजापुर गए। कई विजय प्राप्त करने पर भी सर्दारों के वैमनस्य से यह सफल प्रयत्न न हो सके और बीजापुर पहुँच कर लौट आए। इसी बीच इन्होंने शिवाजी को दिल्ली जाकर बादशाह से भेंट करने के लिए भेजा। यह भी बादशाह से स्वयं मिलकर अपने लिये अच्छी शर्तें करने के विचार से दिल्ली जाने के उत्सुक थे, पर उसमें यह असफल रहे। औरंगजेब इनके नाम से चिढ़ता था और जान बूझ कर इनका अनादर करने के लिए पहले साधारण सर्दारों को अगवानी के लिए भेजा तथा दरबार में आने पर पाँच हजारी मंसबदारों के बीच में इन्हें स्थान दिया। उसीने इसके पहिले इनके पुत्र तथा इनके सेवक नाथा जी पालकर को पाँच

हजारी मंसब दिया था। शिवाजी ने मुसलमानी रीत्यनुसार जमीन तक झुककर फर्शी सलाम तक न किया और अपने अनादर को स्पष्टतः दरबार ही में कुमार रामसिंह पर प्रकट कर दिया। औरंगजेब ने क्रुद्ध होकर इनके डेरे पर पहरा बैठा दिया, जिससे वे भाग न सकें। इन्होंने दक्षिण लौट जाने की आज्ञा माँगी; पर उस पर यही हुक्म हुआ कि अपने सैनिकों को वे बिदा कर दें पर स्वयं अपने पुत्र सहित कुछ दिन और ठहरें। शिवाजी ने आज्ञा पाते ही अपने रक्षक सैनिकों को बिदा कर दिया और अपने निकल भागने का उपाय करने लगे। कुँअर रामसिंह अपने पिता के वचन की रक्षा करने के लिए इस कार्य में सहायक हुए। शिवाजी के बीमार होने का समाचार सब को सुनाया जाने लगा तथा मिठाई के बड़े बड़े खाँचे अमीरों, राजाओं तथा मस्जिदों में गरीबों को बाँटने को भेजे जाने लगे। यह कार्य कई दिन चलता रहा जिससे पहरेदार लोग अब बिना देखे ही टोकरों को बाहर जाने देने लगे। एक दिन ये दोनों पिता पुत्र दो टोकरों में बैठकर बाहर निकल गये। इनके स्थान पर इनका एक सेवक हीरा जी फर्जंद दुशाला ओढ़कर सोया हुआ था, जिसे देखकर पहरेदार समझ जाते थे कि दक्षिण-राज सोये हुए हैं; पर वे मथुरा की ओर मारामार चले जा रहे थे। यहाँ ताना जी मालूसरे मिले और मथुरा में साधू का छद्मवेश धारण कर शिवाजी प्रयाग होते काशी पहुँचे। प्रयाग ही में शंभा जी को एक ब्राह्मण के यहाँ छोड़ दिया था। काशी से यह सकुशल दक्षिण पहुँच गए। औरंगजेब ने बहुत कुछ इन्हें पकड़ने का प्रबन्ध किया पर असफल रहा।

दक्षिण लौटने पर शिवाजी तीन वष से अधिक समय तक शांतिपूर्वक अपने राज्य का दृढ़ प्रबन्ध करने में लगे रहे और

इसके बाद सं० १७२७ वि० में इन्होंने फिर शस्त्र उठाया। सर्व-प्रथम सिंहगढ़ लेना ही इनका ध्येय था क्योंकि मुगलों से संधि करने से पूना के आस-पास इनका जो राज्य बचा था उस पर इस दुर्ग तथा पुरंधर दुर्ग के मुगलों के हाथ में होने से बादशाही प्रभाव अधिक था। माघ कृष्ण नवमी को ताना जी मालूसरे अपने भाई सूर्या जी राव तथा एक सहस्र मावली सैनिक लेकर सिंहगढ़ लेने चले, जिसका दुर्गाध्यक्ष उदयभानु राठौर शारीरिक शक्ति तथा साहस के लिए प्रसिद्ध था दुर्ग में भी एक सहस्र मुसलमान तथा राजपूत सेना मौजूद थी ताना जी मालूसरे तथा तीन सौ सैनिक रस्सियों द्वारा चुपचाप दुर्ग पर चढ़ पाए थे कि एक संतरी को कुछ आहट लग गई। वह उसी समय तीर से मारा गया, पर दुर्ग के सैनिकों को आवाज होने से पता लग गया और वे झुण्ड के झुण्ड मशालें बालकर उसी ओर आने लगे। ताना जी ने भी अवसर देख कर धावा बोल दिया। मावले भी 'हर हर महादेव' से दिशाओं को कंपायमान करते हुए शत्रु पर टूट पड़े। युद्ध ही के बीच दोनों पक्ष के प्रसिद्ध सरदारों में सामना हो गया और दोनों में द्वन्द्व युद्ध होने लगा जिसमें ताना जी मारे गये। सर्दार के गिरते ही मावले हतोत्साह होकर हटने लगे कि सूर्या जी बची हुई सेना के साथ युद्धस्थल पर आ पहुँचे। यह अपनी सेना को ललकार कर उदयभान पर टूट पड़े और पहिले ही वार में उसे ले बीते। बहुत ही कड़े युद्ध पर दुर्ग विजय हुआ। दुर्ग की आधी सेना मारी गई और पाँच सौ राजपूत ऐसी अवस्था में पकड़े गये जो घावों के कारण हिल तक नहीं सकते थे। शिवाजी ने अपने सब सैनिकों को पुरस्कृत किया था। इसके अनन्तर एक एक करके शिवाजी ने मुगलों को दिये हुए प्रायः सभी दुर्गों पर अधिकार कर लिया। इसी वर्ष सूरत दूसरी बार लूटा गया और सादियों पर भी एक विजय प्राप्त की गई। शिवाजी लूट

लेकर मुल्हेर के आगे बढ़े थे कि दाऊद खाँ कुरेशी ने वानी डिंडोरी के पास इनका रास्ता रोका, जहाँ प्रतापराव गूजर की अधीनता में मराठी सेना के एक भाग ने इससे युद्ध कर इसे परास्त किया और शिवाजी को रायगढ़ लूट ले जाने का अवसर दिया।

इसके अनंतर सं १७२८ वि० के आरम्भ में शिवाजी ने बरार बगलाना की ओर दो सेनाएँ भेजकर कई स्थानों को लूटा। बरार का सूबेदार खानजमा देवगढ़ तक आकर वहीं रुक रहा। दोनों मराठी सेनाएँ प्रतापराव गूजर तथा मोरो त्र्यम्बक पिंजले की अधीनता में सल्हेरि में मिलीं और उसे घेर लिया। दाउद खाँ दुर्ग की सहायता को आ रहा था, पर इसके पहिले ही दुर्ग पर मराठों का अधिकार हो गया। इस बीच मुगल सेनानियों की अदला-बदली जारी थी। पहिले महाबत खाँ को अमरसिंह आदि कई सर्दारों के साथ भेजा, पर जब वह कुछ न कर सका तब उसके स्थान पर बहादुर खाँ तथा दिलेर खाँ भेजे गए। सं० १७२६ वि० में ये दोनों इखलास खाँ मियाना, अमरसिंह चंद्रावत आदि कई सर्दारों को सेना सहित सल्हेरि लेने को भेज कर अहमदनगर होते पूना तथा सूपा गए और उन दोनों स्थानों पर अधिकार कर लिया। इसी समय शिवाजी सल्हेरि की रक्षा के लिए ससैन्य आ पहुँचे। मुगल सेना से घोर युद्ध हुआ जिसमें इखलास खाँ और मुहकम सिंह पकड़े गए तथा अमरसिंह कई सरदारों और कई सहस्र सैनिकों के साथ मारा गया। इसके अनन्तर मुल्हेर विजय कर शिवाजी कोंकण लौट गए। महाबत खाँ तथा शाहजादा मुअज्जम राजधानी लौट गए और बहादुर खाँ सेनापति तथा सूबेदार नियत हुआ।

इसी वर्ष मराठी सेना ने जवारि के कोली राजा विक्रम-

साह् को परास्त कर उस राज्य पर अधिकार कर लिया। इसके बाद रामनगर के कोली राज्य पर भी अधिकार हो गया। इसके अनन्तर शिवाजी ने एक सेना तेलिंगाना भेजी, जिसने रामगिरि स्थान को तथा बीच की कई जगहों का लूट लिया। बहादुर खाँ तथा दिलेर खाँ ने सेना के दोनों भगों का पीछा किया जो शत्रु को देख कर दो टुकड़ों में बँट गई थी और एक भाग उत्तर चाँदा होते बरार गया और दूसरा गोलकुण्डा राज्य में होकर दक्षिण चला गया। मुगलों के विशेष सतकता दिखलाने से शिवाजी ने कनारा तथा दक्षिणी महाराष्ट्र की ओर सेना फरी और सं० १७३० के आरम्भ में पन्हाला तथा सितारा दुर्ग ले लिये। इसके अनन्तर पचीस सहस्र मराठी सेना ने बाजापुर के पश्चिमी भाग में खूब लूट मचाई। बहलोल खाँ ने बंकापुर में तथा सरजा खाँ ने चाँदगढ़ में मराठी सेना की दो टुकड़ियों को परास्त किया; परन्तु प्रताप राव गूजर ने उमरानी के पास उसे ऐसा परास्त किया कि उसने शिवाजी के विरुद्ध न लड़ने की प्रतिज्ञा तक कर ली। इस प्रतिज्ञा के भरोसे प्रताप राव के लौट आने पर शिवाजी ने उसे कई खरी बातें कहीं, जिससे उस वीर को अत्यन्त मानसिक कष्ट हुआ ही था कि बहलोल अपना वचन तोड़कर फिर नई सेना लेकर आ पहुँचा। प्रतापराव ने रणनीति को छप्पर पर डाल कर एकदम बहलोल पर धावा कर दिया और यह भी न देखा कि उसके साथ केवल आधे दजन ही सवार आ रहे हैं। वह वार मारा गया और मराठा सेना सहकारी सेनापति आनंदराव के उत्साहित करने से लड़ता भिड़ता लौट आई।

हंबीरराव हंसा जो मोहिते ने बहलोल की जागीर लूट ली और उसे परास्त कर भगा दिया। इसी वष शिवाजी ने दिलेर-खाँ को भी परास्त किया, जिसमें उसके एक सहस्र पठान मारे

गए। खैबर के अफगानों तथा सतनामियों के विद्रोह हो जाने से औरंगजेब हसन अब्दाल चला गया और दक्षिण की चढ़ाइयों पर वह विशेष ध्यान न दे सका। शिवाजी ने भी यह अवसर उत्तम समझकर अपने राज्याभिषेक का प्रबन्ध किया। इस उत्सव के विषय में संक्षेपतः यहाँ इतना ही लिखना बहुत है कि काशी के सुप्रसिद्ध विद्वान गागा भट्ट के आचार्यत्व में ज्येष्ठ शुक्ल १३ सं० ७३१ वि० सं० १५९६ शाके (६ जून सन् १६७४) को शिवाजी का राज्याभिषेक कुशलपूर्वक बड़े समारोह के साथ समाप्त हो गया

शिवाजी ने राज्याभिषेक रूपी यज्ञ की पूर्णाहुति के लिये मुगल सूबेदार बहादुर खाँ के कोष ही को लूटना निश्चय किया और इसलिये दो सहस्र सेना इस प्रकार भेजी कि जब बहादुर खाँ उसका पीछा करते हुए दूर निकल गया तब शिवाजी सात सहस्र सवारों के साथ उसके पड़ाव पर आ गिरे और एक करोड़ रुपये से अधिक का माल लूट ले गए। इसके अनंतर औरंगाबाद के आस पास के कुछ नगरों को लूटते हुए खान देश और बगलाना गए सं० १७३३ वि० में बहादुर खाँ ने बीजापुर पर चढ़ाई कर दी, जिससे घबड़ा कर वहाँ के तत्कालीन प्रधान अमात्य बहलोल खाँ ने शिवाजी से संधि कर ली।

अब शिवाजी ने कर्णाटक पर चढ़ाई करने का प्रबन्ध किया। मुगल प्रान्ताध्यक्ष बहादुर खाँ ने बीजापुर पर चढ़ाई करने के विचार से शिवाजी से संधि कर ली थी। बीजापुर राज्य में बड़ी अशांति थी। अफगान सर्दार बहलोल खाँ ११ नवं० सन् १६७५ ई० (सं० १७३२) को बालक सिकंदर शाह को अपने अधिकार में कर अभिभावक बन गया और खवास खाँ को दो मास बाद मरवा डाला। दक्षिणी मुसलमानों के सर्दारगण बिगड़ गए

और दोनों पक्ष वाले लड़ने लगे। इस प्रकार यह राज्य शिवाजी के इस कार्य में रुकावट डालने योग्य नहीं रह गया था। गोलकुण्डा के प्रधान मंत्री मदन पंडित की मध्यस्थता में उस राज्य से संधि हो गई। इसके अनंतर सत्तर सहस्र सैनिक लेकर शिवाजी ने यात्रा आरम्भ की और सं० १७३४ वि० में हैदराबाद पहुँचे जहाँ अब्दुल हसन कुतबशाह ने इनका अच्छा सत्कार किया। यहाँ से यह कर्णाटक गए। जिंजी तथा उसके आस-पास के स्थान सुगमता पूर्वक अधिकृत हो गये, पर त्रिनोमाला के अध्यक्ष शेरखाँ लोदी ने अच्छी लड़ाई की। उसका एक दुर्ग वेलोर चौदह महीने के घेरे पर टूटा। शेर खाँ परास्त होकर कुछ सवारों के साथ बावनीगिरि भाग गया था जो तिरुवाड़ी से २२ मील दक्षिण वेलार नदी पर है। शिवाजी पीछा करते वहाँ पहुँचे। मधुरेश्वर से छ लाख हून लेकर अपने वैमात्रिक भाई व्यंकाजी से मिलने त्रिपतूर गए कोल-रून के दक्षिण का भाग व्यंकोजी के लिये छोड़कर उसके उत्तर सब भाग पर मराठों का अधिकार हो गया। इसके बाद कुछ तीर्थस्थानों की यात्रा करते हुए सं० १७३५ में शिवाजी पन्हाला पहुँच गये। इस चढ़ाई में विजय किए गए प्रान्त की वार्षिक आय बीस लाख थी और उसमें एक सौ दुर्ग थे।

औरंगजेब ने बहादुरखाँ के स्थान पर दिलेर खाँ को सेनापति नियुक्त किया, जिसने बीजापुर घेर लिया। बीजापुर के प्रधान अमात्य सीदी मसऊद ने शिवाजी से सहायता माँगी। इसी बीच शिवाजी के सुपुत्र शंभू जी, जो एक युवती से बलात्कार करने के कारण पन्हाला दुर्ग में कैद थे, भागकर दिलेर खाँ के पास चले गये। सं० १७३६ वि० में शिवाजी ने जजिया के विरुद्ध औरंगजेब को एक पत्र लिखा था, जो शिवाजी से वीर के ही योग्य था। शिवाजी ने बीजापुर की सहायता के लिए कुछ सेना तथा बहुत सा सामान

वहाँ भेजा और दो सेनाएँ मुगल राज्य में लूट मार करने को भेजीं। अंत में दिलेर खाँ बीजापुर न ले सकने पर लौटा और पशुओं की तरह बीजापुर तथा शिवाजी के राज्य के ग्रामों को नष्ट करता तथा ग्रामवासियों को मारता हुआ आथनो पहुँचा, जहाँ उसने बहुत से हिंदू कैदियों को बेंच डाला इसी बीच शंभू जी दिलेर खाँ के कैंप से भागकर फिर अपने पिता के पास पहुँच गए।

सं० १७३६ वि० में शिवाजी की सेना की कई टुकड़ियाँ मुगल सेना से पराजित हो चुकी थीं और दिलेर खाँ पन्हाला दुर्ग लेने के प्रयत्न में लगा था, इसलिए इन्होंने पन्हाला दुर्ग को अजेय करने के लिए बहुत सी तोपें तथा सामान भेजकर उसे पूरी तरह सज्जित कर दिया। इसके उपरांत लगभग तीस सहस्र सेना लेकर राजापुर लूटते बुर्हानपुर गए। वहाँ से पश्चिमी खानदेश होते हुए बालाघाट में जालना तक लूटा। यहाँ से लौटते समय मुगल सेना ने, जो शाहजादा मुअज्जम के साथ आई थी, इनका पीछा किया और वह लड़ते भिड़ते पन्हाला दुर्ग लौट गए।

यहीं चैत शुक्ल १५ सं० १७३७ वि० (५ अप्रैल सन् १६८० ई०) रविवार को दोपहर के समय शिवाजी वीरलोक को सिधारे।

शंभा जी

(१७१४—१७४६)

इनके सम्बन्ध में भूषण ने केवल एक छंद कहा है, जिसका भाव इतना ही है कि दिल्ली के मुसलमान सर्दारगण अनेक पक्षियों के समान हैं और शम्भा जी सितारे में बैठे हुए उनका शिकार खेलते थे। सं० १७१४ वि० में शम्भा जी का जन्म हुआ था और यह सं० १७३७

वि० में २३ वर्ष की अवस्था में गद्दी पर बैठे। इनकी राजगद्दी घरेलू षड्यंत्र के कारण माघ शुक्ल १० शक १६०२ को हुई थी। इस उत्सव के अनंतर शम्भा जी ने बड़ी वीरता से दक्षिण के सूबेदार खानजहाँ बहादुर खाँ कोका के रहते हुए खानदेश की राजधानी बुर्हानपुर को लूट लिया। इस समाचार से औरंगजेब ने बहुत क्रुद्ध होकर स्वयं दक्षिण की यात्रा करने का निश्चय किया। इसी समय एक ऐसा और कारण भी उत्पन्न हो गया, जिससे उसे दक्षिण जाना ही पड़ा। मारवाड़नरेश यशवंतसिंह की मृत्यु हो जाने पर औरंगजेब ने उस राज्य को खालसा करने का प्रयत्न किया, पर असफल रहा। सिसोदियों तथा राठोरों ने कुछ दिन के लिए फूट देवी पर अश्रद्धा दिखलाई और मिलकर मुगलों तथा अपने स्वजातीय शत्रुओं का ऐसा सामना किया कि उनका राज्य बच गया, नहीं तो आज स्यात् राजस्थान राजस्थान न रह जाता। इसी युद्ध में औरंगजेब के एक पुत्र अकबर को राजपूतों ने पिता के विरुद्ध उभाड़ा पर कुछ फल न निकला। अंत में अकबर वहाँ से भागकर सं० १७३८ वि० में शम्भा जी की शरण में दक्षिण चला गया। औरंगजेब ने यह समाचार पाकर राजपूतों से संधि कर ली और सेनासहित दक्षिण की ओर प्रस्थान कर दिया, जहाँ से वह फिर न लौटा।

इधर पुर्तगीज मुगल बादशाह से संधि कर रहे थे, जो मराठा राज्य के लिए अत्यंत हानिकारक होता। इसलिए शम्भा जी ने गोआ पर अधिकार करने के लिए तैयारी की। सं० १७४०—१७४१ वि० में मराठों और पुर्तगीजों में कई लड़ाइयाँ हुईं और मराठों ने उनके कई स्थान ले लिए। गोआ पर भी शम्भा जी का अधिकार हो ही चुका था कि शाह आलम के अधीन मुगल सेना ने पहुँच कर उसमें बाधा डाल दी और मराठी सेना असफल लौट गई।

उसने भी मुगल सेना को इस प्रकार घेरा कि वह भी बहुत हानि उठाकर तथा दूसरी मुगल सेना और बेड़ा की सहायता लेकर अहमदनगर पहुँच सकी। इसके अनंतर शम्भा जी पर कवि कलश जो का प्रभुत्व बढ़ने लगा, जिसे घराऊ षड्यंत्र ने ऐसा करने का बार बार अवसर दिया था। इसके अनंतर मराठों तथा मुगलों में कई युद्ध हुए और कभी एक पक्ष तथा कभी दूसरा पक्ष विजय प्राप्त करता था। अन्त में औरङ्गजेब ने मराठों को छोड़कर बीजापुर तथा गोलकुन्डा को पहिले विजय करना निश्चय किया और अपनी पूर्ण शक्ति बीजापुर राज्य पर भेजी।

सं० १७४२ वि० में बीजापुर-मुगल युद्ध आरम्भ हुआ। इसी वर्ष शम्भा जी ने भड़ोच विजय किया। इन्होंने तथा गोलकुंडा के सुलतान ने भी बीजापुर को बराबर सहायता दी पर अंततः सं० १७४३ वि० में इस राज्य का अंत हो गया। इसका अंतिम सुलतान सिकंदर शाह बत्तीस वर्ष की अवस्था में सं० १७०० ई० में मर गया।

औरङ्गजेब ने इसके बाद पहिले शंभा जी से संधि कर ली, जो कवि कलश द्वारा प्रस्तुत किए गए मदिरा तथा मदिरेक्षिणियों के पाश में पूर्ण रूप से फँस चला था। बादशाह की दृष्टि अब गोलकुंडा की ओर फिरी और उसकी सुलतान अबूहसन से संधि रहने के कारण उससे आज्ञा लेकर गुलबर्गा के सैयद गेसू के मजार का दर्शन करने के लिए गया, पर वहाँ से सेना लेकर सीधे गोलकुंडा पर चढ़ दौड़ा। सं० १७४४ वि० में आठ महीने के घेरे पर धोखे से इस दुर्ग पर मुगलों का अधिकार हो गया और इस राज्य का भी अंत हो गया।

इस प्रकार इन दो मुसलमान राज्यों का अन्त कर औरंगजेब अब मराठों को दमन करने का प्रबंध करने लगा। मराठी सेना ने इस बीच दो राज्यों के बहुत से अंश पर अधिकार कर लिया था, जिससे बादशाह उन पर और भी क्रुद्ध था। सं० १७४४ वि० में इसने एक सेना कर्णाटक की ओर तथा दूसरी रामगढ़ घेरने को भेजी शेख निजाम हैदराबादी अपने पुत्र इखलास खाँ के साथ पन्हाला घेरने के लिए भेजा गया, पर मार्ग में उसे शम्भा जी के संगमेश्वर में रहने की सूचना मिली। यह बड़ी फुर्ती से इस ओर बढ़ा, जहाँ शम्भा जी बार बार चरों से सचेत किए जाने पर भी मदिरापानादि में इतने रत थे कि किसी का कुछ ध्यान न किया। अंत में २८ दिसंबर सन् १६८८ ई० को वह पकड़े गए और ढाई महीने बाद कलश आदि के साथ मारे गए।

यह भी अपने पिता के समान हिन्दी कविता करते थे और नख-शिख तथा नायिकाभेद की दो पुस्तकें इनकी लिखी सुनी जाती हैं। कवियों को आश्रय भी देते थे।

शिवाजी द्वितीय उपनाम साहू

(१७३८—१८०४)

सं० १७४६ वि० में अपने पिता शम्भा जी के मारे जाने पर यह राजा हुए और इनके पितृव्य राजाराम अभिभावक हुए। इसके बाद ही मराठी सेना ने संता जी घोरपदे की अधीनता में तूलापुर के पास मुगल बादशाह के पड़ाव पर छापा डाला। संता जी धूर्तता से अपने को मुगलों ही का एक मराठा सर्दार बतलाते हुये उस पड़ाव के भीतर चले गए और बादशाही खेमे को

नष्ट भ्रष्ट कर उसके भीतर के सब आदमियों को मार डाला। औरंगजेब कहीं अन्यत्र सोया हुआ था इसलिए बच गया। उसी वर्ष के अंत में रायगढ़ पर मुगलों ने सूर्या जी पिसल को मिलाकर अधिकार कर लिया और शिवाजी अपनी माता येशूबाई के साथ पकड़े गये। औरंगजेब ने इन दोनों को अपनी पुत्री जीनतुन्निसा को सौंप दिया और शिवाजी के नाम को बदलकर साहू रख दिया।

सं० १७६४ वि० के अन्त में बहादुरशाह ने साहू को कैद से छोड़ दिया और उसे दक्षिण भेजा। यह राजाराम की रानी ताराबाई से कई लड़ाइयाँ लड़ कर सितारा के राजा बन बैठे, पर यह षड्यंत्र कई वर्षों तक चलता रहा। इसी समय बाला जी विश्वनाथ ने क्रमशः प्रसिद्धि प्राप्त करना आरम्भ किया और इन षड्यंत्रों से निर्बल हुए मराठा राज्य का पुनरुद्धार किया। सं० १७७७ वि० में इनकी मृत्यु होने पर साहू ने इनके पुत्र बाजीराव को पेशवा बनाया। उस समय इनके भाई चिमना जी बारह वर्ष के थे। इनकी सफलताओं ने पेशवा की पदवी परंपरा के लिए इन्हींके वंश में निश्चित कर दिया। बाजीराव ने सं० १७८५ वि० में निजाम को अच्छी प्रकार पराजित कर दिया। इन्होंने पूना को अपना प्रधान स्थल बनाया, जो पेशवाओं की साहू की मृत्यु पर राजधानी कहलाई। सं० १७९० वि० में मुहम्मद खाँ बंगश ने बुंदेलखंड पर चढ़ाई कर छत्रसाल के राज्य पर अधिकार कर लिया। छत्रसाल के सहायता माँगने पर बाजीराव ससैन्य वहाँ पहुँचे और बंगश को पूर्णतया परास्त कर भगा दिया। इसके बाद बाजीराव ने मालवा तथा गुजरात पर अधिकार कर लिया। सं० १७९४ वि० में बाजीराव दिल्ली पहुँच कर उसके आस पास के ग्रामों को लूटते हुए लौट आये। इसी वर्ष के

अन्त में बाजीराव ने निजाम के सेनापतित्व में युद्धार्थ तैयार मुग़ल सेना को भूपाल के पास परास्त कर भगा दिया। सं० १७९७ वि० में बाजीराव ने हैदराबाद के निजाम नासिरजंग को परास्त किया। इसी वर्ष इनकी मृत्यु हो गई तब इनके पुत्र बाला जी बाजीराव तृतीय पेशवा हुए। सं० १८०४ वि० में साहू जी की मृत्यु हो गई। यह निस्संतान थे इसलिये राजाराम के पौत्र रामराजा गद्दी पर बैठे।

स्फुट पद-संग्रह में दो पद इनकी प्रशंसा में दिये गये हैं जिनमें एक तो इनके राज्य के आरंभिक काल का ज्ञात होता है। भूषण कहते हैं कि 'साहू जी की साहिबी दिखात कछु होनहार'। दूसरे में साहू के आतंक का वर्णन मात्र है। छत्रसाल दशक में छत्रसाल की प्रशंसा करते हुये कहा है कि 'और राव राजा एक मन में न लाऊँ अब साहू को सराहौं कै सराहौं छत्रसाल को', इससे यह मालूम होता है कि भूषण ने साहू के राजा होने पर ये कविताएँ की थीं।

पन्नानरेश महाराज छत्रसाल

(१७०६—१७९०)

ओड़छा राज्य के संस्थापक महाराज प्रतापरुद्र के बारह पुत्र थे जिनमें प्रथम दो भारतीचन्द्र तथा मधुकर साह क्रमशः अपने पैतृक राज्य के अधिकारी हुए। तृतीय पुत्र उदयाजित को महेवा की जागीर मिली। इनकी चौथी पीढ़ी में चंपतिराय हुए जिन्होंने मुग़लों से निरंतर युद्ध कर खालसा हुए ओड़छा राज्य को फिर से पहाड़सिंह को दिलवाया था। इसी कारण लाल कवि ने लिखा है।

प्रलय पयोधि उमंड में ज्यों गोकुल जदुराय।
त्यों बूड़त बुंदेल कुल राख्यो चम्पतिराय॥

चम्पतिराय के पाँच पुत्र थे—सारबाहन, अंगद राय, रत्नसाह, छत्रसाल और गोपाल राय। छत्रसाल का जन्म ज्येष्ठ शुक्ल ३ सं० १७०६ वि० को हुआ था। पिता की मृत्यु के समय इनकी अवस्था पंद्रह वर्ष की थी और यह अपने मामा साहबसिंह धंधेरे के यहाँ सहरा में रहते थे। वहाँ से यह पहिले अपने चाचा के यहाँ गए और वहाँ से भी कुछ दिन बाद अपने भाई अंगद राय के यहाँ देवगढ़ गए। उनकी सम्मति से यह बादशाही सेना में सम्मिलित हुए पर आदर न होने से स्वतन्त्रता-प्रिय छत्रसाल ने मुगलों से युद्ध करना ही निश्चय किया और सं० १७२७ वि० में यह छत्रपति महाराज शिवाजी से मिले। उनके उत्साह-वर्धक वचनों को सुन कर दृढ़प्रतिज्ञ हो यह अपनी जन्मभूमि को लौट आये और मुगलों से युद्ध करने का प्रबन्ध करने लगे। कई बुंदेले सरदार धीरे-धीरे इनसे मिल गए और सं० १७२८ वि० तक इन्होंने कई युद्धों में विजय प्राप्त कर अपना आतंक बुंदेलखंड में पूर्णतया जमा दिया। कई स्थानों पर इन्होंने अपना आधिपत्य भी जमा लिया। मुहम्मद अमीन खाँ की रक्षा में दक्षिण से जाते हुए कोष को इन्होंने लूट लिया। इन्होंने सं० १७३७ वि० में औरंगजेब के भेजे हुये सर्दार तहव्वर खाँ को पराजित किया और अनवर खाँ, सदरुद्दीन तथा हामिद खाँ आदि के सेनापतित्व में आई हुई सेनाओं को भी परास्त कर दिया। तब सं० १७४६ वि० में अब्दुस्समद खां की अधीनता में एक भारी मुगल-वाहिनी इन पर आई, पर इन्होंने उसे बेतबा नदी के किनारे नष्ट कर बहा दिया। इसके अनंतर सं० १७५८-६१ वि० के बीच में मुराद खाँ, दलेल खाँ, सैद अफगान तथा शाह कुली खाँ को परास्त किया। इस

प्रकार अनेक विजय प्राप्त कर छत्रसाल ने अपना प्रभुत्व सारे बुंदेलखण्ड पर स्थापित कर दिया और सं० १७६५ वि० में बहादुर शाह ने भी इन्हें इनके स्वअर्जित राज्य का राजा स्वीकार कर लिया।

मुग़ल-साम्राज्य का अवनतिकाल आरम्भ हो गया था और मुग़ल सरदारगण अपने अपने अधीनस्थ सूबों में अपना राज्य स्थापित करने में लगे थे। इसी प्रकार के एक फौजदार मुहम्मद खां बंगश ने फर्रुखाबाद में अपनी नवाबी जमा ली थी और पास के बुंदेलखण्ड पर अपना प्रभुत्व जमाने के लिये सं० १७८६ वि० में अस्सी सहस्र सेना के साथ वहाँ पहुँचा। छत्रसाल ने बाजीराव पेशवा की सहायता से इसे परास्त कर भगा दिया। इसके बदले इन्होंने पेशवा को अपने राज्य का तृतीयांश दे दिया। सं० १७९० वि० में इनकी मृत्यु हुई। इनके बड़े पुत्र हृदयराम पन्ना के तथा द्वितीय पुत्र जगतराज जैतपुरा के राजा हुये।

छत्रसाल स्वयं कवि थे और सुकवियों के आश्रयदाता भी थे। ऐसे ही वीर पुरुष की भूषण ने 'साहू को सराहौं कि सराहौं छत्रसाल को' कह कर प्रशंसा की है।

'हृदयराम सुतरुद्र'

शिवराज-भूषण के पद २८ से ज्ञात होता है कि 'साहस-शील-समुद्र चित्रकूट-पति हृदयराम सुतरुद्र सोलंकी ने भूषण पदवी दी'। 'तिनमें आयो एक कवि भूषण कहियत ताहि' से यह भी स्पष्ट है कि यह पदवी इन्हें शिवाजी के दरबार में पहुँचने के पहिले प्राप्त हुई थी। जैसा अन्यत्र लिखा जा चुका है, यह सं०

१६२४ वि० के आस पास शिवाजी के दरबार में गए थे, इससे यह पदवी इन्हें इसके पहिले ही मिली होगी।

इसके सिवा स्फुट पदों के ३२ वें छंद में 'सुलंकी के पयान ते' कुछ प्रलय के चिन्ह से उत्पन्न होने का उल्लेख है यही सुलंकी शब्द ऊपर के पद २८ में भी आ चुका है और इस कारण भूषण उपाधि देने वाले कलाँ भूप की जीवनी पर कुछ विशेष प्रकाश नहीं डालता। इन दो के सिवा कवि जी ने अपने इस प्रथम आश्रयदाता के विषय में कुछ भी नहीं लिखा है और प्रत्येक पद में किसी घटना के आभास देने की जो इनकी विशेषता बतलाई जाती है वह ३२वें छंद में कहीं दृष्टिगोचर भी नहीं होती। अब केवल अनुमान लड़ाना मात्र है। यह कोई साधारण राजा या बबुआने में से रहे होंगे, क्योंकि इस छंद में सेना का भी उल्लेख नहीं है, केवल एक सजे हुए घोड़े पर सवारी का प्रयाण होना कहा गया है। दूसरे भूषण जी के विषय में जो किंवदंतियाँ प्रचलित हैं उनसे यह ज्ञात होता है कि इनका मिजाज ऊँचा था और साधारण सत्कार से यह प्रसन्न नहीं होते थे। यह आश्रय-दाता महाशय इन्हें स्यात् केवल कोरी उपाधि देकर ही संतुष्ट रखना चाहते रहे होंगे, इससे इनके यहाँ विशेष समय न बिताकर तथा शिवाजी की प्रसिद्धि सुनकर यह उस ओर चल दिए होंगे। भूषण' उपाधि इनके मन की थी इससे उसे ग्रहण करने पर उसके दाता का उल्लेख कर देना इन्होंने उचित समझा। सुभाषित रत्नभांडागारम् में पृ० १२७ पर रुद्र राजा की प्रशंसा में पाँच श्लोक दिए गए हैं, पर उनसे भी तथ्य निर्णय के लिए कोई आधार नहीं मिलता।

रीवाँ का बघेला राजवंश सोलंकी है और इनके बबुआने में बर्दी के एक बाबू रुद्रशाह हो गए हैं जिनके पिता का नाम हरिहर

शाह था। रीवाँ गजेटिअर पृ० ८० से एक उद्धरण दिया जाकर यह दिखलाया गया है कि हरिहर शाह के छोटे भाई रुद्रशाह को बर्दी तहसील में बिजौरा इलाका मिला था, जिनकी तीसरी पीढ़ी में मयूरशाह हुए। इन्होंने बर्दी को अपनी राजधानी बनाया। इनके सिवा एक दूसरे सालंकी हृदयराम के पुत्र रुद्रराम का नाम भी लिया जाता है जो गहोरा के अधिपति कहे जाते हैं। इन दोनों ही का समय निश्चित नहीं है और न किसी प्रकार यही निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि इन्हीं में से किसी ने भूषण उपाधि कवि को दी थी। अस्तु, जब तक किसी विद्वान् अन्वेषक द्वारा ऐसे निश्चित हृदयराम सुत रुद्र' खोज न निकाले जायँ तब तक इस विषय पर तर्क करना कुतर्क मात्र होगा।

छत्रसाल तथा बुद्धसिंह हाड़ा

रावरत्न के पौत्र का राज्यकाल सं० १६८८ से सं० १७१४ वि० तक है। इनके विषय में छत्रसाल दशक में दो दोहे आरंभ में दिए गए हैं जिनमें इनकी प्रशंसा के साथ मुगल सम्राट् की अधीनता स्वीकार करने से इन पर कुछ आक्षेप सा किया गया है। इसके सिवा इनके विषय में भूषण ने और कुछ नहीं कहा है। इनके पुत्र भाऊसिंह सं० १७१४ वि० में गद्दी पर बैठे और सं० १७३४ वि० में इनकी मृत्यु हुई। इनके शिवाजी द्वारा पराजित होने तथा इनके जीवन की कई घटनाओं का भूषण ने उल्लेख किया है पर इनकी प्रशंसा कहीं नहीं की है। भाऊसिंह के पुत्र नहीं थे, इसलिये इनके भाई भगवन्तसिंह के पौत्र तथा कृष्णसिंह के पुत्र अनिरुद्धसिंह गद्दी पर बैठे। औरंगजेब के दक्षिण जाने पर उत्तर में उसके प्रतिनिधि शाहआलम के अधीन कार्य करते

समय इनकी मृत्यु हो गई। इनके पुत्र राव बुद्धसिंह बूँदी के अधिपति हुए, जिनकी प्रशंसा में भषण ने दो पद कहे हैं जो स्फुट संग्रह में ३३ तथा ३९ संख्या पर दिए गए हैं।

एक में 'राव बुद्ध के तेग' की प्रशंसा है और दूसरे में 'बुद्ध' की सेना के प्रयाण का वर्णन है। किसी में भी बुद्धसिंह के राव-राजा पदवी का उल्लेख नहीं है। औरंगजेब की मृत्यु के पहिले ही यह बूँदी के राजा हो चुके थे और उसकी मृत्यु के समय इनका पूर्ण यौवनकाल था। सं० १७६४ वि० के जाजऊ युद्ध में इन्होंने औरंगजेब के सब से बड़े पुत्र शाहआलम बहादुरशाह का पक्ष लिया था। इस विजय के उपलक्ष में इन्हें रावराजा की पदवी मिली था। सं० १७६८ वि० में बहादुरशाह की मृत्यु पर जहाँदार शाह बादशाह हुआ। नौ महीने बादशाहत करने के बाद यह मारा गया। इसका भतीजा फर्रुखसियर गद्दी पर बैठा और सं० १७५७ वि० में कैद किया गया। राव बुद्धसिंह इसी के राजत्व में इसकी दुर्दशा देखकर बूँदी चले गये। सैयदों से इनकी पटती नहीं थी, जिन्होंने फर्रुखसियर को गद्दी पर बिठाया था और जिनके हाथ में सब अधिकार चला गया था। बूँदी जाने पर इनके कई शत्रुओं ने मिलकर इनका राज्य भी छीन लिया और इसी अवस्था में इनका अंत भी हुआ भूषण ने इनकी प्रशंसा इनकी उन्नत अवस्था ही के समय की होगी। जहाँदार शाह की मृत्यु पर दिल्ली में इनका विशेष कुछ भी अधिकार नहीं रह गया था, इससे सं० १७६९ वि० के पहिले ही यह प्रशंसा की गई होगी। रावराजा* पदवी इनके लिए नई थी और यदि

*सम्राट् जहाँगीर ने रावरत्न हाड़ा को रावराजा तथा सर बुलंद राय की पदवियाँ दी थीं, जिसका उल्लेख इकबाल-नामए जहाँगीरी में है।

भूषण जी उस उपाधि-प्राप्ति के बाद प्रशंसा करते तो अवश्य उसका उल्लेख करते, पर उन्होंने वैसा नहीं किया है। 'और रावराजा एक मन में न ल्याऊँ अब साहू को सराहौं कै सराहौं छत्रसाल को' में इन्हीं रावराजा से तात्पर्य लेना अनुचित मालूम होता है। राव तथा राजा अर्थ लेना ही समीचीन है। वाक्य-योजना से भी यही अर्थ ठीक ज्ञात होता है। पूर्वोक्त दो कवित्तों में एक में 'भूषण' उपनाम भी नहीं आया है और पं० मायाशङ्कर याज्ञिक बी० ए० की सम्मति में यह लाल कलानिधि कृत है। अब केवल एक कवित्त रह गया सो भी स्फुट संग्रह ही में है। इसमें 'भूषण' उपनाम दिया है, पर यह अवश्य भूषणकृत है यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता।

जयपुर नरेशगण

भूषण ने जयपुर राजवंश की पाँच पीढ़ियों का उल्लेख स्फुट छंद ४० में किया है। इसका भाव यह है कि अकबर ने भगवंत सिंह के पुत्र (राजा मानसिंह) से तथा उनके पुत्र जगतसिंह से मान पाया था। उसी प्रकार जहाँगीर ने महासिंह जी से और शाहजहाँ ने प्रसिद्ध जयसिंह से प्रतिष्ठा पाई। अब औरंगजेब ने रामसिंह जी से पाया है और आगे भी बराबर कूर्मवंशीय राजाओं को मानने से प्रतिष्ठा पाता रहेगा। अर्थात् जब और राजे राय आदि बादशाह से प्रतिष्ठा प्राप्त करते हैं, तब बादशाह मानसिंह के घराने से प्रतिष्ठा पाते हैं।' इस पद के पढ़ने से यह स्पष्ट मालूम

(देखिए मआसिरुल उमरा फा० भा० २ पृ० २०८६) अकबर ने यह पदवी रावसुर्जन को पहिले पहिल प्रदान की थी

हो जाता है कि भूषण रामसिंह जो की प्रशंसा कर रहे हैं। पायो भूतकाल, अब वर्तमान काल तथा पैहैं भविष्य काल बतला रहा है।

स्फुट संग्रह छंद ४२ में 'भूपाल जयसिंह' का वर्णन है यह मिर्जाराज जयसिंह प्रथम हैं या मिर्जाराज सवाई जयसिंह द्वितीय हैं, इसमें कुछ सज्जनों का मतभेद है। सम्राट् अकबर ने मिर्जाराजा की पदवी राजा मानसिंह को वंशपरम्परा के लिये दी थी और उनके बाद के सभी राजे इस उपाधि को धारण करते रहे हैं। सवाई पदवी स्वयं जयसिंह द्वितीय को मिली थी। इस लिए इस छंद में प्रथम उपाधि का न रहना जयसिंह प्रथम के मानने में आपत्ति नहीं करता; प्रत्युत् द्वितीय उपाधि का न रहना दूसरे जयसिंह के मानने में शंका अवश्य उत्पन्न करता है। इस छंद में दोनों उपाधियां नहीं हैं! इसका कारण भूषण का राष्ट्रवादी होना कहा गया है, पर यह भी भूल है। मिर्जा, सवाई, शरजा, गाजी आदि मुसलमानों द्वारा दी गई, या जान बूझ कर अपहरण की गई उपाधियाँ भूषण द्वारा बराबर प्रयुक्त हुई हैं। शाह शब्द फारसी हो पर साह शब्द फारसी नहीं है। उस पर भूषण ने फारसी 'शाह' शब्द का भी अनेकों बार प्रयोग किया है। शिवा जी के पिता शाह जी का नाम मुसलमान फकीर का द्योतक ही हैं, क्योंकि इनका जन्म शाह जी ही की दुआ से हुआ माना गया था। भाऊसिंह को 'भाऊ खान' तक बना डाला गया है। अस्तु, तात्पर्य यही है कि कम से कम इस छंद से यह मान लिया जा सकता है कि यह किसी जयसिंह के विषय में कहा गया है, पर जयसिंह द्वितीय की ही इसमें प्रशंसा है यह किसी प्रकार इससे प्रमाणित नहीं होता और न ऐसा किसी ने किया ही है।

शिवराज भूषण के छंद २१२—२१३ में 'मिर्जा जयसाह' के

परास्त होने पर शिवाजी द्वारा दुर्गों के दिए जाने का उल्लेख किया गया है। इन दो छंदों तथा पूर्वोक्त दो छंदों में से प्रथम में स्पष्टतः जयसिंह प्रथम ही का वर्णन है। इनमें एक में मिर्जा उपाधि भी दी गई है और 'सवाई' उपाधि भी भूषण ने शिवाजी के लिए एक बार छंद २२१ में प्रयुक्त किया है, अर्थात् उन्होंने इस शब्द को विदेशी द्वारा दिए जाने के कारण बायकाट भी नहीं किया है। इस प्रकार यही निश्चित है कि भूषण ने जयसिंह प्रथम ही के विषय में कविता की है। इन प्रसिद्ध नरेशों का संक्षिप्ततम परिचय परिशिष्ट में दिया गया है।

यदि तर्क के लिए एक छंद में जयसिंह द्वितीय भी मान लिए जायँ तो भी भूषण का समय निश्चय करने में कोई हानि नहीं होती। रामसिंह की मृत्यु पर विष्णुसिंह गद्दी पर बैठे, पर इनकी भी शीघ्र ही मृत्यु हो गई। स० १७२५ वि० में जयसिंह द्वितीय गद्दी पर बैठे। इन्होंने मालवा का सूबा बाजीराव को दिया था। इन्होंने टॉड के अनुसार पचपन वष राज्य किया था, पर प्रो० सर्कार ने इनकी मृत्यु सन् १७४३ ई० में लिखी है।

बाजीराव

स्फुट संग्रह पद सं० ४८ में पन्नानरेश छत्रसाल को सहायता देने वाले बाजीराव की प्रशंसा की गई है। सं० १७६० वि० में यह घटना हुई थी। इस छंद में भूषण उपनाम नहीं आया है, इसलिए केवल इस छंद के कारण, जो संदिग्ध है, भूषण के समय को सं० १७६० तक खींच लाना ठीक नहीं है। छत्रसाल बुंदेला की प्रशंसा में जितने छंद कहे गए हैं; उनमें से किसी में भी बंगश की

चढ़ाई तथा मराठों को सहायता से उसके पराभव का उल्लेख नहीं हुआ है।

शंभा जी की प्रशंसा में कहे गए एक कवित्त को (स्फु० सं० पद २८) अंतिम पंक्ति यों है—

बाजो सब बाज से चपेटैं चंग चहूँ ओर,
तीतर तुरुक दिल्ली भीतर बचैं नहीं।

इसका पाठान्तर बतलाया जाता है कि "बाजी सब' के स्थान पर 'बाजीराव' होना चाहिए। पर इसके साथ तीसरी पंक्ति का भी कुछ पाठान्तर होना चाहिए, नहीं तो वास्तव में कुल पद ही निरर्थक हो जाता है। वह पंक्तियों है—

भूषन जू खेलत सितारे में सिकार संभा,
सिवा को सुवन जाते दुवन सँचै नहीं।

शिवाजी के पुत्र शंभा जी के समय बाजीराव का जन्म भी नहीं हुआ था। शंभा जी के मारे जाने के आठ वर्ष बाद उनका जन्म हुआ था। इसलिए 'राव' के स्थान पर 'सब' ठीक तथा सार्थक है और इसमें बाजीराव की प्रशंसा नहीं की गई है।

साहू की प्रशंसा में कहे गए छं० ३० (स्फु० सं०) में सिंधप्रांत के सक्खर तथा बक्खर तक, मालवा के सिरौंज तथा दिल्ली तक मराठी सेना के पहुँचने का वर्णन किया गया है। साहू वास्तव में अपनी राजधानी में रहा करते थे और केवल एक बार छोड़ कर नाम मात्र के लिए भी कभी किसी लड़ाई पर नहीं गए। इनके सेना-पतिगण ही बराबर भेजे जाते थे। यह सं० १७६४ में गद्दी पर बैठे थे और बाजीराव सं० १७७७ वि० में द्वितीय पेशवा हुए थे। इसके पहिले इनके पिता बाला जी विश्वनाथ पेशवा थे। उनके समय में खंडेराव दाभदे ने, जो साहू जी के एक सेनापति थे, गुजरात पर अधिकार कर लिया था और वह मुगल सेनाओं को परास्त कर

भगा देते थे। इनकी सेनाएँ सिंध में भी लूट मचाती रहती थीं। सं० १७७५ में बाला जी विश्वानाथ ससैन्य हुसेन अली खाँ के साथ मालवा होते दिल्ली गए और अपने अनुकूल संधिपत्र पर बादशाही हस्ताक्षर करा लाए थे। इस प्रकार छंद से भी बाजीराव ही की दिल्ली पर की चढ़ाई का वर्णन का नहीं .प्रकट होता, क्योंकि उसके पहिले की चढ़ाई का वर्णन भी हो सकता है। उस छंद में केवल एक व्यक्ति का नाम आया है, जो इन दोनों पिता-पुत्र के लिए समान रूपेण स्वामी था।

तात्पर्य यह है कि पूर्वोक्त विचारों से यही स्पष्ट होता है कि भूषण ने बाजीराव द्वितीय के लिये कविता नहीं की थी। जब तक भूषण की और रचनाएँ इनका स्पष्ट उल्लेख करते हुए न प्राप्त हों तब तक के लिए यही धारणा ठीक है।

दाराशाह तथा औरंगज़ेब

स्फुट-संग्रह में तीन पद ३७, ३८ तथा ४१ संख्याओं पर दिए गए हैं, जिनमें प्रथम दो में औरंगजेब पर सत्य कटाक्ष किए गए हैं और तीसरे में दाराशाह की सेना का वर्णन है। प्रथम दो में दारा का उल्लेख किया गया है। तीसरे में दाराशाह के पहिले जहाँ शब्द आया है जिसके मिला देने से जहाँ दाराशाह या जहांदारशाह नाम निकलता है। यह जहाँदारशाह नौ महीने के लिए दिल्ली की गद्दी पर बैठा था। इसको गद्दी पर बिठाने वाला ज़ुल्फिकार खाँ था। इसने स्वयं एक युद्ध भी अपने जीवन में नहीं किया था। यह अत्यन्त लंपट था और राजकार्य कुछ भी नहीं देखता था। भूषण से कवि ने इसके लिए कविता कभी न की होगी। औरंगजेब की निंदा करते समय भूषण ने दारा के प्रति विशेष

सहानुभूति दिखलाई है और दारा शिकोह भी इस योग्य था। उसकी धार्मिक उदारता, शीलसौजन्य आदि गुण उसे इस प्रशंसा का पात्र बनाते हैं। इसके समय मुगल साम्राज्य अपनी पूर्ण उन्नत अवस्था में था और इसे कई भारी भारी सेनाओं की अध्यक्षता भी मिली थी। उक्त छंद में दाराशाह ही की प्रशंसा है।

अज्ञात आश्रयदातागण

स्फुट संग्रह के तीन पदों ३४, ३६ और ४३ में तीन सज्जनों की प्रशंसा है। पहिले में 'अवधूतसिंह जा दिन दल साजि चढ़त ता दिन कमठ की पीठि पै पिठी सी बाँटियतु है'। यह अवधूत सिंह कौन हैं उसका इसमें कोई उल्लेख नहीं है और न इससे इनके जीवन की किसी विशिष्ट घटना की सूचना मिलती है। एक रीवाँनरेश अवधूतसिंह नाम के हो गए हैं, जिनका प्राप्त परिचय परिशिष्ट च में दिया गया है।

दूसरे में हाथियों की भूरि-भूरि प्रशंसा की गई है और अन्त में उन्हींका एक स्तुति वाक्य इस प्रकार दिया है कि 'गुञ्जरत कुञ्जर कुमाऊँ नरनाह के'। कुमाऊँ के राजवंश में एक भी राजा हुए ही नहीं थे कि इसमें उन्हींका उल्लेख मान लिया जाय। यह छंद उस राजवंश के सभी राजाओं के लिए समान रूप से कहा हुआ माना जा सकता है, इसलिए इस छंद के कर्ता का समय इससे निश्चित नहीं किया जा सकता है।

तीसरे में मेंडू के पौरचनरेश अमरेश जी के पुत्र अनिरुद्ध के यश का कीर्तन है। इन पिता पुत्र के विषय में कुछ निश्चित रूप से ज्ञात नहीं हो सका और इसलिए इनके सम्बन्ध में कुछ नहीं लिखा जा सकता।

इन तीनों छन्दों के विषय में यह भी शंका होती है कि जिन भूषण ने यह गर्वोक्ति की थी कि 'और राव राजा एक मन में न ल्याऊँ अब साहू को सराहौं कै सराहौं छत्रसाल को' क्या वे इस प्रकार के अज्ञात लोगों की प्रशंसा करते घूमते थे। जो हो, ये छंद संदिग्ध अवश्य हैं।

४-रचनायें

महाकवि भूषण की रचनाओं के नाम शिवसिंह सरोज आदि ग्रन्थों में इस प्रकार दिये हैं। (१) शिवराजभूषण (२) भूषण हजारा (३) भूषण उल्लास (४) दूषण उल्लास। केवल प्रथम पुस्तक प्रकाशित हो चुकी है तथा अन्य तीन अभी तक अप्राप्त हैं। अभी तक प्रकाशित भूषण ग्रन्थावलियों में शिवराजभूषण को छोड़ कर अन्य दो संग्रह शिवाबावनी तथा छत्रसाल दशक के नाम से प्रकाशित हुए हैं और इनके सिवा स्फुट पद भी लगभग पचास के संगृहीत हो चुके हैं। अब यह कहना कि ये दोनों संग्रह स्वतंत्र रचनायें हैं या किसी बड़े संग्रह के अंश मात्र हैं, कुछ कठिन है और जब तक पूर्वोल्लिखित अन्य ग्रन्थ प्राप्त न हों कोई सम्मति देना सारहीन ही है। भूषण से प्रतिभाशाली तथा दीर्घजीवी कवि के लिये उनकी प्राप्त कविता बहुत कम है और आशा है कि खोज से अन्य रचनाएँ भी उपलब्ध होकर इनके जीवन तथा समय आदि पर प्रकाश डालती हुई हिन्दी साहित्य-भांडार को और भी समुज्ज्वल करेंगी। अब इनकी प्राप्त रचना पर विचार किया जायगा।

(१) शिवराज भूषण—भूषण जी का एक यही ग्रन्थ सम्पूर्ण प्राप्त है। यह अलंकार ग्रन्थ है। इसमें एक सौ नौ अलंकारों के लक्षण तथा उदाहरण दिए गए हैं, पर कवि ने स्वयं पद ३७१ से

३७९ तक जो अलंकारों की नामावली दी है उसमें एक सौ पाँच अलंकारों का नाम दिया है और लिखा भी है कि 'एक सत भूषन कहे अरु पाँच।' लुप्तोपमा, न्यून-अधिक रूपक तथा गम्योत्प्रेक्षा ये चार वर्णित हैं, पर सूची मे उनका नाम नहीं आया है। वे भूषणकृत अवश्य हैं, जैसा कि लक्षण तथा उदाहरणों से ज्ञात होता है। स्यात् कवि ने उन्हें उपमा आदि प्रधान अलंकारों के अंतर्गत समझ कर उनका पृथक् नाम नहीं दिया है। इस ग्रन्थ में जितने उदाहरण दिए गए हैं उनमें शिवाजी के जीवन की घटनाओं तथा उनके प्रभुत्व और आतंक ही का वर्णन पाया जाता है। इसी से कवि ने इस ग्रन्थ का यह नामकरण किया है। कवि लिखता ही है कि—

> शिव चरित्र लखि यों भयो कवि भूषण के चित्त।
> भाँति भाँति भूषननि सों भूषित करौं कवित्त॥
> सुकविन हूँ की कुछ कृपा समुझि कविन को पंथ।
> भूषन भूषनमय करत शिव-भूषन सुभ ग्रन्थ॥

भूषन जी इस ग्रन्थ की रचना का कारण भी इन दोनों दोहों में यों लिखते हैं कि 'मेरे हृदय में शिवा जी के चरित्र को देखकर यह भाव उठा कि कवित्त को अनेक प्रकार के अलंकारों से सज्जित करूँ। इसलिए सुकवियों की कृपा से उन्हीं के मार्ग का अच्छी तरह मनन कर मैं शिवराज भूषण नामक अलंकारमय ग्रन्थ बनाता हूँ।' इससे यह स्पष्ट ज्ञात होता है कि भूषण जी ने शिवाजी के चरित्र को देख कर इस ग्रंथ के बनाने का विचार किया था। 'लखि' शब्द आँखों देखे वर्णन का द्योतक है, पर उससे यह ध्वनि नहीं निकल सकती कि जो कुछ वर्णित है सब उन्होंने अपनी आँखों देख कर लिखा है। तात्पर्य केवल इतना ही है कि जिस प्रकार वे शिवाजी की प्रसिद्धि तथा यश सुन कर

उनके दरबार में आये थे उसी प्रकार वैसा ही उनका सुचरित्र देखकर उन्होंने इस ग्रंथ को शिवाजी के नाम पर बनाना उचित समझा था।

शिवराज-भूषण ग्रन्थ में प्रायः एक दजन घटनाओं का उल्लेख मिलता है, जिनमें किसी किसी पर आठ दस पद तक कहे गए हैं और किसी किसी का केवल एक ही पद में उल्लेख मात्र कर देना काफी समझा गया है। इन घटनाओं की एक तालिका नीचे दी जाती है जिससे देखा जाता है कि ये घटनाएँ सं० १७१३ से सं० १७२९ तक (सन् १६५६ ई० से सन १६७२ ई० तक) के बीच की हैं। साथ ही यह भी देखा जाता है कि इन घटनाओं का वर्णन क्रमबद्ध नहीं है और सं० १७२३ वि० में शिवाजी के दिल्ली से प्रत्यागमन के बाद से सं० १७२७ वि० तक का किसी घटना का उल्लेख नहीं मिलता। इस बीच परिशिष्ट ङ के अनुसार देखा जाता है शिवाजी भी अपने राज्य के दृढ़ करने में लगे थे और मुगलों से संधि कर रखी था। सं० १७२७ ही से फिर युद्ध आरंभ हुआ है। शिवराज-भूषण अलंकार ग्रन्थ है, इतिहास ग्रन्थ नहीं है इसलिये सूदन के सुजानचरित्र तथा लाल के छत्रप्रकाश सदृश क्रमबद्ध इतिहास या घटनावाली का इसमें अन्वेषण करना बुद्धिमानी नहीं है। जिस समय भूषण जी इस ग्रन्थ को लिखने बैठे थे 'उस समय सब अलंकारों में उपमा ही को उन्होने उत्तम समझ कर उसीसे आरंभ किया था'। इसके उदाहरणों में भूषण ने सं० १७२७ वि० को या इसके पहिले की घटनाओं का उल्लेख किया है। कवि घटनाओं का वर्णन करना ही नहीं चाहता; वह उनका उल्लेख मात्र शिवाजी का यश कीर्तन करने के लिये करता है। जिन घटनाओं का इस ग्रंथ में उल्लेख हुआ है, उनकी तालिका इस पकार है—

सं०	घटना	पद-संख्या	विशेष सूचना
१	शाहजहाँ के चारों पुत्रों का राज्य के लिए युद्ध करना तथा दारा, शुजा और मुराद की हार।	२१७, ३४, बा०	सं० १७१५ (सन् १६५८ ई०)
२	अफजल खाँ का मारा जाना, बारह सहस्र सवार सेना का पार तथा जावली के बीच प्रतापगढ़ के नीचे नष्ट होना।	४२, ६३, ६६, ३३७, २८ बा०, ३१ बा०, ११ स्फु०	सं० १७१६ (सन् १६५६ ई०)
३	परनाला दुर्ग विजय करना।	१०७, १७८, २०७, २५४, २८ बा०	सं० १७१७ (सन् १६६० ई०)
४	पूना में शायस्ता खाँ की दुर्दशा।	१८६, ३२३, ३३७, २६ बा०	सं० १७२० (सन् १६६३ ई०)
५	सूरत की लूट— वर्णन से प्रथम लूट ही ज्ञात होती है।	२००, ३३४, ३५४, ७ स्फु०	सं० १७२१ (सन् १६६४ ई०)

सं०	घटना	पद-संख्या	विशेष सूचना
६	जयसिंह से हार कर गढ़ों के देने का उल्लेख।	२१२,२१३	सं० १७२२ (सन् १६६५ ई०)
७	शिवाजी का दिल्ली जाना और वहाँ से लौट आना।	३४, ३८, ७६, १४८, १८६,१६८, २०४,२०६ ३०६.३१०, १४ बा०, १५ बा०.२ स्फु०, ५७ स्फु०	सं० १७२३ सन् १६६६ ई०)
८	सिंहगढ़ का ताना जी गालूसरे द्वारा लिया जाना और उदैभान राठौर का मारा जाना।	१००, २८५	सं० १७२७ (सन् १६७० ई०)
६	सल्हेर युद्ध - अमरसिंह का मारा जाना।	६५ १०३, १०७.२२५, २२६,२३६, २७५.२६२, ३३१.३५६, २४ बा०	सं० १७२८ (सन् १६७१ ई०)
१०	रामनगर, जवारि तथा रामगिरि का विजय होना।	१७३,२१३	सं० १७२६ (सन् १६७२ ई०)

इसके अनंतर यह भी देखना चाहिए कि जिन स्थानों का उल्लेख हुआ है, उनसे भी इस ग्रन्थ के रचनाकाल के निर्धारण में कुछ सहायता मिलती है या नहीं। ऐतिहासिक' तथ्य-निर्धारण में कवि-कल्पना मात्र से कुछ भी सहायता नहीं मिल सकती। केवल स्पष्ट उल्लेख ही ऐतिहासिक क्षेत्र में प्रमाण माने जा सकते हैं। एक बात जो मान्य हो चुकी है. चाहे वह किंवदन्ती ही के निर्बल आधार पर ही स्थित हो, उसे संदिग्ध या भ्रमपूर्ण या अशुद्ध प्रमाणित करने के लिए प्रबल तथा अकाट्य प्रमाण देना ही उचित है। खींचातानी करके अर्थ निकालने से प्रमाण निर्बल हो जाते हैं। अस्तु, छन्द नं० ११२ में नौ स्थानों का उल्लेख है। कवि का भाव यही है कि, इन स्थानों के तथा 'जे पूरब पछांह नरनाह ते' सभी दिल्लीपति के शरणागत हैं, ऐसे उस विजयी औरंगजेब को जीतने वाले शिवाजी अद्वितीय हैं। छन्द १५६ में पांच स्थानों का उल्लेख है और वही भाव है। छन्द ११७ में ग्यारह स्थानों का नाम दिया है और १७३ में ६ का दिया गया है। दोनों ही में शिवाजी का आतङ्क-वर्णन मात्र अभिप्रेत है। आगरे-दिल्ली में कब बेगमों ने सिंदूर लगाया होगा और बलख रूम तक की सेना कब विचलित हो उठी होगी, इसे कवि की कल्पना-शक्ति की साधारण उड़ान समझिए। हबस देश तो दूसरे महाद्वीप अफ्रीका में स्थित है। यह सब कथन अपने नायक के प्रभुत्व की अतिशयोक्ति मात्र हैं। छंद २०६ में पाँच स्थान का नाम देते हुए विषय अलंकार का उदाहरण रचित हुआ है। इसी प्रकार २०७ में परनाला तथा कर्णाटक का उल्लेख कर 'सुकुमार राजकुमारों को विकरार पहार' में दौड़ा कर विषमता लाई गई है। इसमें 'लै परनाला शिवा सरजा करनाटक लौं सब देस बिगूँचे।' पर यह तर्क है कि लौं=तक का प्रयोग कवि ने किस अर्थ में किया है, मर्यादा के

पार्थक्य या अभिविधि के संयुक्तता अर्थ में। इस छंदांश का अर्थ यह हुआ कि 'शिवाजी ने परनाला से लेकर कर्णाटक तक के सब देश विध्वंस कर दिए।' कर्णाटक कृष्णा नदी की घाटी से रासकुमारी तक फैला हुआ है। (भारत साम्राज्य का नया भूगोल, मौरिसन पृ० ११६) इसी नदी की दो सहायक नदियाँ वर्णा तथा हिरण्यकेशी के बीच में परनाला दुर्ग स्थित है। ये दोनों नदियाँ भी कृष्णा की प्रधान धारा के दक्षिण में हैं। प्रो० सरकार 'शिवाजी' के द्वितीय संस्करण पृ० २३७ पर लिखते हैं कि 'दक्षिण में शिवाजी' की शक्ति सन् १६७३ ई० में पन्हाला तथा सन् १६७५ ई० में कोल्हापुर और पोंडा विजय कर लेने से दृढता पूर्वक स्थापित हो गई। इस प्रकार उनके राज्य की सीमा सन १६७५ ई० में कोल्हापुर होकर पश्चिमी कर्णाटक या कनारा प्लेटो में दूर तक पहुँच गई थी। वास्तव में परनाला या पन्हाला पश्चिमी कर्णाटक की सीमा के भीतर है। इसलिए कवि कहता है कि शिवाजी ने पन्हाला दुर्ग लेकर कर्णाटक तक अपना राज्य फैलाया। यदि "तक" से कर्णाटक के विध्वंस होने का अर्थ भी लिया जाय तो वह भी ठीक है, क्योंकि पन्हाला उस प्रान्त के अन्तर्गत ही है। हाँ, समग्र कर्णाटक का अर्थ लिया जाय तो फिर सन् १६७७-८ ई० की प्रसिद्ध चढ़ाई का इस पद में उल्लेख समझना चाहिए, पर ऐसा समझने के लिए कोई विशेष कारण नहीं दिखाई पड़ता। शिवराज-भूषण में ग्रन्थ की समाप्ति का समय एक दोहे में दिया है। उसमें दिन, तिथि पक्ष मास तथ संवत सभी दिए हैं, जिसकी जाँच की जा सकती है। 'सुचि' (शब्द दो मास का द्योतक है—ज्येष्ठ तथा आषाढ़ का। सं० १७३० वि० अर्थात् सन १६७३ ई० में यह ग्रंथ समाप्त हुआ है, इसलिए कर्णाटक की चढ़ाई का उल्लेख नहीं हो सकता। केवल 'लौं' शब्द मात्र का एक अर्थ लेकर समय के दोहे को

अशुद्ध कहना अनुचित है जब कि दूसरा अर्थ सब प्रकार समीचीन है।

इस ग्रन्थ के रचनाकाल अर्थात् समाप्ति का दोहा भूषण ने इस प्रकार दिया है—

सुभ सत्रह सै तीस पर सुचि बदि तेरस भान।
भूषन शिवभूषन कियो पढ़ियौ सकल सुजान॥

अभी तक 'सुचि' शब्द का अर्थ न समझ कर, इस दोहे में महीना नहीं दिया गया है। ऐसा मान कर इस में दिए हुए समय की जाँच नहीं हुई थी और इससे कुछ लोग इस दोहे ही को भूषण-कृत नहीं मानते थे, पर यह हठ मात्र था। यह भूषणकृत ही है क्योंकि उनका उपनाम भी इसमें दिया हुआ है और समय भी जाँच में ठीक उतरता है। ज्येष्ठ कृष्ण १३ सं० १७३० को रविवार ही था। उस दिन शकाब्द का वैसाख बदी १३ सं० १५९५ और खृष्टाब्द का ४ मई सन् १६७३ ई० था। यह जाँच भारत-सरकार की ओर से मंदराज से प्रकाशित सहस्र वर्षीय बृहत् पंचांग देख कर की गई है और इसे काशी नागरी-प्रचारिणी सभा के खोज विभाग के निरीक्षक रायबहादुर बा० हीरालाल बी० ए० ने किया है।

छंद २१३ में पाँच स्थानों का उल्लेख है, जो बीजापुर तथा गोलकुन्डा राज्य में हैं। मिर्जा जयसिंह से परास्त होकर शिवाजी ने अपने पैंतीस दुर्गों में से तेईस दुर्ग दिए थे इसका भी इसमें उल्लेख किया गया है। छं० २४६ में विकल्प करते हुए भूषण जी कहते हैं कि चाहे इन सात स्थानों में जाओ या इन तीन सुलतानों के यहाँ जाओ, पर मन चाहा तभी मिलेगा जब शिवाजी को प्रसन्न करोगे। यह तो अवश्य ठीक है कि भूषण ने प्रायः भारत के सभी

प्रसिद्ध आश्रयदाताओं ही का इस पद में उल्लेख किया होगा, पर इन सब ने उनको आश्रय दिया हो, यह कहना अशुद्ध है। इनमें केवल तीन की प्रशंशा में इनके कुछ छंद पाए जाते हैं, अन्य के लिए वह भी नहीं। कुमाऊँ नरनाह का नाम तक न देकर उनके हाथियों की अवश्य प्रशंसा की गई हैं। जोधपुर-नरेश तथा दिल्लीश पर तो आक्षेप किए गये हैं।

शिवराजभूषण पद २२९ में लोहगढ़ दुर्ग का इस प्रकार उल्लेख है 'गौर गरबीले अरबीले राठवर गह्यो लोहगढ़ सिंहगढ़ हिम्मति हरषते। भूषन भनत तहाँ सरजा सिवा तैं चढ़ो राति कै सहारे ते अराति अमरषते'। इस पद का भाव है कि घमण्डी गौड़ तथा हठी राठौड़ ने बड़े साहस तथा प्रसन्नता से क्रमशः लोहगढ़ और सिंहगढ़ की अध्यक्षता ग्रहण कर ली था, पर फल अन्त में यही हुआ कि शत्रु पर क्रोध करके शिवाजी रात्रि के समय दोनों दुर्ग पर चढ़ गए अर्थात् विजय कर लिया। सिंहगढ़ विजय का इतिवृत्त प्रसिद्ध है और कई इतिहासों में उसका उल्लेख है। इस पर एक पोवाड़ भी लिखा हुआ प्राप्त है, पर लोहगढ़ विजय का वृत्त इतिहासों में विशेष रूप से नहीं मिलता। इसका वृत्तान्त न जानकर कुछ संपादकों ने इसका अर्थ "लोहा गह्यो" लगा लिया है। यह दुर्ग पहिले अहमदनगर के निजामशाही राज्य के अधीन था और इसमें प्रायः राजनैतिक कैदी रखे जाते थे। सन् १६४७ ई० में शिवाजी ने लोहगढ़, राजमाची आदि दुर्गों पर पहिली बार अधिकार कर लिया था जिसे सन् १६६५ ई० की संधि के समय मुग़ल सम्राट् को तेईस दुर्गों के साथ दे दिया था। सन् १६७० ई० में मुग़लों से पुनः युद्ध आरम्भ होने पर इस पर शिवाजी ने दूसरी बार अधिकार कर लिया था। सिंहगढ़ का मुगल दुर्गाध्यक्ष उदयभानु राठौड़ था और भूषण के अनुसार लोहगढ़ का अध्यक्ष कोई गौड़ राजपूत वीर

रहा होगा। प्रो० सर्कार ने 'शिवाजी' पृ० १८५ पर दिलेर खाँ के साथ हरिभानु तटा उदयभानु गौड़ के होने का उल्लेख किया है, जब वह सन् १६६५ ई० में पुरंधर दुर्ग घेरे हुए था। इसी घेरे में राजा नरसिंह गौड़ और राजसिंह गौड़ भी उपस्थित थे। राजा बिट्ठलदास गौड़ के भाई गिरिधरदास भी दक्षिण में नियुक्त थे और उन्हीं के भ्रातुष्पुत्र राजा मनोहरदास शिवाजी द्वारा सुपुर्द किए हुए तेईस दुर्गों में से एक माहुली दुर्ग के अध्यक्ष थे। इस प्रकार देखा जाता है कि उस समय कई गौड़ सर्दार दक्षिण में मौजूद थे और उन्हीं में से कोई एक लोहगढ़ का भी अध्यक्ष रहा होगा, जिससे जेधेशकावली के अनुसार सन् १६७० ई० में यह दुर्ग विजय किया गया था। ये दोनों दुर्ग पास पास हैं और शिवाजी द्वारा वे दोनों ही बार प्राय: एक ही समय में लिए गए थे, इसीसे कवि ने दोनों के विजय का एक साथ वर्णन किया है। सिंहगढ़-विजय में ताना जी की अभूतपूर्व वीरता के आगे इस दुर्ग के विजय की ख्याति मंदी पड़ गई, जिससे न इतिहासज्ञ ही ने और न कवि ने इस पर अधिक लिखा।

छं० २६१ में विलायत और पुर्तगाल के 'पेसकसें' भेजने का उल्लेख होने से कर्णाट सहम जाता है अर्थात् उस पर शिवाजी का अधिकार नहीं है। छेक एवं लाट अनुप्रास के उदाहरणों में भूषण जी ने शब्दों की पिच्चीकारी का अच्छा आदर्श उपस्थित किया है। इसमें एक स्थान पर भड़ोच का नाम भी आया है। इसमें सूरत के लूटे जाने पर वहाँ के निवासियों में क्या डर समाई थी, इसका वर्णन है। इस छं० ३५४ का भाव यह है कि 'शिवाजी ने दिल्ली की सेना को परास्त कर निश्शंक हो डंका बजाते दिन दहाड़े सूरत नगर लूट लिया, जिससे दुष्टों (वहाँ के निवासियों) को ऐसी डर हुई कि वे सोचने लगे कि अब भड़ोंच चले चलिए। आँखों से

आँसू गिराते हुए उन्होंने कष्ट से यही निश्चय किया कि रथ को ठेलो। इससे दिल्ली की सब दिशाओं में बड़ी भद्द हुई।' इसमें शिवाजी के या मराठों के भड़ोंच लूटने का गन्ध भी नहीं है। साथ ही भड़ोंच और सूरत केवल नर्मदा ही के इस पार उस पार नहीं हैं; प्रत्युत और एक नदी ताप्ती तथा एक पहाड़ सतपुड़ा भी बीच में है। पर इनके बीच में रहते हुए भी दोनों में केवल तीस पैंतीस मील की दूरी है। दो दो बार सूरत के लूटे जाने पर यदि भड़ोंच के निवासी डर भी जायँ तो कोई शंका की बात नहीं है। शिवाजी का समुद्री बेड़ा सारे मलाबार तट का दौरा लगाता था और ये दोनों स्थान समुद्री तट पर हैं। सन् १६७० ई० में 'शिवाजी ने सूरत की लूट से तीस सहस्र नई सेना और एक शक्तिशाली बेड़ा तैयार किया। अंतिम (अर्थात् बेड़े) के साथ इन्होंने गुजरात तट की ओर भड़ोंच तक जाने का रंग दिखलाया। मुग़लों ने सूरत की दो बार की लूट के समान भड़ोंच पर इस बार लूट की। मराठा चढ़ाई की आशंका करके जितनी हो सकी कुल सेना गुजरात में भेज दिया। शिवाजी यही चाहते थे और अब वे अपनी सेना-सहित खानदेश लूटने चले गए।' (पारसनीस किनकेड कृत 'ए हिस्टरी आव मराठा पीपुल' भाग १ पृ० २३५) अर्थात् सूरत की चढ़ाई के बाद ही भड़ोंच की चढ़ाई का भी शोर मच गया था।

अब शिवराज-भूषण ग्रन्थ में, भूषण की अन्य कृतियों में नहीं, आए हुए कुछ ऐतिहासिक व्यक्तियों की जीवन घटनाओं से मिलान कर यह विवेचना कर लेनी होगी कि कवि के दिए हुए रचना-काल से उन सब का सामंजस्य हो सकता है या नहीं। इस ग्रन्थ के रचनाकाल को आगे पीछे हटाने के लिए बहुत कुछ तर्क वितर्क हो चुका है; पर उनमें दो एक बातें ऐसी थीं जिनसे

उनका आधा महत्व निकल जाता है। प्रथम तो यही है कि जब तर्क शिवराजभूषण के रचनाकाल का हो रहा है तब इस ग्रन्थ के अतिरिक्त भूषण की अन्य रचनाओं को उद्धृत कर उसे अशुद्ध प्रमाणित करने का प्रयत्न किया गया है। यहाँ तक देखा गया है कि जब पाद—टिप्पणी में 'शिवराजभूषण पृ० १६१' लिखा है तब भूषण ग्रन्थावली उठा कर देखने से ज्ञात होता है कि उसके कई पृष्ट पहिले वह ग्रन्थ समाप्त हो चुका है और वह उद्धृत पद या पदांश बावनी या स्फुट का है। यह क्या है? इसका नामकरण न करना ही अच्छा है। दूसरे यह भी देखा जाता है कि जिस ग्रन्थ की रचना केवल किसी एक व्यक्ति की प्रशंसा में हुई है और जिसका नाम भी उस पद विशेष में दिया हुआ है, उसे छोड़ किसी अन्य पुरुष से उस ग्रन्थ के ऐसे पद में वर्णित घटना का संबन्ध स्थापित कर बराबर कुतर्क किया गया है। ऐसी बातों का कुछ उल्लेख आगे हुआ है।

ख़वास ख़ाँ

शिवराज-भूषण में खवास खाँ का चार बार उल्लेख इस प्रकार हुआ है:—

१—बैर कियो शिवजी सो खवास खाँ डौंडियै सैन बिजैपुर बाजी।
छं० २०६

२—धाक सों खाक बिजैपुर भो मुख आयगो खान खवास के फेना।
छं० २५४

३—लोगन सों भनि भूषन यों कहैं खान खवास कहा सिख दैहौ।
आवत देसन लेत सिवा सरजै मिलिहौ भिरिहौ कि भगैहौ॥

एदिल की सभा बोल उठी यों सलाह करौऽब कहाँ भजि जैहौ।
लीन्ह्यौ कहा लरि कै अफजल्ल कहा लरि कै तुमहू अब लैहौ॥
छं० २१२

४– उमड़ि कुड़ाल मैं खवास ख़ान आये भनि भूपन त्यों धाये शिवराज पूरे मन के।
छं० ३२८

इन चार छंदों में जिस खवास ख़ाँ का उल्लेख हुआ है उनमें उसके जीवन की एक प्रधान घटना का कुछ आभास मिलता है। अंतिम में वह केवल एक सेनापति मात्र है जो शिवाजी से युद्ध करने कुड़ाल तक आया था; पर अन्य तीन में उसका उल्लेख कुछ विशेषता लिए है। तीसरे पद में स्पष्ट ही एक युद्धीय काउंसिल बैठी हुई है, जिसका सभापति यही खवास ख़ाँ ज्ञात होता है। सभी उसके मुखापेक्षी हैं और उसकी सम्मति चाहते हैं। अपनी सम्मति देते हुए अन्य सभासद संधि का प्रस्ताव करते हैं और यह भी चुनौती देते हैं कि युद्ध करने से जो फल अफजल ख़ाँ को मिला था वही तुम्हें भी प्राप्त होगा। प्रथम छंदांश में 'खवास ख़ाँ शिवाजी से बैर कियो' भी उसकी 'बिजैपुर' में प्रधानता दिखलाता है। दूसरा छंदांश भी इसीका द्योतक है। एक बात यह भी है कि खवास ख़ाँ की यह प्रधानता अफजल खां के सन् १५५९ ई० में मारे जाने के बाद की होनी चाहिए। साथ ही इस ख़वास ख़ाँ ने कुडाल में आकर शिवाजी से लड़ने का प्रयत्न किया हो, ऐसी भी उसके जीवन की एक घटना होनी चाहिए।

बीजापुर का इतिहास देखने से यह ज्ञात होता है कि उस राज्य के दो प्रधान अमात्य ख़वास ख़ाँ नाम के हुये हैं, जो शिवाजी के समकालीन थे और दोनों ही की अमात्यता के अंत होने के पहिले अफ़जल ख़ाँ मारा जा चुका था। अब प्रथम ख़वास ख़ाँ

का साधारण परिचय दिया जाता है, जिसका वास्तव में इन छंदों में उल्लेख नहीं है। बीजापुर के सातवें सुलतान मुहम्मद आदिल शाह की सन् १६५६ ई० के नवम्बर में मृत्यु होने पर उसका पुत्र अली आदिल शाह तृतीय गद्दी पर बैठा। पुराने मन्त्री खान मुहम्मद के मारे जाने पर खवास खाँ मन्त्री हुआ और इसीने अफजल खाँ को सन् १६५६ ई० में शिवाजी को दमन करने के लिए भेजा था। इसके अनन्तर इख़लास खाँ ख़ानख़ानाँ बहलोल खाँ आदि प्रधान हुए। सन् १६७२ ई० के २४ नवम्बर को अली आदिल की मृत्यु हो गई, जिस पर अब्दुलकरीम तथा दूसरे ख़वास ख़ाँ ने प्रधानता के लिये झगड़ा किया। खवास ख़ाँ को मृत सुलतान ने अपने पुत्र सिकंदर आदिल शाह का अभिभावक भी नियुक्त किया था, जिससे यह मालूम होता है कि अली आदिल शाह का इस पर पहिले ही से अधिक विश्वास था। इसने सन् १६६६ ई० में शरजा खाँ के साथ शिवाजी तथा दिलेर खाँ से युद्ध किया था और परास्त हुआ था। इसके पहिले भी जब जयसिंह ने शिवाजी पर चढ़ाई की थी तब अली आदिल ने ख़वास खाँ को मुग़लों की सहायता के लिये शिवाजी पर भेजा था, पर कोंकण में पहुँचने पर एकाएक शिवाजी ने उस पर आक्रमण कर परास्त कर दिया था। सन् १६६२ ई० में शिवाजी ने कुडाल पर अधिकार कर लिया था पर उस पर पुनः उस समय बीजापुरी अधिकार हो गया जब शिवाजी मुगलों के सेनापति जयसिंह से लड़ रहे थे। इसके अनन्तर मराठों का फिर अली आदिल की मृत्यु पर उस पर अधिकार हुआ होगा। कुडाल के इस लेने देने में बीजापुर पक्ष का प्रधान सेनापति मुहम्मद इख़लास खाँ था जो ख़वास ख़ाँ का भाई था। इसी ख़वास खाँ के पिता इख़लास ख़ाँ ख़ानख़ानाँ बीजापुर के प्रधान मन्त्री भी रह चुके थे। इस प्रकार देखा जाता है कि इसी दूसरे खवास ख़ाँ का इन छंदों में उल्लेख हुआ है और

यह शिवराज-भूषण की रचना के बाद सन् १७७४ ई० के अंत में अफ-गान अब्दुल करीम के हाथ धोखे से मारा गया था।

इस प्रकार ऐतिहासिक अन्वेषण पर देखा जाता है कि खवास खाँ का उल्लेख शिवराज भूषण के रचनाकाल के अनुकूल ही है और उसके सत्य होने का प्रमाण है।

याकूत खाँ

शिवराज-भूषण के छं० ६३ में अफ़जल खाँ के मारे जाने का उल्लेख है। छंद यह है—

सिंह थरि जाने बिन जावली जंगल भठी,
　　हठी गज एदिल पठाय करि भटक्यौ।
भूषन भनत देखि भभरि भगाने सब,
　　हिम्मति हिये में धरि काहु वै न हटक्यौ॥
साहि के शिवाजी गाजी सरजा समत्थ महा,
　　मदगल अफ़जलै पंजा बल पटक्यौ।
ता बिगिरि ह्वै करि निकाम निज धाम कहै,
　　आकुत महावत सु आँकुस लै सटक्यौ॥

जावली तथा पार के पास शिवथरि नामक एक और ग्राम भी है। यहीं अफजल खाँ की सेना ठहरी हुई थी। स्यात् इसी ग्राम के नाम को भूषण ने बदल कर सिंहथरि रख दिया है। दोनों के केवल साम्य के कारण इतना लिख दिया गया है। इस छंद में एक ऐतिहासिक घटना का अलंकृत वर्णन है। सिंह रूपी शिवाजी ने अफ़ज़ल खाँ रूपी हाथी के भूल कर जंगल में आ जाने पर पंजा के बल पछाड़ दिया, जिससे आकूत रूपी महावत बेकार

होकर आंकुश लेकर भाग निकला । पंजा शब्द से उस शस्त्र की ध्वनि भी निकलती है जिसे बाघनख कहते हैं और जिससे शिवाजी ने अफ़ज़ल खां पर चोट किया था। यह घटना सं० १७१६ वि० की है। याकूत का महावत होने से केवल यही तात्पर्य है कि भूषण के अनुसार वह भी इस चढ़ाई में अफजल खाँ के साथ था। पं० रामचन्द्र गोविन्द भाटे महाशय ने माधुरी व० ८ खं० १ सं० ३ पृ० ५९०-३ पर 'शिवभारत' से कोई श्लोक उद्धृत कर दिखलाया है कि 'याकुतः' भी अफजल खाँ के साथ इस चढ़ाई में आया था । यह शंका उठाना व्यर्थ है क्योंकि अफजल के साथ कोई याकूत आया था और उसके मारे जाने पर वह भाग गया था, इसे तो भूषण जो स्पष्ट ही कह रहे हैं। अब यह देखना चाहिये की उस समय कोई ऐसे याकूत दुनियाँ में थे या नहीं जिसका इतिहास में पता लगता है।

ऐसे याकूत के उस समय होने या न होने से भी तथा बाद में कभी किसी याकूत के होने से शिवराज-भूषण के रचनाकाल पर कुछ भी असर नहीं पड़ता और उसका विचार उठाना पाठकों को भ्रम में डालना मात्र है क्योंकि उससे अफजल के मारे जाने से सम्बन्ध है, जिसका समय ध्रुव निश्चित है, वह इधर उधर कुछ भी नहीं हट सकता । यह शंका ही नहीं है, वाग्वितंडा मात्र है। यदि कोई याकूत उस समय न मिले तो अपने ऐतिहासिक ज्ञान की न्यूनता मानना अधिक सम्मत है, बजाय इसके कि यह कहा जाय कि भूषण ने भ्रम से यह नाम दिया है। पहिला ही ठीक हो सकता है क्योंकि 'शिवभारत' ग्रन्थ भी भूषण का समर्थन करता है। इस पर यह विवाद भी उठाना कि यह याकूत खाँ सीदी थी और यह पदवी जंजीरा के सीदी सम्भोल को सं० १७२७ ई० में दी गई, यह सब भी व्यर्थ है। सीदी शब्द केवल

हबशी अर्थात ऐबिसिनिअन होने का द्योतक है और ये लोग केवल जंजीरा ही में नहीं रहते थे; प्रत्युत् दक्षिण के सभी सुलतानों के दरबार में रहते थे। मलिक अंबर, आहँग खाँ, चीता खां आदि हब्शी ही थे।

२४ दिसम्बर सन् १६६५ ई० को शिवाजी तथा दिलेर खाँ और शरजा खां तथा खवास खां के बीच जो युद्ध हुआ था, उसमें बीजापुरी सेना के एक सेनाध्यक्ष, पन्द्रह अफसर और हजारों सैनिक मारे गये थे। इस सेनापति का नाम प्रो० सरकार ने शिवाजी के पृ० १४६ पर याकूत खां हब्शी दिया है। यही सन् १६५६ ई० का भगैल याकूत खां हो सकता है।

बहलोल खाँ

शिवराज-भूषण के जिन छंदों में बहलोलखाँ का उल्लेख है, उनके अंश यहाँ दिये जाते हैं।

१—अफजल की अगति, सासता की अपगति,
बहलोल की बिपति सों डर उमराव हैं। छं० ९६

२—बचैगा न समुहाने बहलोल खाँ अयाने
भूखन बखाने दिल आनि मेरा बरजा।
तुझसे सवाई तेरा भाई सलहेरि पास,
कैद किया साथ का न कोई बीर गरजा।
साहिन के साह उसी औरँग के लीन्हें गढ़,
जिसका तू चाकर और जिसका है परजा।
साहि का ललन दिल्ली दल का दलन,
अफ़जल का मलन सिवराज आया सरजा। छं० १६१

३—अफजल खान, रुस्तमै जमान, फत्ते खान कूटे,
लूटे जूटे ए उजीर बिजैपुर के।
अमर, सुजान, मोहकम, बहलोल खान,
खाँड़े, छाँडे, डाँडे उमराव दिलीसुर के। छं० २३९
४—मोलल्लहि जस नोलल्लरि बहलोलल्लिय धरि। छं० ३५६
५—सिवराज साहि-सुव खग्ग बल दलि अडोल बहलोल दल।
छं० ३५८

प्रथम छंदांश से यह ज्ञात होता है कि अफ़ज़ल खाँ के मारे जाने, शायस्ता खाँ की दुर्दशा होने तथा बहलोल खाँ पर आपत्ति का पहाड़ टूटने से सर्दारगण डर गये हैं और इसी से हज्ज करने का बहाना करके ही वे नदी के पार उतरते हैं। ४ थे और ५ वें छंदांशों से क्रमशः यही मालूम होता है कि बहलोल को पकड़ कर नया यश क्रय किया और बहलोल की सेना को दल डाला। इन तीनों ही से किसी खास बहलोल का परिचय नहीं मिलता, या यों कहा जाय कि जिस बहलोल का इन तीनों में उल्लेख है, वह कौन है, दिल्ली दरबार का सरदार है या दक्षिण के किसी सुलतान का यह स्पष्ट नहीं ज्ञात होता। ३ रे उद्धरण से यह ज्ञात होता है कि इसमें उल्लिखित बहलोल खाँ दिल्लीश्वर का सर्दार है। और उसे शिवाजी ने कैद कर उससे दण्ड लिया है। २ रा पूरा छंद बहलोल खाँ के विषय में कुछ और बातें भी बतलाता है। उससे मालूम होता है कि उसके भाई को शिवाजी ने सलहेरि के पास कैद किया था तथा वह औरंगजेब का सेवक और प्रजा है।

अब प्रश्न यह रह गया कि दिल्ली-सम्राट् के किसी सर्दार बहलोल खाँ की शिवाजी द्वारा दुर्दशा हुई थी या नहीं। यदि कोई ऐसा बहलोल न मिले तो क्या समझना चाहिए। एक सज्जन ने तो भूषण को इसे भ्रमवश दिल्ली का सेवक लिखना

समझ लिया है। ऐसा समझ लेना अनुचित है। बीजापुरी सर्दार बहलोल खाँ को लेकर अन्य लोग उसके युद्धों के संवत् देकर इस ग्रन्थ के निर्माणकाल को आगे पीछे हटा रहे हैं। वास्तव में सभा को पहिले मुग़ल दरबार ही के किसी बहलोल की खोज करना चाहिए था।

सन् १६७१ ई० में गुजरात के सूबेदार बहादुर खाँ तथा दिलेर खाँ दक्षिण भेजे गये थे। ये दोनों इखलास खाँ मियाना, राव अमर सिंह चन्द्रावत आदि सर्दारों को सल्हेर दुर्ग का घेरा क़ायम रखने के लिये छोड़कर अहमदनगर गये थे। सन् १६७२ ई० के जनवरी महीने में शिवाजी ने इस सेना को घेर लिया और घोर युद्ध के अनंतर इखलास खाँ, मुहकम सिंह आदि तीस सर्दार कैद हुए और राव अमरसिंह, कई अन्य अफसर तथा कई सहस्र सैनिक मारे गये। पीछे से धन देकर ये सर्दार छोड़ दिये गये थे। यह इखलास खाँ बीजापुर के पठान सर्दार अब्दुलक़ादिर बहलोल खाँ का पुत्र था और इसका नाम अबूमुहम्मद था। सन् १६६६ ई० के आरम्भ में यह बादशाही सेवा में चला आया था और इसे इखलास खाँ पदवी तथा पाँच हजारी मंसब मिला था। यह अब्दुल कादिर बहलोल खाँ बीजापुर का प्रधान अमात्य था और यह सन् १६६५ ई० में कर्णाटक से लौटने पर मर गया। इसके दो पुत्र और एक भ्रातुष्पुत्र था। अली आदिलशाह इस बहलोल से उसकी बारह सहस्र पठान सेना के कारण ईर्ष्या रखता था, इसलिए उसकी मृत्यु पर उसके पुत्रों में झगड़ा होने पर उनकी जागीर दबा ली थी। इस पर इसका प्रथम पुत्र दिल्ली चला गया और वहाँ का एक सर्दार हो गया। सभासद बखर के आधार पर मेसर्ज़ पारसनीस तथा किनकेड महाशयगण अपने मराठों के इतिहास भा० १ पृ० २३५ पर लिखते हैं कि 'इखलास खाँ के

एक सहकारी बहलोल खाँ ने भी इस युद्ध में योग दिया था।' भूषण भी किसी एक बहलोल खाँ के पकड़े जाने का उल्लेख करते हैं और अमरसिंह चन्द्रावत के मारे जाने तथा मुहकम सिंह आदि के पकड़े जाने के उल्लेख से इसी सल्हेर युद्ध ही से उनका तात्पर्य भी है।

पूर्वोक्त विचारों से यही निष्कर्ष निकलता है कि भूषण ने जिस बहलोल का वर्णन किया है वह मुग़ल सम्राट् का सेवक था तथा उसका भाई सल्हेरि युद्ध में पकड़ा गया था जिससे उस पर विपत्ति भी पड़ी थी।

बीजापुर के जिस बहलोल खाँ के सन् १६७३ तथा १६७४ ई० के युद्धों का वर्णन दोनों पक्ष के तर्ककर्ताओं ने किया है, उसका नाम अब्दुर्रहीम था और उसकी बंकापुर में जागीर थी। उसका भाई खिज्र खाँ था जो हंबीर राव से युद्ध करते समय मारा गया था। बहलोल फारसी शब्द है, जिसका अर्थ किसी जाति का सर्दार या पेशवा है। यह पदवी प्रायः पठानों ही को मिलती थी और दक्षिण ही में इसका प्रयोग होता था। यह भी उस समय नियम सा था कि एक बड़ी उपाधि एक ही दरबार में एक से अधिक सज्जनों को एक साथ नहीं प्रदान की जाती थी। तब इस प्रकार दो बहलोल खाँ के समसामयिक होने का कारण यही ज्ञात होता है कि सन् १६६६ ई० में एक बहलोल खाँ की मृत्यु पर उसके एक पुत्र को स्यात् छोटे ही को वही पदवी दी गई और जब वह भी अपने भाई के समान जागीरों के कारण बीजापुर दरबार से क्रुद्ध होकर दिल्ली चला गया तब दूसरे अब्दुर्रहीम को यह पदवी दी गई। इधर इखलास खाँ के भाई भी उत्तर में अपनी उसी पदवी से पुकारे जाते रहे होंगे।

———

मुहकमसिंह

अमर सुजान मुहकम बहलोल खान खाँड़े
छाड़े, डाँड़े, उमराव दिलीसुर के। छं० २३९

लिय धरि मुहकमसिंह कहँ अरु किसोर नृप कुम्भ। छं० ३५६

उपर्युक्त छंदांशों में एक ही मुहकम सिंह का उल्लेख है और दोनों ही में उसका पकड़ा जाना वर्णित है। इन्हें कैद करके छोड़ने वाले शिवाजी ही हैं इसमें कुछ भी शंका नहीं है, इसलिये किसी पक्ष के विद्वान को ऐसा ही मुहकमसिंह खोज निकालना चाहिए जिसे शिवाजी ने युद्ध में, मुख्य कर सल्हेरि युद्ध में, कैद किया हो और दंड लेकर छोड़ा हो। भूषण ने शिवराज-भूषण चाहे जब भी लिखा हो, पर यदि उसने सत्य घटनाओं का इस ग्रन्थ में समावेश किया है तो ऐसे ही ऐतिहासिक मुहकमसिंह को खोजना चाहिये। एक सज्जन ने ग्रांट डफ से एक उद्धरण देकर एक मुहकमसिंह का उल्लेख करते हुये उस घटना का सं० १७५२ वि० (सन् १६९५ ई) में होना दिखलाते हुए शिवराज-भूषण का रचना-काल आगे की ओर खींचा है। पर यह तो विचार लेना चाहिये था कि क्या इस जाट तथा भरतपुर के राजकुमार मुहकमसिंह की जिन मराठों ने दुर्दशा की थी उनके सेनापति क्या शिवाजी थे। क्या शिवाजी सन् १६९५ ई० में जीवित भी थे? यदि वे नहीं जीवित थे तो इन मुहकमसिंह का उल्लेख करना व्यर्थ है। भूषण जी या कोई भी यदि आज इस घटना का इतिहास लिखने बैठे तो वह शिवाजी द्वारा ही पकड़े जाने वाले मुहकमसिंह का उल्लेख करेगा, बाद के अनेकों मुहकमसिंह से उससे कुछ भी सम्बन्ध नहीं मिलावेगा।

औरंगजेब तथा शिवाजी के समकालीन कई मुहकमसिंह हुए हैं जिनमें चार का तो हमें इस समय ध्यान है, और भी हो सकते हैं। एक मुहकमसिंह हाड़ा हैं, जो सन् १६५३ ई० में धौलपुर में मारे गए थे इन्हीं के भाई किशोर सिंह कोटा के राजा हुए जिनका परिचय परिशिष्ट च में देखिये। दूसरे राव अमर सिंह चंद्रावत के पुत्र थे। जिनके विषय में आगे विचार किया जायगा। तीसरे मुहकमसिंह जाट-नरेश चूड़ामणि के पुत्र थे। चूड़ामणि ने सं० १७४५ के बाद मुग़लों की अधीनता स्वीकार की थी, इसलिये उसी समय या बाद को उसका राजकुमार बादशाही सेना में नियुक्त होकर दक्षिण आया होगा। यह मुहकमसिंह सन् १७२२ ई० में गद्दी पर बैठा था। चौथे मुहकमसिंह खत्री थे जिन्हें भी राजा का ख़िताब मिला था और यह भी फ़र्रुख़सियर बादशाह के समय तक दक्षिण में बहुत दिनों तक नियुक्त रहे। इसकी जीवनी के लिए काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित मआसिरुल् उमरा प्रथम भाग का निबन्ध ५८ देखिए।

इन पूर्वोक्त चारों मुहकमसिंह में केवल एक चंद्रावत मुहकम सिंह ही ऐसे हैं जिन्हें शिवाजी ने सल्हेरि युद्ध में कैद किया था और बाद में जिन्हें दंड देने पर छुटकारा मिला था। मआसिरुल् उमरा फ़ा० भा० २ पृ० १४२-४ पर राव दुरगा सिसोदिया के पौत्र राव अमर सिंह के सल्हेरि युद्ध में मारे जाने तथा राव मुहकम सिंह के कैद होने का विवरण यों दिया गया है। 'इसके अनंतर वह दक्षिण में नियुक्त हुआ और मिर्जा राजा जयसिंह के साथ अच्छा कार्य किया। ग्यारहवें वर्ष में यह सल्हेरि दुर्ग के नीचे शत्रु-सेना के आक्रमण करने पर मारा गया और उसका पुत्र मुहकमसिंह कैद हो गया। कुछ समय बाद इसे दण्ड देने पर

छुटकारा मिला, तब यह दक्षिण के सूबेदार बहादुर खाँ के पास आया और इसे राव की पदवी तथा मंसब मिला। बहु दिनों तक दक्षिण में कार्य करता रहा। ३३ वें वर्ष में मुहकमसिंह का पुत्र गोपाल सिंह अपने देश रामपुर से आकर अपने पैतृक सेवा में नियुक्त हुआ।' औरंगजेब का ग्यारहवाँ जलूसी वर्ष फालगुन सुदि २ सं० १७२४ वि० (४ फरवरी सन् १६६८ ई०) से आरंभ होकर माघ सु० २ सं० १७२५ वि० (२३ जनवरी सन १६६९ ई०) तक रहा। इसी बीच की यह पूर्वोक्त घटना है। मूतानेणसी की ख्यात (पृ० ९७-१००) तथा ब्लॉकमैन कृत आईन अकबरी पृ० ४१७-८ पर इन चंद्रावतों के विषय में लेख है। काशी नागरी प्रचारिणी पत्रिका सं० १९८३ पृ० ४११-४४७ पर एक बड़ा लेख इन पर है जो शिलालेखों तथा ख्यातों के आधार पर लिखा गया है। प्रो० सरकार ने इस युद्ध का वर्णन 'शिवाजी' पृ० २१७ पर फारसी आदि कई भाषाओं के इतिहासों के आधार पर किया है। पारसनीस किनकेड कृत 'मराठों के इतिहास' भा० १ पृ० २३५ पर भी इस घटना का वर्णन है। इतने ग्रंथों का उल्लेख इस लिए कर दिया गया है कि जिन पाठकों को ऐतिहासिक मनन का शौक हो वे इन चंद्रावतों के विषय में विशेष ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

सफजंग

शिवराज भूषण में इस शब्द का केवल एक बार प्रयोग हुआ है। वह इस प्रकार है।

लुट्यो खानदौराँ जोरावर सफजंग अरु लट्यो मार तलब खाँ मनहु अमाल है। छं० १०३

इस छंदांश के भी प्रथम अंश का दो प्रकार से अर्थ हो सकता है अर्थात् (१) शक्तिमान खानदौराँ को युद्धव्यूह में लूट लिया और (२) खानदौराँ, जोरावर तथा सफजंग तीनों को लूटा। तात्पर्य कि लूटने वाले एक शिवाजी ही हैं, पर लुने जाने वाले एक या तीन हो सकते हैं। एक सज्जन ने इस सफजंग को सफदरजंग का छोटा रूप माना है तथा बाजीराव पेशवा और अवध के द्वितीय नावाब मंसूर अली खाँ सफदर जंग के बीच युद्ध का इसमें उल्लेख बतलाया है। पर भूषण ने इस ग्रंथ में केवल शिवाजी ही का यश गाया है इससे इस प्रकार का कथन उपेक्षणीय है। इस में भी अन्य जिन घटनाओं का उल्लेख है वह सब शिवाजी ही के समय की है तथा भूषण साफ साफ पुकार कर कह रहे हैं कि खानदौराँ, शायस्ता खाँ आदि उमराव के साथ औरंगजेब घोड़े हाथी इरसाल' कर (भेज) रहा है। अब केवल यह देखना है कि शिवाजी के समय कोई सर्दार इस नाम का दक्षिण आया था या नहीं। हाँ, एक बात और पहिले ही विचार लेना चाहिये। क्या केवल 'सफजंग' नाम हो सकता है ? जोरावर नाम भी हो सकता है तथा विशेषण भी। इसका अर्थ शक्तिशाली है और इसमें खाँ आदि लगाकर नाम बना सकते हैं जैसे जोरावर खाँ ; पर इसी प्रकार 'सफजंग' में खाँ, दौला आदि लगा कर नाम नहीं बनाया जा सकता। मुसलमानी नाम विशेषतः सार्थक होते हैं। सफ़जंग दो शब्द मिलकर बना है। सफ अरबी शब्द है जिसका अर्थ क़तार, परा, पंक्ति, लाइन है। जंग का अर्थ युद्ध होता है। अर्थात् दोनों मिलकर अर्थ होता है युद्ध की कतार, व्यूह। तात्पर्य यह कि सफ़जंग पाठ रहते हुए किसी अमीर का नाम नहीं माना जा सकता। यदि इन दोनों शब्दों के बीच 'दर' के समान शब्द मिलने तथा लोप होने की बात माननीय हो सके तब यह नाम

बन सकता है। इस सफजंग को यदि सैफजंग का बिगड़ा रूप मानें तब यह अवश्य नाम हो सकता है। सैफ फारसी शब्द है जिसका अर्थ तलवार है। सैफ खाँ, सैफुद्दौला, सैफजंग आदि उपाधियाँ बराबर मुसलमानी दरबारों में वितरित होती रहती थीं। ८ वें जलूसी वर्ष में शाहज़ादा मुअज्जम के साथ एक सफशिकन खाँ और एक सैफ खाँ दक्षिण आये थे। मआसिरे-आलमगीरी में औरंगज़ेब के १३ वें जलूसी वर्ष (१६६ ई०) में का हाजी सैफ खाँ के भी दक्षिण के दीवानी पद पर नियुक्त होने का उल्लेख है; पर यह उस पद पर बहुत ही थोड़े दिन रहा था। किसी अन्य सैफ खाँ, सैफजंग आदि का या किसी जोरावर खाँ, सिंह आदि का शिवाजी से युद्ध करने के लिये दक्षिण की चढ़ाई पर नियुक्त होने का अभी तक किसी इतिहास में उल्लेख नहीं मिला है।

वास्तव में ये दोनों—सैफजंग तथा जोरावर शब्द भूषण द्वारा नाम के रूप में नहीं प्रयुक्त हुए हैं, प्रत्युत वाक्य-योजना में विशेष जोर डालने के लिए लाये गये हैं। उनका भाव यह है के पहिले तो खानेदौराँ ही शक्तिशाली है और दूसरे उसको सरे मैदान उसकी सेना के सामने ही शिवाजी ने लूट लिया था। सफजंग शब्द का इस भाव में हिंदी कविता में प्रयोग भी होता है।

तलब खाँ

सफजंग की विवेचना करते हुए जो छंदांश उद्धृत किया गया है उसका दूसरा अंश 'अरु लह्यो मार तलब खाँ मनहु अमाल है'

है इसका अर्थ होगा कि 'और तलब खाँ ने मार पाई, मानों मनमाना है।' इस पद्यांश का यह पाठांतर भी मिलता है कि 'लह्यो मार' के स्थान पर 'लूट्यो कार' होना चाहिये जिससे केवल 'तलब खाँ' 'कार तलब खाँ' हो जाते हैं। अब पहिले पूरा छन्द देकर उस पर विचार किया जायगा।

लूट्यो खानदौरां जोरावर सफजंग अरु,
लह्यो मार तलब खाँ मनहु अमाल है।
भूषन भनत लूट्यो पूना में सइस्त खान
गढ़न में लूट्यो त्यों गढ़ोरन को जाल है॥
हेरि हेरिकूटि सलहेरि बीच सरदार,
घेरि घेरि लूट्यो सब कटक कराल है।
मानो हय हाथी उमराव करि साथी अव-
रंग डरि शिवाजी पै भेजत रिसाल है॥

भूषण ने इसे हेतूत्प्रेक्षा उदाहरण के लिये बनाया है। जो वास्तव में जिस वस्तु का हेतु नहीं है उसे उसका हेतु मानना हेतूत्प्रेक्षा है। इसके दो भेद हैं-सिद्ध-विषया और असिद्ध-विषया। इस उदाहरण में सिद्ध-विषया हेतूत्प्रेक्षा है। शिवाजी मुगल दरबार में भेजे गये सरदारों की सेना तथा मुगलों के अधीनस्थ दुर्गों के अध्यक्षों के घोड़े, हाथी, धन, सामान आदि लूट लेते थे, इस पर कवि उत्प्रेक्षा करता है कि मानो औरंगजेब डर कर इन घोड़े हाथी आदि को सर्दारों का सेना तथा मुगलों के अधीनस्थ के रूप में भेजता है। कवि ने इसीसे 'लूट्यो' शब्द ही को प्रधानता दी है; क्योंकि उसीसे उसकी उत्प्रेक्षा सिद्ध होती थे। तलब खाँ के मार पाने से तथा शिवाजी के उसका प्राण लेने से कवि का भाव नहीं बनता, प्रत्युत् बिगड़ता है। वाक्य-योजना से

भी ऐसा ही ज्ञात होता है । प्रथम तीन पंक्तियों में जितनी क्रियाएँ आई हैं उन सब का, एक लह्यो को छोड़ कर, कर्ता एक है। यह कर्ता अर्थात् लूटने वाले शिवाजी हैं। प्रथम पंक्ति के पूर्वार्ध का कर्त्ता, लह्यो पाठ रहने पर, उत्तरार्ध में करण हो जाता है। इसके बाद वह पुनः कर्ता हो जाता है। यदि दूसरा पाठ 'लूट्यो कार' लिया जाय तो वाक्य-योजना का यह शैथिल्य नहीं रह जाता और इस पंक्ति का अर्थ भी ठीक ठीक बैठ जाता है। छन्द भर में सभी के लूटने की जो कवि ने प्रधानता रखी है वह भी बनी रह जाती है।

तलब अरबी शब्द है जिसका अर्थ याचना या वेतन है। केवल तलब खाँ वेतन सिंह के समान निरर्थक है। कारतलब खाँ सार्थक हो जाता है और इस नाम के एक मुगल सरदार का इतिहासों से भी पता लगता है, जो शिवाजी के समय में था और जिसे इन्होंने लूटा था। बाद के हजारों तलब खाँ से भूषण के इस छन्द से कुछ भी प्रयोजन नहीं। शिवाजी की मृत्यु के बाद अन्य मराठी सैनिकों द्वारा लुटे-पिटे तलब खाँ को भूषण किस प्रकार शिवाजी द्वारा पिटा हुआ बयान कर देंगे, यह विचार में भी नहीं आता।

अस्तु, हमारे विचार से 'लूट्यो कार' पाठ शुद्ध है चाहे वह प्राचीन प्रति में मिला हो या न मिला हो। कारतलब खाँ का परिचय परिशिष्ट च में देखिये।

बखतबुलंद

बासव से बिसरत बिक्रम की कहाँ चली,
विक्रम लखत बीर बखत बिलंद के।

जागे तेजबृंद शिवाजी नरिन्द मसनन्द माल-

मकरन्द कुलचंद साहिनन्द के (छ० ११०)

इस पद में 'बखत बिलदशब्द' आया है, जो फारसी शब्द 'बुलंद बख्त' का बिगड़ा रूप है। इसका अर्थ ऊँचे इकबाल वाला; अतीव भाग्यवान है। मुसलमानी दरबारों में इस प्रकार की उपाधियाँ बादशाहों तथा शाहजादों के लिए बराबर प्रयुक्त होती रही है। शाहजहाँ नामा में लिखा है कि दारा शिकोह को 'शाहबुलंद इकबाल' की उपाधि मिली थी और इतिहास में केवल उसी उपाधि से उसका कई बार उल्लेख किया गया है। सन् १६८६ ई० में देवगढ़ के एक गोंड राजा को मुसलमान होने पर औरंगजेब ने बुलंद बख्त की उपाधि दी थी—परन्तु उसने सन् १६९९ ई० में पुनः मुसलमानी धर्म छोड़ दिया, जिससे क्रुद्ध होकर बादशाह ने उसकी पदवी 'नगूनबख्त' अर्थात् अभागा में बदल दी थी। एक सज्जन का कथन है कि इसी गोंड राजा की विक्रम का इस पद में वर्णन है। 'सवाई सी पदवी का न प्रयोग करने से कवि भूषण को राष्ट्रवादी कहने वाले के द्वारा यह कथन कि मुसलमान हो जाने के कारण बादशाह द्वारा दी गई बुलंद बख्त की उपाधि-प्राप्त इस गोंड म्लेच्छ का इस छंद में उसी कवि ने उल्लेख किया है या उस उपाधि का अनुकरण किया है, अनर्गल कथन मात्र है। भूषण ने स्वयं तथा उनके पूर्ववर्ती कवियों ने इस शब्द का विशेषण रूप में प्रयोग किया है।

शिवराज-भूषण में भूषण ने छत्रपति महाराज शिवाजी का यश-वर्णन किया है यह प्रत्येक काव्यप्रेमी तथा काव्य-मर्मज्ञ समझता है। धर्मद्रोही गोंड की पदवी का शिवाजी के यश-वर्णन में कहे गये इस छंद में उल्लेख होना कहना हठधर्मी मात्र है। इस छंद की द्वितीय पंक्ति में भी स्पष्टतः शिवाजी, उनके पिता तथा

पितामह का नाम दिया हुआ है और कवि केवल यही दिखलाता है कि शिवाजी के विक्रम को देखकर शत्रु-स्त्रियाँ रोती हैं। तात्पर्य यह कि बखत बुलंद शिवाजी का विशेषण मात्र है। वह उनका या किसी अन्य का नाम नहीं है।

अन्य ऐतिहासिक पुरुषगण

शिवराज-भूषण में शिवाजी के जिन प्रतिद्वंद्वी राजाओं तथा सेनानियों का उल्लेख हुआ है उनमें कुछ पर शंका उठाई गई थी जिससे उन पर कुछ विशेष रूप में लिखा जा चुका है और अब बचे हुए अन्य सर्दारों के विषय में साधारणतः यहाँ विचार किया जाएगा। मुगल दरबार से आए हुए राजाओं तथा सर्दारों में शायस्ता खाँ, महाराज जसवंतसिंह, राव भाऊसिंह हाड़ा, राव कर्णसिंह राठौर, राव अमरसिंह, राजा सुजानसिंह, बहादुर खाँ, खानदौरा तथा नासिरी खाँ का नाम उल्लिखित हुआ है। बीजापुर के सर्दारों में रूस्तमेजमाँ और फतेह खाँ का नाम आया है। सन् १६६३ ई० में शायस्ता खाँ की दुर्गति हुई थी। महाराज जसवंतसिंह शाहजादा मुअज्जम के साथ आए थे। १६६४ ई० में यह तथा भाऊसिंह सिंहगढ़ घेर कर भी उसे न ले सके तथा महाराज जसवंतसिंह सन् १६६५ ई० में उत्तर लौट गए। राव अमरसिंह सन १६७१ ई० में मारे गए तथा इसी वर्ष सुजान सिंह मर गए। बहादुर खाँ तथा दिलेर खाँ की अधीनस्थ सेना सल्हेरि में सन् १६७१ ई० में ऐसी हारी कि वे पूना आदि विजय किए हुए सब स्थानों को छोड़ कर मुगल साम्राज्य की सीमा में लौट गए। परिशिष्ट च में पूर्वोक्त सभी व्यक्तियों का संक्षिप्त

परिचय दिया गया है, जिससे यह ज्ञात हो जाता है कि सं० १६३० वि० के ज्येष्ठ कृ० १३ (४ मई सन् १६७३ ई०) के पहिले इन सत्र पर शिवाजी ने छोटी-बड़ी विजय प्राप्त कर ली थी और इनका इस ग्रन्थ में उल्लेख होने से किसी प्रकार को इस ग्रन्थ के निर्माणकाल के दोहे में दिए समय में आपत्ति नहीं होती।

इस प्रकार इस कुल विवेचना का यही निष्कर्ष निकलता है कि इस ग्रन्थ को समाप्ति सं० १७३० वि० ही के ज्येष्ठ कृष्ण १३ रविवार को हुई थी जैसा कि ग्रंथकार ने स्वयं एक दोहे में लिख दिया है। अब प्रश्न यह है कि इस ग्रन्थ का आरंभ कब हुआ था। जैसा कि कवि-परिचय में दिखलाया गया है, भूषणजी सन् १६६४ ही के लगभग शिवाजी के दरबार में आए थे। दरबार आने के अनंतर कुछ समय तक वे 'शिव-चरित' लिख रहे थे, जिसके बाद उन्होंने इस अलंकारमय ग्रन्थ को अपने नायक के चरित्र से भूषित करने का विचार निश्चित किया होगा। ग्रंथ बनाने का निश्चय कर उन्होंने उपमा से आरंभ करने का कारण भी दे दिया है। इन बातों से यह भी स्पष्टतया ज्ञात होता है कि इन्होंने यह ग्रन्थ आरंभ से अंत तक क्रमशः बनाया है। हाँ, यह हो सकता है कि पहिले के बनाए हुए किसी पद में किसी अलंकार को प्रधान देखकर उसे उदाहरण में इस ग्रंथ में स्थान दे दिया हो, पर यह ग्रंथ निश्चित विचार के अनुसार आरंभ करके लिखा गया है। प्रत्येक अलंकार अपने उदाहरण में इतनी स्पष्टता से दिया गया है तथा कहीं कहीं एक ही छंद में वह कई बार आया भी है, जिससे इस कथन का समर्थन ही होता है।

ग्रंथारंभ के विषय में विवेचन करते हुए एक सज्जन ने निर्माणकाल के दोहे को देकर इस प्रकार लिखा है कि 'इस

दोहे के अनुसार ग्रंथ-रचना-काल आषाढ़ बदी १३ रविवार सं० १७३० को ठहरता है। शिवाजी महाराज का राज्याभिषेक जेठ सुदी १३ सं० १७३० को हुआ। दक्षिण में महीने का अंत अमावास्या को माना जाता है। इस हिसाब से राज्याभिषेक के पूरे डेढ़ महीने बाद यह ग्रन्थ समाप्त हुआ। इससे यह अनुमान सहज ही में किया जा सकता है कि भूषण ने राज्याभिषेक के दिन ग्रन्थ का आरंभ किया होगा और डेढ़ महीना में उसे समाप्त कर लेना भूषण ऐसे प्रतिभाशाली कवि के लिए कोई कठिन बात नहीं हैं'। उद्धरण में जो दो तिथियाँ दी हुई हैं वे दोनों अशुद्ध हैं और उनके आधार पर किया गया सहज अनुमान भी बिलकुल निराधार है। इसके समर्थन में भी जो कवि की आशुकविता की प्रशंसा की गई है वह भी वास्तविक बात से बहुत दूर जा पड़ी है।

जैसा ऊपर लिखा जा चुका है, ग्रंथ-समाप्ति का महीना ज्येष्ठ है, आषाढ़ नहीं है और शिवाजी के राज्यभिषेक का संवत् १७३१ वि० है। इस प्रकार यह ग्रंथ शिवाजी के रज्याभिषेक के डेढ़ महीना बाद नहीं, प्रत्युत् एक वर्ष पंदरह दिन पहिले ही समाप्त हो चुका था। भूषण जी दीर्घजीवी तथा प्रतिभाशाली कवि थे, परन्तु उनकी प्राप्त कविता से यही देखा जाता है कि उन्होंने बहुत कम कविता की है। नवरत्न के एक अन्य कवि बिहारी लाल जी के समान ही इन्होंने भी बहुत थोड़ी कविता की है। यदि भूषण जी का कविताकाल केवल पचास वर्ष माना जाय तब भी यदि वे फी महीने एक छंद बनाते तो छ सौ छंद इनके नाम के मिलते। इस संग्रह में केवल ५०६ छंद संग्रहीत हैं। अप्राप्य ग्रन्थों में केवल एक 'भूषण हजारा' ग्रंथ में एक सहस्र पद होने की आशा की जाती है। अन्य दो को यदि शिवराज

भूषण के परिमाण के ग्रन्थ मानें तो भी सब मिलाकर ढाई सहस्र से अधिक इनके पद के मिलने की आशा भी नहीं है। इस हिसाब से इनकी रचना का औसत फी साल पचास पद का आता है। इस हिसाब से तीन सौ बयासी पद के ग्रन्थ को बनाने में इन्हें कम से कम सात वर्ष लगने चाहिए। अर्थात् सं० १७२३ वि० के लगभग इन्होंने इस ग्रन्थ में हाथ लगाया होगा।

क्या भूषण जी में आशुकवित्वशक्ति नहीं थी? क्या वे आलसी थे? आदि प्रश्न उठ सकते हैं। इसलिए संक्षेप ही में इस पर यहाँ विचार करना आवश्यक है। सभी भाषाओं के साहित्य में यह एक नियम सा देखा जाता है कि स्फुट काव्य के लेखकों की छंद-संख्या प्रबंधकाव्य के निर्माताओं की छंद-संख्या से कभी नहीं बढ़ पाई है। हर प्रकार के समान दो कवियों की छंद-संख्या देखने से जिनमें एक प्रबन्ध काव्य- लेखक हो और एक स्फुट पदों का निर्माता हो, यह अधिक स्पष्ट होगा। दोनों प्रकार की रचना में समानरूपेण कुशल एक ही कवि की कृति देखने से यह अधिक-तर स्पष्ट हो जाएगा। अब दृष्टांत में अपनी ही भाषा के कुछ कवियों को लीजिए। इस साहित्य के नवरत्न कवियों की रचना को देखिए। सूर, शशि, चंद ने सागर ही बना डाले हैं। इनके प्रबन्ध-काव्य कितने विशद हैं। केशवाचार्य की छंद-संख्या भी उनके प्रबंध-काव्यों ही से बढ़ती है। भूषण तथा बिहारी कोरे स्फुट पद-निर्मायक थे। देव जी के जितने ग्रन्थ मिलते हैं, उन सब में से वे छंद, जो कई ग्रन्थों में मिलते हैं, अलग कर छंद-संख्या निकाली जाय तो वह भी प्रबंध-काव्य लेखकों की छंद-संख्या की तुलना नहीं कर सकेगी। सुकवि मतिराम की छंद-संख्या भी विशेष नहीं है। भारतेंदु जी ने साहित्य के सभी अंगों की ओर ध्यान दिया है और इन सब पूर्वोक्त महाकवियों से उनमें यह

भी विशेषता अधिक थी कि वे अल्पजीवी थे। अब गोस्वामी तुलसीदास को लीजिये जिन्होंने प्रबंध-काव्य भी लिखे हैं और स्फुट कविता भी की है। इनकी ऐसी दोनों प्रकार की रचनाओं की छंद-संख्या की कोइ तुलना ही नहीं है।

अस्तु, तात्पर्य यही है कि प्रबन्ध-काव्य लिखने में सब से बड़ा सुभीता यह है कि हृदय एक ओर लगा रहता है और उसमें स्फूर्ति लाने के लिए विशेष प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती, जिसकी स्फुट काव्य के लिए पद पद पर आवश्यकता होती है। यह मानव प्रकृति के अनुकूल ही है।

ऊपर लिखा जा चुका है कि इस ग्रन्थ की छंद-संख्या के अनुसार भूषण को इसकी रचना में सात वर्ष लगे होंगे, पर जैसी अभी विवेचना की गई है उससे यह भी विचारणीय है कि इस ग्रन्थ के कुछ छंद इस हिसाब के बाहर पड़ते हैं। आरंभ के राजवंश, कवि, दुर्ग आदि पर रची कविता वर्णनात्मक है, सौ के ऊपर दोहे पारिभाषिक मात्र हैं और अंत के बारह पद भी अलंकार-सूची, आशीर्वाद आदि हैं। इस प्रकार डेढ़ सौ पद ऐसे हैं जिनके बनाने में स्फुट छंद के बनाने के बीच का अवकाश ही अलं है, इसलिए तीन वर्ष निकाले जा सकते हैं। और ग्रन्थ का आरंभ इस हिसाब से सं० १७२७ वि० का ज्येष्ठ मास हो सकता है, पर वास्तव में ऐसा नहीं हुआ है।

पूर्वोक्त-कथन आगे की विचार-प्रणाली पर अवलंबित है। सं० १७३० वि० के पहिले तथा रायगढ़ राजधानी होने के बाद शिवाजी की जीवनी में एक ही घटना ऐसी है, जिसका प्रभाव इन महाराज के प्रत्येक प्रजा तथा आश्रित पर अभूतपूर्व रहा होगा। शिवाजी के दिल्लीगमन के अनंतर उनके कैद होने के

समाचार से जितना इनके देश में शोक छाया था वह एकाएक इनके पूना में आ उपस्थित होने पर हर्षातिरेक में बदल गया होगा, यह प्रत्येक स्वदेशप्रेमी विचार कर सकता है। भूषण जी ने, जो दो-तीन वर्ष पहिले से शिव-चरित लिख रहे थे, इस सुअवसर को ग्रन्थ का आरम्भ करने के लिए बहुत ही उपयुक्त समझा और इसी घटना को उन्होंने प्रथम अलङ्कार में स्थान दिया। बीच में सं० १७२३ से सं० १७२७ तक प्रायः तीन वर्ष से कुछ ऊपर युद्ध आदि के बदले शिवाजी राज्य के शांतिस्थापन में लगे थे, इससे भूषण की वीररससिक्त प्रतिभा तथा रौद्र कवित्वशक्ति भी शांति का उपभोग करने लगी होगी। इसके अनन्तर पुनः रणस्थल के द्वन्द्व मचने पर इसे इन्होंने समाप्त किया होगा।

भूषण जी ग्रन्थ-निर्माण के प्रेमी नहीं थे। वे किसी कार्य को लेकर बैठने वाले नहीं थे। यही कारण है कि इस ग्रन्थ में यदि उन्होंने प्रधान अलंकार दिया है तो उसके भेद का पता नहीं है, एक भेद है तो अन्य नहीं है। अर्थात् देर होते देख उन्होंने इस ग्रन्थ को समाप्त कर ही डाला और स्यात् स्वदेश लौट गये।

इस ग्रन्थ का नामकरण बहुत ही अच्छा हुआ है। नायक, कवि तथा विषय सभी का यह द्योतक हो गया है। इस ग्रन्थ की आलोचना आगे की जाएगी।

शिवाबावनी—यह एक संग्रह-ग्रन्थ है जिसमें उसके नाम के अनुसार शिवाजी की प्रशंसा के बावन छंद संगृहीत हैं। रायबहादुर पं० श्यामबिहारी मिश्र द्वारा संपादित भूषण-ग्रन्थावली में दिये हुए इस संग्रह के कुछ छंद विचारणीय हैं। उसका १४ वाँ कवित्त औरंगजेब की निन्दा में है और उससे शिवाजी से कोई सम्बन्ध भी नहीं है। उस संग्रह का तीसरा कवित्त

सरदार के शृंगार-संग्रह में गंग कवि के नाम से दिया हुआ है। आठवाँ कवित्त शिवसिंह सरोज में इंदु कवि के नाम से उल्लिखित है। ३८ वें कवित्त के विषय में कहा जाता है कि यह चितामणि के लिये बनाया गया है और उसके अंतिम पंक्ति में शिवराज के स्थान पर चितामणि होना चाहिए। तत्कालीन इतिहास में तीन चिमना जी मिलते हैं, जिनका शुद्ध संस्कृत नाम चिंतामणि होगा। इसमें एक चिमना जी नारायण थे, जो साहू की मृत्यु पर सन् १७५० ई० में पंतसचिव नियुक्त हुए थे। यह हो नहीं सकते, क्योंकि इनका समय बहुत बाद को पड़ता है। दूसरे चिमना जी दामोदर मोघे थे, जिन्होंने मुगल हरम के कारागार से छुटकारा पाए हुए साहू जी का साथ दिया था। यह उस समय दक्षिण खानदेश के अध्यक्ष थे। तीसरे चिमना जी आपा प्रथम पेशवा बाला जी विश्वनाथ के द्वितीय पुत्र थे। इनका जन्म सन् १७३० ई० में हुआ था। इन्हें सन् १७२० ई० में पण्डित की उपाधि मिली। सन् १७२९ ई० में यह ससैन्य गुजरात गए। सन् १७३० ई० में इनके पुत्र सदाशिवराव भाऊ का जन्म हुआ और इनकी स्त्री रुक्माबाई की मृत्यु हुई। दूसरे वर्ष गुजरात में अपने भाई बाजीराव के साथ त्र्यंबकराव धावदे पर विजय प्राप्त की। १७ दिसम्बर सन् १७४० ई० को इनकी मृत्यु हुई। यद्यपि इनके बड़े भाई की प्रसिद्धि अधिक है, पर यह भी उनसे किसी प्रकार घट कर नहीं थे। यह विद्याप्रेमी भी थे और शीलवान थे। बाजीराव इन्हें बहुत मानते थे। इन तीन चिमना जी में यदि कोई भूषण की इस रचना का नायक हो सकता है, तो यही हो सकते हैं। भूषण ने 'साहू को सराहौं कै सराहौं छत्रसाल को' कहा है और बाजीराव तथा चिमना जी दोनों ही साहू जी के मंत्री तथा सेनाध्यक्ष थे। चिमना जी ने म्लेच्छों पर कोई भी बड़ी विजय प्राप्त

नहीं की थी। भूषण ने अपनी सारी कृति में कहीं भी शुद्ध संस्कृत नाम रखने का प्रयत्न नहीं किया है प्रत्युत् बहुत कुछ नामों को बिगाड़ा ही है। वे चिमना जी नाम से प्रसिद्ध व्यक्ति के संस्कृत नाम को रखने क्यों गए। 'म्लेच्छ चतुरंग पर चिमना जी देखिये' पाठ मिलता भी नहीं। इसी कवित्त के भाव तथा शब्दावलीयुक्त भूषण के अन्य तीन कवित्त भी मिलते हैं। इस ग्रंथावली के शिव-राज-भूषण का ५६ वाँ कवित्त 'इन्द्र जिमि जंभ पर' और बावनी का ३३ वाँ तथा ३७ वाँ पद इसी भाव से पूर्ण हैं और चारों ही का अन्त इस प्रकार है—

त्यों मलिच्छ बंस पर सेर सिवराज है ॥ ५६ ॥
जहाँ पातसाही तहाँ दावा सिवराज को ॥ ३३ ॥
दिल्लीपति-दिग्गज के सेर सिवराज हो ॥ ३७ ॥
म्लेच्छ चतुरंग पर सिवराज देखिए ॥ ३६ ॥

प्रथम तीन में शिवराज ही रह सकता है। चौथे ही में पाठांतर 'चिंतामनि' कहा जाता है, पर पूर्वोक्त विचारों से यह पाठांतर ठीक नहीं है। यह शिवाजी ही के लिए रचा गया है।

सभा वाले संस्करण ही का ४८ वाँ पद शृंगार-संग्रह में निवाज कवि के नाम से छत्रसाल की प्रशंसा में मिलता है और २७ वाँ पद साहित्य-सिंधु में कवि दत्त के नाम से दिया हुआ है। इस प्रकार के सब पद इस संस्करण में यथास्थान दिए हुए हैं और पाठांतर पाद-टिप्पणी में दे दिया गया है। इस संग्रह में जिन घटनाओं का उल्लेख हुआ है, उनकी तालिका सन्-संवत् के साथ नीचे दी जाती है।

क्रम सं०	घटना	पद-सं०	विशेष सूचना
१	जावली के चन्द्रराव मोरे का मारा जाना।	२८	सं० १७१२वि० (सन् १६५५ ई०)
२	साम्राज्य के लिए दारा आदि भाइयों का युद्ध।	३४	सं० १७१५ वि० (सन् १६५८ ई०)
३	अफजल खाँ का मारा जाना।	२८,३१	सं० १७१६ (सन् १६५६ ई०)
४	परनाला दुर्ग	२८	सं० १७१७ (सन् १६६० ई०)
५	शायस्ता खाँ की दुर्दशा।	२६	सं० १७२० (सन् १६६३ ई०)
६	सूरत की लूट, जसवंतसिंह का सिंहगढ़ न ले सकना।	२५,२६	सं० १७२१ वि० (सन् १६६४ ई०)
७	शिवाजी का बादशाही दरबार में जाना।	१४,१५	सं० १७२३ वि० (सन् १६६६ ई०)
८	काशी तथा मथुरा में मन्दिर ढहाना।	१८,२० ३४	सं० १७२६ वि० (सन् १६६६ ई०)
९	सल्हेरि युद्ध।	२४	सं० १७२८ वि० (सन् १६७१ ई०)

क्रम सं०	घटना	पद-सं०	विशेष सूचना
१०	बिदनोर विजय तथा सतारा पर अधिकार।	५,३०	सं० १७३० वि० (सन् १६७० ई०)
११	राज्याभिषेक।	३२	सं० १७३१ वि० (सन् १६७४ ई०)
१२	गोलकुंडा तथा बीजापुर जाना।	५०	सं० १७३४—५ वि० (सन् १६७७—९ ई०

इस संग्रह में इस घटना-चक्र से यह ज्ञात हो जाता है कि सन् १६७९ ई० तक की घटनाओं का उल्लेख है। यह संग्रह भूषण ने ही किया था या बाद को किसी अन्य सज्जन ने किया है, यह ठीक नहीं कहा जा सकता। किंवदंती के अनुसार यह कहा जा सकता है कि किसी समय इन्होंने साहू महाराज को बावन छंद सुनाए थे, पर वे ये ही बावन छंद थे ऐसा निश्चय-पूर्वक नहीं कहा जा सकता। स्यात् इसी किंवदंती को सुनकर भूषण के काव्य के किसी प्रेमी ने यह संग्रह कर उसका यह नामकरण कर डाला हो।

इस संग्रह के प्रथम पाँच पद सेना के प्रयाण का प्रभाव वर्णन करते हैं और बाद के आठ पदों में शत्रु-स्त्रियों की भय से क्या दुर्दशा हुई थी, यह दिखलाया गया है। पाँच-छः और पद भी शिवाजी के आतंक वर्णन से भरे हुए हैं। मुसलमानों के धार्मिक अत्याचार से शिवाजी द्वारा हिंदू धर्म के बचाने का ओजपूर्ण वर्णन चार-पाँच पदों में किया गया है। दो पदों में मुगल दरबार

में इनकी धाक का अच्छा वर्णन हुआ है। शिवाजी के तलवार तथा पराक्रम के वर्णन भी दस बारह छन्दों में बड़ी जोरदार भाषा में किए गए हैं। वास्तव में इस संग्रह ग्रन्थ में भूषण के बहुत ही अच्छे चुने हुए पदों का एकत्रीकरण हुआ है।

छत्रसाल दशक—यह भी एक छोटा सा संग्रह है। सभा वाली ग्रन्थावली में चौदह पद दिए गए हैं, जिनमें दो दोहों में छत्रसाल हाड़ा तथा छत्रसाल बुंदेला का उल्लेख करते हुए भी दूसरे ही की प्रशंसा की गई है। इसके बाद दो कवित्त छत्रसाल हाड़ा की प्रशंसा में है, जिनमें एक 'लाल' कवि कृत कहा जाता है। दोनों ही में भूषण उपनाम नहीं है। तीसरे पद में 'लाल' उपनाम दिया हुआ है और 'भूषण' उपनाम नहीं है। आठवें पद में भी 'भूषण' शब्द नहीं आया है। उसमें 'पंचम' शब्द आया है, जिसे एक सज्जन ने किसी कवि का उपनाम माना है। मिश्र बन्धुओं ने पाद-टिप्पणी में ठीक लिखा है कि पंचमसिंह बुंदेलों के पूर्वपुरुष थे, परन्तु उन्होंने इस शब्द का इस कवित्त से क्या सम्बन्ध है, यह नहीं बतलाया है, जिससे इस शब्द को कवि का उपनाम मानने वाले सज्जन ने उन पर आक्षेप सा किया है। 'पंचम' शब्द रूढ़ि हो कर ओड़छा आदि के बुंदेला नरेशों द्वारा पदवी के समान धारण किया जाता है।* इस पद में यह शब्द छत्रसाल के लिए आया है और हो सकता है कि किसी पंचम कवि ने ही इसे बनाया हो, पर बिना प्रमाण के उसे निकालना अनुचित है। इस प्रकार इनमें तीन छंद संदिग्ध हैं, इसलिए इस दशक में नहीं रखे गए हैं और यहाँ उद्धृत कर दिए जाते हैं।

* मतिराम ने वृत्तकौमुदी में राजवंश वर्णन में लिखा है—

"हुव चन्द्रभान बुँदेल सोइ बीरसिंह पंचम सुअन।"

यहाँ पंचम शब्द वीरसिंह देव का विशेषण हो कर आया है।

निकसत म्यान तें मयूखैं प्रलै भानु कैसी,
फारैं तम तोम ज्यों गयंदन के जाल को।
लागत लपटि कंठ बैरिन के नागिन सी,
रुद्रहि रिझावै दै दै मुंडन के माल को॥
'लाल' छितिपाल छत्रसाल महाबाहु बली,
कहाँ लौं बखान करौं तेरी करवाल को।
प्रतिभट कटक कटीले केते काटि काटि,
कालिका सी किलकि कलेऊ देत काल को॥

दारा और औरँग लरे हैं दोऊ दिल्ली वाल,
एक भाजि गयो एक मारे गये चाल मैं।
बाजी करि दगाबाजी जीवन न राखत है,
जीवन बचाये ऐसे महाप्रलै काल मैं॥
हाथी तें उतरि हाड़ा लड़यो लोह लंगर दै,
कहै 'लाल' वीरता बिराजै छत्रसाल मैं।
तन तरवारिन मैं मन परमेश्वर मैं,
पन स्वामि कारज मैं माथो हरमाल मैं॥

चले चन्दबान घनबान औ कुहूक बान,
चलत कमान धूम आसमान छ्वै रहो।
चली जमडाढ़ैं बाढ़वारैं तरवारैं जहाँ,
लोह आँच जेठ के तरनि मान ह्वै रहो॥
ऐसे समै फौजें बिचलाई छत्रसाल सिंह,
अरि के चलाये पायँ बीर रस च्वै रहो।
हय चले हाथी चले सङ्ग छोड़ि साथी चले,
ऐसी चलाचली मैं अचल हाड़ा ह्वै रहो॥

स्फुट पद

इस संग्रह में फुटकर साठ पद एकत्र हुए हैं। इनके सिवा भूषण के नाम और भी कुछ पद पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं, पर उन पर इतनी भी श्रद्धा न हुई कि उन्हें इस संग्रह में स्थान दिया जाता। इन साठ पदों में सं० १०, ११, १४, १६, १९, २०, ३३, ५५, ५७, ५८ में 'भूषण' उपनाम नहीं आया है और इस कारण संदिग्ध हैं। भूषण का समय निश्चित करने में भी इस संग्रह के पदों पर विशेष विश्वास करना ठीक नहीं ज्ञात होता। प्रसिद्ध कवियों के नाम पर अपनी रचनाओं का प्रचार करने का साधारण मनुष्य कभी कभी साहस कर बैठते हैं, इसलिए जब तक किसी विश्वस्त सूत्र से यह निश्चित न हो जाय कि अमुक छन्द भूषणकृत ही है, तब तक उसे किसी तर्क का आधारभूत मान लेना अनुचित है। इन साठ पदों में बत्तीस शिवाजी की प्रशंसा में हैं, बारह शृङ्गार रस के हैं और बचे हुए सोलह छन्दों में तेरह व्यक्तियों की प्रशंसा की गई है। इन पदों का संग्रह जिन पुस्तकों तथा पत्रिकाओं से हुआ है, उनके नाम आदि संपादन-सामग्री की सूची में दिये गये हैं।

इनके सिवा जिन अन्य ग्रन्थों को भूषणरचित बतलाया जाता था। उनमें से अभी तक एक भी प्राप्त नहीं है।

५—आलोचना

हिंदी साहित्येतिहास के भक्तिकाल के 'स्वांतः सुखाय' रचना करने वाले भक्तप्रवर महाकवियों का समय बीत चला था और उनके स्थान पर वे कवि अपनी प्रतिभा विकसित करने

लगे थे, जिन्हें केवल विष्णु भगवान् ही का ध्यान नहीं रहता था, प्रत्युत् उनकी आदि शक्ति महालक्ष्मी का भी वे आह्वान करना अपना प्रधान कर्तव्य मानते थे। वे कुम्भनदास जी के साथ 'लाल गिरिधर बिनु और सबै बेकाम' नहीं कह उठते थे। वे चंचला लक्ष्मी की प्राप्ति में सतत यत्नवान रहते थे। ऐसे सुकवियों को इस प्रयास में ऐसे आश्रयदाताओं की खोज हुई जो धन वैभव समृद्धिपूर्ण होते हुए उदार भी हों। मुगल साम्राज्य का प्रभाव भारत में पूर्णरूपेण व्याप्त हो रहा था, जिससे बहुत से देशी राजे तथा कुछ मुसलमान नवाबादि भी सम्राट् की कुछ सेवा बजाकर बचा समय शांतिपूर्वक विषयवासना, भोग विलासादि में व्यतीत करने लगे थे। सम्राट् अकबर जहाँगीर तथा शाहजहाँ तीनों ही काव्य, कामिनी, कांचन के उत्कृष्ट गुणग्राहक थे और इनके अधीनस्थ राजे तथा अमीरगण भी अपने सम्राट् के इस कार्य के सच्चे अनुवर्ती थे। जिस प्रकार ये लोग कवियों की कोकिल वाणी द्वारा अपनी सभा का मनोरंजन कराने के उत्सुक थे और जिन्हें वे अपने दरबार का एक मुख्य अंग मानते थे उसी प्रकार उस समय कविगण भी एक नहीं अनेक आश्रयदाताओं की खोज में लगे रहते थे और थोड़े से स्वरचित छन्दों को कुछ आगे-पीछे नये छन्द मिला मिला कर कई आश्रयदाताओं के नाम पर ग्रन्थ-रूप में ग्रथित कर कई नामकरण करते फिरते थे। इस कार्य का कारण धनलिप्सा ही था कि थोड़े से श्रम का जितना अधिक पुरस्कार प्राप्त हो सके, वसूल कर लिया जाय। तात्पर्य यह कि धनलोभ के कारण ये कविगण अपने आश्रयदाताओं के मनोनुकूल कविता कर उन्हें प्रसन्न रखने में बराबर प्रयत्नशील रहते थे। ज्योंही वे एक आश्रय में काफी धन प्राप्त कर लेते थे और अधिक की आशा

कम हो जाती थी तो वे झट दूसरे आश्रय की खोज में निकल पड़ते थे। यही कारण है कि इस काल के महान् महान् कवि भी एक एक दर्जन आश्रयदाताओं के शरणापन्न हो रहे थे। सारांश यह कि इस रीतिकाल में शृंगार रस की प्रधानता इस कारण न थी कि वह जन-साधारण के मनोनुकूल थी; प्रत्युत् वह तत्कालीन आश्रयदाताओं की मनोनीत थी और इसी से कवियों ने एक प्रकार विवश होकर उसी रस में शराबोर करके कविता-धारा प्रवाहित कर दी थी अर्थात् काव्य-कामिनी का अलंकरण कंचन की प्राप्ति का साधन हो रहा था।

हिन्दी-पद्य-साहित्य को आरंभ हुए पाँच-छ शताब्दी से अधिक बीत चुके थे, काव्य-कला प्रौढ़ हो चुकी थी और उसका भांडार भी अनेकानेक रत्नों से समुज्ज्वल हो रहा था। उस कला के रस अलंकारादि सभी अंगों के निरूपण की अब विशेष आवश्यकता थी। काव्य-कला के प्रत्येक अंग की सूक्ष्म विवेचना होने का समय आ गया था और यह कार्य उन गंभीर मननशील विद्वान् कवियों का था, जो आचार्यत्व के पद के पूर्ण रूप से योग्य थे। पर देखा जाता है कि हिंदी से इन रीतिग्रन्थ-लेखकों की कवित्व-शक्ति के आगे उनका आचार्यत्व नतशिर हो गया था और काव्यांगों की विवेचना, नये सिद्धांतादि का प्रतिपादन, खंडन-मंडन तो दूर कुछ पर्याप्त या अपर्याप्त परिभाषा देकर ही वे कवि अपना काव्य-कौशल दिखलाने में लग जाते थे। संस्कृत-साहित्य में, जो हिन्दी की जननी है, ऐसा नहीं हुआ है। भामह तथा दंडी से लेकर पंडितराज जगन्नाथ तक की आचार्य-कवि-परंपरा ने रीतिग्रन्थ लिखने में अपनी आचार्यत्व-शक्ति का ही पूर्ण उपयोग किया है और केवल उदाहरण देने के लिये ही अपनी कवित्व-शक्ति दिखलाई है। आचार्यत्व को

प्रधान रखकर कवित्व को गौण माना है। उनके उदाहरण काव्यांगों की विवेचना करने में उसे अधिक स्पष्ट करने के लिए रचे गए हैं, न कि हिन्दी आचार्यों के समान उदाहरणों में आए हुए अलंकार, नायिका-भेदादि का दोहों में अपर्याप्त लक्षण देकर उन्हें ग्रन्थ का रूप दे दिया गया है। तात्पर्य यह है कि हिन्दी के प्रौढ़ महाकविगण भी इस प्रकार के ग्रन्थ लिखने में पूर्णतया सफल नहीं हुए हैं।

भक्तिकाल में भी शृंगार रस ही की प्रधानता थी। कृष्णोपासक वैष्णव संप्रदाय के भक्त कवियों ने इस रसराज के देवता श्रीकृष्ण भगवान् ही की बाललीला का विशेष कर वर्णन किया है। बाललीला से तात्पर्य व्रजलीला ही से है, क्योंकि श्रीकृष्ण जी अपने भाई बलराम जी के साथ चौदह वर्ष की अवस्था में मथुरा चले आए थे। सूरदास जी से महाकवि के वर्णन में भी इसी लीला का आधिक्य है और प्रवासलीला तो बहुत संक्षेप में कही गई है। मथुरागमन के बाद तो उद्धव-गोपी संवाद रूप में विप्रलंभ शृंगार का अविरल करुण-स्रोत बहाया गया है; परन्तु यह सब बाल-क्रीड़ा, प्रेम के अनेक रूप, संयोग तथा वियोग शृंगार सभी के वर्णन परम पुनीत वाणी में कहे गए थे। यही रसराज भक्तिकाल के अनन्तर रीतिकाल में भी प्रधान रहा, पर उसमें प्रथम काल की जो पवित्रता थी वह दूसरे काल में नहीं रही और मानव प्रकृति की तुष्टि के लिए रची जाने के कारण इसमें भोगविलास के उत्तेजक नायिका-भेद, षट्ऋतु, नखशिख आदि के वर्णन प्रचुरता से प्राप्त हैं। यही कारण था कि इस प्रकार की रचना से अपवित्र हुई वाणी को पवित्र करने के लिए भूषण ने शिवाजी के चरित्ररूपी सर में उसे नहलाया था।

रीतिकाल की हिन्दी कवि-परम्परा में सब से पहिला नाम कृपाराम जी का आता है, जिन्होंने सं० १५९८ ई० में अपनी 'हिततरंगिनी' समाप्त की है। यह ग्रन्थ दोहों में रसरीति पर सुन्दर ब्रजभाषा में लिखा गया है। इसके बीस वर्ष बाद ही गोप कवि ने रामभूषण और अलंकारचन्द्रिका नामक दो ग्रन्थ लिखे थे। चरखारी वाले मोहनलाल मिश्र ने सं० १६१८ वि० के लगभग शृंगार-सागर नामक एक पुस्तक लिखी। इसी समय के लगभग करणेस कवि हुए हैं, जिन्होंने कर्णाभरण, श्रुतिभूषण और भूपभूषण तीन ग्रन्थ लिखे। यह नरहरि कवि के साथ अकबर के दरबार में भी जाते थे। इसके अनंतर नवाब 'रहीम' खानखाना का नायिका भेद तथा बलभद्र मिश्र का नखशिख और दूषण-विचार लिखा गया था। इन्हीं बलभद्र मिश्र के छोटे भाई आचार्य महाकवि केशवदास थे, जिन्होंने शास्त्रों के अनुसरण पर काव्य के सभी अंगों का विवेचन किया है। इनके बनाए आठ ग्रन्थ हैं जिनमें रसिकप्रिया तथा कविप्रिया रीति-ग्रन्थ हैं। प्रथम में रसनिरूपण और द्वितीय में अलंकार, गुण-दोष आदि का विवेचन है। हिन्दी-साहित्य-क्षेत्र में यही प्रथम आचार्य कवि हुए हैं, जिन्होंने संस्कृत के आचार्य कवि दण्डी आदि की प्रथा पर काव्यरीति का पूरा प्रतिपादन किया है। इनके रीति-ग्रन्थों का रचनाकाल खोज के अनुसार सं० १६४८ वि० के लगभग है। इसके अनन्तर प्रायः पचास वर्ष तक के बीच किसी भी उल्लेखनीय रीति-ग्रन्थ का निर्माण नहीं हुआ।

सं० १७०० वि० के लगभग चिन्तामणि आदि त्रिपाठी बन्धुओं की रचनाओं के साथ रीति-ग्रन्थों की एक नई अखंडित परंपरा चली जो प्रायः वर्तमान काल तक चली आई। पर यह परंपरा दण्डी, भामह आदि के पूर्ण पर्यालोचना के अनुकरण को छोड़कर

केवल कवित्व-शक्ति दिखलाने की पूर्वोक्त प्रथा पर चली थी। इसी बीच अति संक्षेप में चन्द्रालोक की प्रथा पर लक्षण तथा उदाहरण दोनों ही को छोटे छोटे छन्दों में ठूँसकर दो-एक ग्रन्थ लिखे गए थे। हिन्दी के आचार्य कवि महाराज यशवंतसिंह जोधपुर नरेश ने इसी शैली पर भाषाभूषण नामक अच्छा ग्रन्थ दोहों में बनाया था। इसके अनन्तर दोहों में अलंकारादि के लक्षण देकर उदाहरण में सवैया तथा कवित्त दे देने की प्रथा सी चल निकली। इस ढंग के ग्रन्थों की हमारे साहित्य में भरमार सी हो गयी है, जिनके विषय में यहाँ विशेष लिखने की कोई आवश्यकता नहीं है।

महाकवि भूषण भी इसी काल के कवि थे और इस काल की प्रायः सभी विशेषताएँ इनमें हैं, पर इन विशेषताओं के होते हुए भी इनकी एक निजी विशेषता यह है कि इन्होंने इस काल के अनुरूप शृंगाररस प्रधान कविता न कर वीररस-पूर्ण कविता की है। अलंकार क्या है, उसकी उपादेयता क्या है, इत्यादि की विवेचना न कर इन्होंने झट उपमा से अलंकार-वर्णन आरम्भ कर दिया है। लक्षण प्रायः अपर्याप्त हैं और कहीं कहीं भ्रमपूर्ण हैं। यहाँ अपर्याप्त लक्षण से किस प्रकार भ्रम फैलता है, इसके दो उदाहरण भूषण की कृति ही से दिए जाते हैं। यह इसलिए कि एक संपादकप्रवर स्वयं इस भ्रम में पड़े हुए दिखलाई पड़े, जिससे उनके ही दो भ्रम यहाँ लिखे जाते हैं। जब ऐसे योग्य संपादकगण इस प्रकार के अस्पष्ट लक्षणों से भूल में पड़ जाते हैं तब साधारण पाठकों तथा छात्रों को समझने में कितनी कठिनाई पड़ती होगी यह दुर्ज्ञेय नहीं है।

एक अलंकार का नाम विभावना है जिसके छ भेद होते हैं। भूषण ने केवल चार ही दिये हैं। दो भेदों का लक्षण एक ही दोहे में इस प्रकार दिया है –

जहाँ हेतु पूरन नहीं उपजत है पर काज।
कै अहेतु ते और यों द्वै विभावना साज ॥१८८॥

इसका अर्थ एक संपादक लिखते हैं—'जहाँ कारण पूर्ण होने के पहिले कार्य उत्पन्न हो जाता है, वहाँ हेतु विभावन और जहाँ बिना कारण ही कार्य की उत्पत्ति हो, वहाँ अहेतु विभावना नाम से विभावना के दो और भेद हैं।' इसके पहिले एक विभावना की आप यों व्याख्या कर चुके हैं—किसी हेतु के बिना ही कार्य होने के वर्णन को विभावना कहते हैं। इन दोनों विभावना तथा अहेतु विभावना—की व्याख्याओं में केवल इतना भेद है कि एक में 'हेतु' शब्द के बदले 'कारण' शब्द आया है; पर ये दोनों पर्यायवाची हैं। ज्ञात नहीं कि आपने इन दोनों विभावनाओं में क्या भेद समझाया है ? वास्तव में जिस विभावना को आपने अहेतु विभावना नाम दिया है उसका 'अ' अभावसूचक न होकर वैपरीत्य-सूचक है, अर्थात् किसी कार्य का जो कारण न हो सके उसे उसका कारण वर्णन करना एक प्रकार की विभावना है। इसका उदाहरण भी इसे इस प्रकार स्पष्ट करता है 'कारे घन उमड़ि अँगारे बरषत हैं।' काला मेघ जल बरसाता है, अग्नि नहीं, इसलिए मेघ यहाँ अग्निवर्षा का अहेतु है। 'हेतु' विभावना की व्याख्या भी कुछ भ्रामक है। मूल 'जहाँ हेतु पूरन नहीं' का अर्थ यह है कि कार्योत्पत्ति के लिए जो कारण होना चाहिए वह पूरा न हो अर्थात् अपूर्ण कारण से पूरे कार्य का हो जाना दिखलाया जाय। जैसे, दो सौ सवार लेकर सौ हजार के सेनापति को परास्त कर डालना। किसी कारण से अधिक कार्य के होने को दिखलाना ही इस विभावना का ध्येय है। इसी प्रकार छं० सं० २७१ पर 'मिथ्या-ध्यवसित' अलंकार की परिभाषा यों दी है—

झूठ अरथ की सिद्धि को झूठो बरनत आन।
मिथ्याध्यवसित कहत हैं भूषन सुकवि सुजान॥

संपादक जी इसकी व्याख्या यों करते हैं—किसी झूठे अर्थ को सच्चा साबित करने के लिए कोई अन्य झूठ कहना मिथ्याध्यवसित है। इसका उदाहरण कवि ने एक दोहे में यों दिया है—

पग रन में चल यों लसै ज्यों अंगद पग ऐन।
ध्रुव सो भुव सो मेरु सो सिव सरजा को बैन॥

दूसरी पंक्ति का अर्थ करते हुए लिखते हैं—शिवाजी का वचन ध्रुव, पृथ्वी और मेरु के समान अचल है। (इस दोहे में शिवाजी के लिए झूठी उपमाएँ कही गई हैं)। इस व्याख्या से कहाँ तक अर्थ स्पष्ट हुआ है, यह विवेचनीय है। चन्द्रालोक में इस अलंकार का मिथ्याध्यवसाय के नाम से एक श्लोक में लक्षण तथा उदाहरण दोनों यों दिया गया है—

स्यान्मिथ्याध्यवसायश्चेत् असती साध्यसाधने।
चंद्रांशुसूत्रग्रथितां नभः पुष्पस्रजंवहः॥

जहाँ साध्य तथा साधन दोनों ही मिथ्या हों वहीं यह अलंकार होता है। जैसे, चंद्रकिरणों द्वारा गुही गई आकाश-पुष्पों की माला को धारण करना मिथ्याकल्पना मात्र है। भूषण जी भी यही कह रहे हैं, पर उनकी शब्दावली कुछ अस्पष्ट है, जिससे अर्थ करने में संपादक महाशय भ्रम में पड़ गए और एक झूठ को अन्य झूठ कह कर सच्चा साबित करने लगे। वास्तव में कवि यही कहता है कि झूठे साधन द्वारा किसी झूठी बात की सिद्धि का प्रयत्न करना मिथ्याध्यवसित अलंकार कहलाता है; पर इसे न समझ कर अर्थ करने में गड़बड़ी होगई। जो उदाहरण कवि ने दोहे में दिया है वह भी अस्पष्ट है, पर

कवित्त वाले उदाहरण को साथ पढ़ लेने से दोहे की अस्पष्टता दूर हो जाती है। पूरे दोहे का अर्थ इस प्रकार है---

शिवाजी का पग रण में ठीक उसी प्रकार चल है जिस प्रकार (बालिपुत्र) अंगद का (रावण की सभा में) था। शिवाजी का वचन ध्रुव, पृथ्वी और मेरु के समान चल है। पहिली पंक्ति ही का 'चल' शब्द द्वितीय पंक्ति में उसी प्रकार लागू है जिस प्रकार दूसरी का 'शिव सरजा को' पहिली में 'पग' के पहिले प्रयुक्त होगा। अर्थात् दोनों पंक्ति का मिलाकर अर्थ करना चाहिए। संपादक जी ने 'चल' के स्थान पर 'अचल' रखकर इस अलंकारत्व ही का लोप कर दिया है। उस पर टिप्पणी भी यह दे दी है कि शिवाजी के लिए झूठी उपमाएँ दी गई हैं। इस अलंकार का तो यही तात्पर्य है कि कवि दोनों ही बातें अशुद्ध कहता है, पर पाठकों या श्रोताओं के मन में उसका उलटा शुद्ध अर्थ जम जाता है। शिवाजी का वचन मेरु के समान अचल है, यह उपमा अलंकार है। शिवाजी का वचन मेरु के समान चल है, यह मिथ्याध्यवसित है। मेरु पर्वत अचल है, यह सभी जानते हैं तब उसे चल कहना मिथ्या है। शिवाजी भी दृढ़व्रती हैं और उन्हें झूठा कहना भी मिथ्या है, पर इस झूठी बात का मेरु की चलायमानता से समता करते हुए सिद्ध करना ही मिथ्याध्यवसित अलंकारत्व है।

रीतिकाल की रीति के अनुसार अपर्याप्त लक्षणों द्वारा किस प्रकार भ्रम फैलता है इसका दिग्दर्शन हो चुका। भूषण के लक्षणों तथा उदाहरणों के विषय में अन्यत्र विचार किया गया है, इसलिये इस विषय पर यहाँ इतना ही अलं है।

जैसा लिखा जा चुका है, रीतिकाल का प्रधान रस शृंगार ही रहा है। यद्यपि प्रायः सभी कवियों ने अपने अपने आश्रय-

दाताओं की प्रशंसा में वीर रस की कविता की है, उनके आतंक, प्रभुत्व तथा सेनादि के प्रयाणादि का भी अच्छा वर्णन किया है, पर वह केवल प्रथापालन मात्र था या अपने आश्रय देने वालों का परिचय देना आवश्यक समझ कर निर्मित हुआ था। ऐसे वर्णन, जो इन कवियों के उत्साहपूर्ण हार्दिक उद्गार नहीं थे, प्रत्युत् बलात् आवश्यक समझकर या प्रथापालन के लिए बनाए गए थे, कभी लोकप्रिय नहीं हो सकते थे। उनसे उन कवियों के आश्रयदाताओं के विषय में कुछ जानकारी अवश्य मिल जाती थी, जिनमें कितनों का स्यात् इतिहास में पता भी नहीं है। कभी कभी अच्छे अच्छे सुकवियों ने साधारण पुरुषों का ऐसा बढ़ा चढ़ाकर वर्णन किया है कि वे पाठकों की सहानुभूति के बदले उनकी हँसी के पात्र हो जाते हैं। भूषण ने ऐसा नहीं किया है। वे शृंगार-रसप्रधान काल में हो कर भी उस काल के वीर रस के एक मात्र महाकवि हो गए हैं। इन्होंने शृंगार रस की भी कुछ कविता की है, पर वह बहुत थोड़ी प्राप्त है। यहाँ वीर-रस विवेच्य है।

अनुभाव-विभावादि की सहायता से स्थायीभाव में जो प्रबल आनन्दातिरेक होता है वही रस कहलाता है। काव्य के श्रवण अथवा नाटक के दर्शन से आलंबन उद्दीपन विभाव, कटाक्षादि अनुभव, स्तंभ आदि सात्विक भाव तथा निर्वेद-ग्लानि आदि संचारी भाव के द्वारा अभिव्यक्त हृदयस्ति रति, उत्साह आदि स्थायीभाव ही शृंगार, वीर आदि रसों में परिणत हो जाते हैं। विभाव के आलंबन और उद्दीपन दो भेद हैं। स्थायी-भावों के उद्बोधन के जो परिपोषक हैं वे विभाव कहलाते हैं। नायक, प्रतिनायक, नायिकादि, जिनका आश्रय लेकर रस की उत्पत्ति होती है, आलम्बन हैं और जिनसे रस-निष्पत्ति होने

में उद्दीप्ति प्राप्त हो वही उद्दीपन है। विभावों द्वारा उद्बुद्ध स्थायीभाव को बाहर प्रकट करने वाले कार्य अनुभव कहलाते हैं। अनुभाव ही में परिगणित पर अंतःकरण के विशेष धर्म सत्व से उत्पन्न स्तम्भ, स्वेदादि आठ सात्विक भाव होते हैं। दोनों ही शारीरिक विकार हैं। स्थायीभाव में क्षण मात्र के लिए उत्पन्न और नष्ट होने वाले जो अनेक गौण अस्थिर भाव होते हैं, वे ही व्यभिचारी या संचारी भाव कहलाते हैं।

रस आठ हैं, जिनके नाम शृङ्गार, वीर, करुण, हास्य, रौद्र, वीभत्स, भयानक और अद्भुत हैं। भूषण की कविता में वीर रस प्रधान है, इसलिए इसी रस के विभाव, अनुभावादि का यहाँ उल्लेख किया जाता है। वीर रस का स्थायीभाव उत्साह है। नायक तथा प्रतिनायक आलम्बन विभाव और विजयेच्छा रूप में चेष्टा आदि उद्दीपन हैं। युद्ध आदि के सहायक शास्त्र, सेना आदि का अन्वेषण, तैयारी अनुभाव हैं। धैर्य, मति, गर्व, स्मृति, तर्क और रोमांच व्यभिचारी हैं। वीर चार प्रकार के माने जाते हैं—दानवीर, दयावीर, धर्मवीर और युद्धवीर। उत्साह के स्थायीभाव होने के कारण कुछ आचार्य कर्मवीर, विद्यावीर आदि अनेक और भेद भी मानना उचित समझते हैं, जो पूर्वोक्त चारों भेदों के अंतर्गत नहीं आ सकते। एक उदाहरण लेकर वीर रस के इन अंगों के क्रमिक विकास पर विचार कीजिए—

साजि चतुरंग बीर रंग में तुरङ्ग चढ़ि,
सरजा सिवाजी जंग जीतन चलत है।
'भूषन' भनत नाद बिहद नगारन के,
नदी नद मद गैबरन के रलत है॥
ऐल फैल खैल भैल खलक में गैल गैल,
गजन की ठेल पेल सैल उसलत है।

तारा सो तरनि धूरि-धारा में लगत जिमि,
थारा पर पारा पारावार यों हलत है।

इस कवित्त में शिवाजी के विजय-प्रयाण का वर्णन किया गया है। युद्ध के लिए शिवाजी के हृदय में जो उत्सह है वही स्थायीभाव इस पद में दर्शाया गया है। इस भाव को रस का रूप देने के लिए विभावादि आवश्यक हैं। यह युद्धोत्साह दो पक्ष के बीच में स्थित रह सकता है। शिवाजी उत्तम प्रकृति वीर-नायक तथा जिस पर चढ़ाई की जा रही है वह विधर्मी प्रति-नायक आलम्बन हैं। विजय की इच्छा से जो प्रयत्न किया जा रहा है वही उद्दीपन है। चतुरङ्गिणी सेना का सजाना इत्यादि अनुभव हैं। युद्ध विजय करने ही को चलना, खलक में खलभल मचना आदि गर्व, स्मृति आदि संचारियों की सूचना देते हैं। इस प्रकार इस पद में वीर रस का अच्छी प्रकार परिपाक हुआ है। अब भूषण की समग्र कविता पर इसी प्रकार विवेचना करने का प्रयत्न किया जाता है।

वीर रस का स्थायीभाव उत्साह अत्यन्त अमूल्य वस्तु है जो प्रेम से बढ़ कर न होने पर भी उससे कम नहीं है। प्रेम में भी उत्साह की आवश्यकता है और उसके बिना वह प्रेम पङ्गु हो जाता है। जिस प्रकार शृङ्गार रस का परिपाक नायक-नायिका का आलम्बन मिलने से होता है उसी प्रकार वीर रस का परिपाक नायक तथा प्रतिनायक का आलम्बन लेकर होता है। नायक में जितना उत्साह प्रतिनायक को विजय करने के लिए होता है उतना ही प्रतिनायक में भी नायक के प्रति रहता है। दोनों ही पक्ष में समान रूप से एक दूसरे पर विजय प्राप्त करने का उत्साह बना रहता है। दानी में दान देने का और याचक में ईप्सित धन पाने का समान उत्साह रहता है। महाकवि

भूषण ने यह रस चुनकर जितनी तत्सामयिक समाज की आवश्यकता समझने की अपनी अनुभवशालीनता दिखलाई है उससे बढ़कर अपने नायक के चुनने में बुद्धिमानी दिखलाई है। यद्यपि इनके दर्जनों आश्रयदाता रहे हों, पर उन सब की इनकी प्रशंसा विद्वन्मंडली तथा जनसाधारण में आदृत न होती यदि वे प्रातःस्मरणीय महाराज छत्रपति शिवाजी भोसला को अपनी वीर-रसमयी कविता का आलम्बन न बनाते। पन्नाराज्य-संस्थापक महाराज छत्रसाल भी ऐसे ही एक वीर हो गए हैं। भूषण ने शिवाजी ही पर विशेष कविता की है और उनमें वीर रस के चारों प्रधान भेदों का आरोपण किया है। अनन्वय अलङ्कार का उदाहरण देते हुए तथा शिवाजी की दानवीरता का वर्णन करते हुए उन्हें उन्हीं सा कहा है—

साहि-तनै सरजा तव द्वार,
प्रतिच्छन दान की दुंदुभि बाजै।
भूषन भिच्छुक भीरन को,
अति भोजहु ते बढ़ि मौजनि साजै॥
राजन को गन, राजन को, गनै ?
साहिन में न इती छबि छाजै।
आजु गरीबनेवाज मही पर,
तो सो तुही सिवराज बिराजै॥

धर्म के रक्षक धर्मवीर शिवाजी ही ने उस समय हिंदू-धर्म की कहाँ तक रक्षा की थी यह कवि इस प्रकार कहता है—

कुंभकर्न असुर औतारी अवरंगजेब,
कीन्ही कत्ल मथुरा दोहाई फेरी रब की।
खोदि डारे देवी देव सहर मुहल्ला बाँके,
लाखन तुरुक कीन्हें छुटि गई तब की॥

भूषन भनत भाग्यो कासीपति बिस्वनाथ,
और कौन गिनती मैं भूली गति भव की।
चारों बर्न धर्म छोड़ि कलमा नेवाज पढ़ि,
सिवाजी न हो तो तौ सुनति होति सब की॥

अब केवल एक ही सवैया यहाँ और उद्धृत किया जाता है, जिसमें भूषण ने स्वयं शिवाजी में दान, दया, युद्धप्रियता आदि अनेक प्रकार की वीरता का उल्लेख किया है—

सुन्दरता गुरुता प्रभुता भनि,
भूषन होत है आदर जा में।
सज्जनता औ दयालुता दीनता,
कोमलता झलकै परजा में॥
दान कृपानहु को करिबो,
करिबो अभै दीनन को बर जामें।
साहन सों रन टेक बिबेक,
इते गुन एक सिवा सरजा में॥

कवि को जिस प्रकार सौभाग्य से शिवाजी से नायक मिल गए थे, उसी प्रकार प्रतिनायक भी औरंगजेब सा मिल गया था, जो प्रबल प्रतापी सम्राट् होने पर भी हिन्दू जाति के लिए महान् अत्याचारी प्रसिद्ध हो रहा था। कवि ने इस प्रकार संयोग से प्राप्त नायक तथा प्रतिनायक का ऐसा चित्र खींचा है कि पाठकों की एक के प्रति जितनी अश्रद्धा तथा क्रोध बढ़ता जाता है, उतनी ही दूसरे के प्रति श्रद्धा और सहानुभूति भी बढ़ती जाती है। यही भूषण की कविता की लोकप्रियता की कुंजी है। जिस प्रकार कवि ने एक ओर शिवाजी को विष्णु, राम, कृष्ण आदि का अवतार वर्णित कर ऊँचे उठाया है, उसी प्रकार दूसरी

और 'कुंभकर्ण औतारी अवरंगजेब' के अत्याचारों का वर्णन किया है।

किबले की ठौर बाप बादशाह शाहजहाँ,
ताको कैद कियौ मानो मक्के आगि लाई है।
बड़ो भाई दारा वाको पकरि के कैद कियो,
मेह्र हू नाहिं माँ को जायो सगो भाई है॥
बन्धु तो मुराद बक्स बादि चूक करिबे को,
बीच दै कुरान खुदा की कसम खाई है।
भूषन सुकवि कहै सुनो औरंगजेब एते,
काम कीन्हे फेरि पातसाही पाई है॥

इसे तथा ऐसे वर्णन को पढ़कर औरंगजेब और उसकी बादशाही पर सभी को घृणा होगी। साथ ही अन्य धर्म वालों पर उसके राक्षसी अत्याचार का वर्णन जो पढ़ेगा उसे उस पर रत्ती भर भी सहानुभूति नहीं रह जाएगी। 'कत्ल आम देवल गिरावतें' आदि का अभी ऊपर उल्लेख हो चुका है। इस प्रकार प्रतिनायक के प्रति अश्रद्धा उत्पन्न करते हुए भी उसके प्रबल प्रताप का वर्णन किया गया है, जिससे उस पर विजय प्राप्त करने वाले नायक का अत्युत्कर्ष दिखलाया जा सके।

जोति रही औरंग में सबै छत्रपति छाँड़ि।
तजि ताहू को अब रही सिव सरजा कर माँड़ि॥

जाहि देत दंड सब डरिकै अखंड सोई दिल्ली दलमली तो तिहारी कहा चली है?

प्रतापी प्रतिनायक के प्रति पूर्णतया अश्रद्धा उत्पन्न कर उसके प्रतिस्पर्धी नायक के प्रति जनता की सहानुभूति यों आकर्षित की है—

बेद राखे विदित पुरान राखे सार युत,
रामनाम राख्यो अति रसना सुघर में।
हिंदुन की चोटी रोटी राखी है सिपाहिन की,
काँधे में जनेऊ राख्यो माला राखी गर में॥
मीड़ि राखे मुगल मरोड़ राखे पातसाह,
बैरी पीसि राख्यो बरदान राख्यो कर में।
राजन की हद राखी तेग बल सिवराज,
देव राखे देवल स्वधर्म राख्यो घर में॥

इस कथन से अत्याचार-पीड़ित हिन्दुओं के हृदय में शिवाजी के प्रति सहानुभूति उमड़ पड़ती है और 'आय धरयो हरि ते नर रूप पै काज करै सबही हरि के' कह कर उस पर श्रद्धा की अटल सत्ता स्थापित कर दी जाती है।

इस प्रकार कवि ने आलंबन को स्थापित करके उसकी उद्दीप्ति के लिए भी वर्णन रखे हैं। छत्रपति शिवाजी महाराज ने अपने जीवन का जो ध्येय बना रखा था उसे भी कवि ने दिखलाया है। दक्षिण के सुलतानों तथा उत्तर से दक्षिण की ओर बढ़ती हुई मुगल शक्ति को दमन करते हुए स्वधर्म और स्वदेश की रक्षा के लिए ही इनके सब प्रयास थे। उस समय स्वधर्म की क्या दशा थी और इनके प्रयत्न से क्या हुआ यह कवि दिखलाता है—

यों कवि भूषन भाषत हैं यक तौ पहिले कलिकाल की सैली।
तापर हिंदुन की सब राह सु नौरंगसाह करी अति मैली॥
साहितनै शिव के डर सों तुरकौ गहि बारिधि की गति पैली।
बेद पुरानन की चरचा अरचा द्विज देवन की फैली॥

शिवाजी का हिन्दू, हिंदुस्थान तथा हिन्दू धर्म पर इतना प्रेम

था और वह इसकी रक्षा में इतने दत्तचित्त हो रहे थे कि इनका पृथ्वी पर एक मात्र यही काम रह गया था।

काज मही शिवराज बली हिन्दुवान बढ़ाइबे को उर ऊटै।
भूषन भू निरम्लेच्छ करी चहै म्लेच्छन मारिबे को रन जूटै॥
हिन्दु बचाय बचाय यही अमरेस चँदावत लौं कोइ टूटै।
चंद अलोक ते लोक सुखी यहि कोक अभागे को शोक न छूटै॥

कवि ने यहाँ एक मर्म की बात कह कर नायक के देश-जाति-प्रेम की अत्युत्कृष्टता दिखला दी है। विभीषणवत् स्वदेश तथा स्वजाति से द्वेष करने वालों को भी बचाने तथा उनके मारे जाने पर कुछ दुखी होने में नायक का देश-प्रेमभाव बहुत उन्नत हो गया है। शस्त्रों तथा सेना-संचालन के ओजपूर्ण वर्णन शिवाबावनी के कई छंदों में दिए गए हैं। शिवाजी के विजयों से समग्र मुगल बादशाहत में कैसा आतंक छा गया था इसका कवि ने अत्यंत रोमांचकारी पर अत्युक्तिपूर्ण वर्णन किया है। इस प्रकार देखा जाता है कि महाकवि भूषण वास्तव में वीर रस के कवि थे। और उनकी कविता में इस रस का पूर्ण रूप से परिपाक हुआ है।

अलंकार

महाकवि भूषण को अलंकार क्या वस्तु है, इसकी विवेचना करना स्यात् ठीक या आवश्यक नहीं समझ पड़ा या उसके लिए उन्हें अवकाश ही नहीं मिला। अस्तु, संस्कृत के दो-एक आचार्यों के वचन यहाँ उसके स्पष्टीकरण के लिए दे दिए जाते हैं। आचार्य दंडी लिखते हैं—

काव्यशोभाकरान् धर्मानलंकारान् प्रचक्षते।
ते चाद्यापि विकल्प्यन्ते कस्तान् कार्त्स्न्येन वक्ष्यति॥

अलंकार शब्द का साधारण अर्थ शरीर की शोभा बढ़ाने वाला आभूषण है। काव्यजगत के अलंकारों के लिए भी शोभा बढ़ाने को कोई आश्रय चाहिये। इसके लिए काव्यादर्श के पहिले परिच्छेद में इन्हीं आचार्य ने लिखा है कि—

तैः शरीरं च काव्यानामलंकाराश्च दर्शिताः।
शरीरं तावदिष्टार्थव्यवच्छिन्ना पदावली॥

इष्ट अर्थात् वांछनीय अर्थ को देने वाला शब्दों का समूह काव्य का शरीर कहलाता है अर्थात् केवल शब्द ही नहीं, प्रत्युत् इष्ट अर्थ-संयुक्त पदावली ही शरीर कहला सकती है। कुछ लोगों का मत है कि यह पदावली रसात्मक होनी चाहिये अर्थात् निष्प्राण शरीर कितना भी सुन्दर हो, पर उसमें प्राणप्रतिष्ठा करना ही कवि का प्रथम धर्म होना चाहिये। ऐसे सरस इष्ट अर्थ देने वाले काव्य की शोभा बढ़ाने वाले उपमा, उत्प्रेक्षादि धर्म ही अलंकार कहलाते हैं।

इस प्रकार काव्य-पदावली में शब्द तथा अर्थ के सामंजस्य के साथ सारस्य होने पर उसे जिस साधन से चमत्कारोत्पत्ति के लिए विशेष अलंकृत किया जाय, वही अलङ्कार है। ये दो प्रकार के होते हैं—अर्थालंकार और शब्दालंकार। जिनमें ये दोनों मिलते हैं, वे उभयालंकार कहे जाते हैं। अर्थालंकार साधारणतः सौ हैं, जिनमें आचार्यों के मतानुसार घटी बढ़ी होती रहती है। इन अलंकारों को उनके अंतर्सिद्धांतों के अनुसार स्वसंपादित भाषा-भूषण ग्रंथ में कई श्रेणियों में विभाजित करने का प्रयत्न किया गया है, जिनमें साम्य, विरोध, शृंखला, न्याय तथा वस्तु प्रधान हैं। शिवराज-भूषण में भी कवि ने सौ अर्थालंकार

तथा पाँच शब्दालंकारों का वर्णन किया है । जैसा लिखा जा चुका है भूषण जी अपने समय के प्रभाव से नहीं बचे और उन्होंने यह अलंकार ग्रन्थ लिख डाला । इससे उनकी वीर रस की प्रौढ़ कवित्व-शक्ति का पूर्ण परिचय मिलते हुए भी इनके आचार्यत्व का परिचय उसी मात्रा में नहीं मिलता। अपर्याप्त लक्षण किस प्रकार अच्छे अच्छे विद्वानों को भ्रम में डाल देता है, यह दिखलाया जा चुका है । इसी प्रकार इस ग्रंथ में कुछ अलंकारों के लक्षण अशुद्ध हैं और कुछ के उदाहरण भी ठीक नहीं हैं। यहाँ केवल इसी की विवेचना की जाएगी । एक परिशिष्ट में सभी अलङ्कारों का उदाहरणसहित गद्य में संक्षिप्त विवरण दे दिया गया है; पर थोड़े का कुछ विशद रूप में यहाँ विचार भी किया जाएगा। ग्रन्थ के प्रारम्भ में कवि ने उपमा की परिभाषा दी है और उसके दो उदाहरण दिए हैं। उसके भेदों में से केवल एक लुप्तोपमा दिया गया है और उसके भी अनेकों उपभेदों में केवल एक ही वर्णित है । उपमा के चार अंग उपमेय, उपमान, वाचक तथा धर्म हैं, पर प्रथम दो का छन्द सं० ३३ में लक्षण दिया गया है और अन्य दो का नहीं। इस प्रकार ग्रंथ में दिये गए पहिले ही अलङ्कार का यह हाल है कि उसका अधूरा क्या तिहाई अंश का भी वर्णन नहीं दिया है। उपमा की परिभाषा यों दी गई है—

जहाँ दुहुन की देखिये सोभा बनत समान।
उपमा भूषन ताहि को भूषन कहत सुजान॥

'जहाँ दोनों की समान शोभा बनती देखिए, उसको सुजान भूषन उपमा अलङ्कार कहते हैं । भाषा-वैचित्र्य जाने दीजिए, यहाँ यह भी नहीं स्पष्ट है कि उपमा अलङ्कार क्या है, समान शोभा उपमा है या उस शोभा का दर्शन। कमल और मुख की शोभा ठीक बराबर होते हुए भी उनमें किसी में अभी उपमा

अलङ्कार शोभायमान नहीं हुआ। दो भिन्न वस्तुओं के सादृश्य दिखलाने या समान धर्म बतलाने को उपमा अलङ्कार कहते हैं। कमल और नेत्र दो भिन्न वस्तुएँ हैं और इन दोनों में समान धर्म स्थापित करने ही पर इसमें उपमा अलङ्कार का प्रस्फुटन होगा। कवि ने इस प्रकार पहिले ही अलङ्कार का स्पष्ट लक्षण तथा सभी भेदों और उपभेदों का न देकर मानों अस्पष्टतः कह दिया है कि वे इस ग्रन्थ की रचना अलङ्कार विवेचना ही के लिये नहीं कर रहे हैं; प्रत्युत् शिवाजी की कीर्ति वर्णन करने ही के लिए उन्होंने 'भाँति भाँति भूषननि सों कवित्त को भूषित किया था। सब अलङ्कारों तथा उनके भेदों का विश्लेषण वे नहीं करने बैठे थे।

इस अलङ्कार का प्रथक उदाहरण उस घटना से लिया गया है, जिसमें शिवाजी औरंगजेब के दरबार में गये थे। इन्हें इनकी योग्यतानुसार उच्चपदस्थ मनसबदारों में न खड़ा कर पाँच हजारी मनसब वाली श्रेणी में स्थान दिया गया था, जो मनसब इनके छोटे से पुत्र तथा इनके एक सेनापति को मिल चुका था। इस कारण शिवाजी बहुत क्रोधित हुए और उन्होंने 'भेंट होते ही चकत्ता की ओर देखकर उसे उसी प्रकार कुरुख किया जिस प्रकार इन्द्र ने कृष्ण जी को किया था।' यहाँ शिवाजी को इन्द्र तथा औरंगजेब को श्रीकृष्ण के समान कहा गया है, जो अनुचित है और साथ ही पौराणिक कथा के भी अनुकूल नहीं है। इन्द्र ही दुचित्त हुआ था और दो बार हुआ था। पहिले पकवान्न न प्राप्त होने से और दूसरी बार वर्षा का कुछ असर न होने से। दूसरे उदाहरण में महाभारत के पात्रों से शिवाजी तथा उनके प्रतिद्वंदियों की तुलना की गई है। महाभारत का युद्ध भाई भाई का था, और भूषण जी ने मुसलमानों को हिंदूधर्म के शत्रु अत्या-

चारी विधर्मी कहते हुए भी उनके सेनानियों की कौरवों से उपमा दी है। भ्रातृ-युद्ध की देश-स्वातंत्र्य-युद्ध से तुलना करना अनुचित है। महाभारत में कौरव-पक्ष के प्रधान दुर्योधन और पाँडव पक्ष के युधिष्ठिर थे। अर्जुन पंचपांडव में सर्वश्रेष्ठ वीर थे। भूषण के समय एक पक्ष के प्रधान शिवाजी और दूसरे पक्ष के प्रधान सम्राट् औरङ्गजेब थे। उसके एक सरदार शायस्ता खाँ को दुर्योधन की उपमा देना भी समीचीन नहीं है। साथ ही जिस प्रकार अर्जुन ने जयद्रथ को मारा था, उसी प्रकार शिवाजी ने किस को मारा; इसका भी उल्लेख नहीं है। छत्र शब्द मात्र से कुछ अर्थ निकालना होगा।

प्रतीप शब्द का अर्थ प्रतिकूल, विरुद्ध है। अलङ्कार-सर्वस्व में लिखा है कि 'उपमानं प्रतिकूलत्वादुपमेस्य प्रतीपमिति व्यपदेशः' अर्थात् जब उपमेय उपमान का प्रतिद्वंद्वी हो जाता है, तभी प्रतीप अलङ्कार होता है। संस्कृत आचार्यों ने इसके दो भेद इस प्रकार किए हैं। प्रसिद्धस्योपमानस्योपमेयत्वप्रकल्पनम्। निष्फलत्वाभिधानं वा प्रतीपमिति कथ्यते ॥ (साहित्य दर्पण १० परि० ८७-८८) अर्थात् पहिला भेद वह है जिसमें प्रसिद्ध उपमान की वस्तु उपमेय रूप में वर्णित हो और दूसरे भेद में उपमान निष्फल या व्यर्थ से कहे जाँय। हिन्दी आचार्यों के ये प्रथम और पंचम प्रतीप हुए। अन्य तीन भेद भी कुछ संस्कृत आचार्यों ने ग्रहण किए हैं जो हिंदी में द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ प्रतीप कहलाते हैं। उपमा तथा प्रतीप में यही अन्तर है कि पहिले में दोनों उपमेय तथा उपमान समान वर्णित होते हैं और दूसरे में उपमा प्रधान होते हुए भी या तो उपमेय को उपमान बना देते हैं या दो में से एक को घटा कर वर्णन करते हैं। इसी प्रकार व्यतिरेक मे इससे अधिक इतनी ही विशेषता है कि

उसमें उपमेय उपमान से जिस बात में अधिक कहा जाता है, वह स्पष्ट वर्णित होती है। जैसे यह कथन व्यतिरेक है कि मुख कमल सा है पर उससे मीठी बातें भी निकलती हैं।

शिवराज-भूषण में इन पाँचों प्रतीपों का वर्णन है। इनमें दो विचारणीय हैं। द्वितीय प्रतीप की परिभाषा कवि ने यों की है—करत अनादर वर्ण्य को पाय और उपमेय। अर्थात् अन्य उपमेय पाकर (जब उपमान) उपमेय का अनादर करता है। एक संपादक ने इस अस्पष्ट लक्षण को न समझ कर यह व्याख्या की है कि 'जहाँ उपमान को उपमेय मानकर वर्णनीय का अनादर किया जाय।' इसका उदाहरण निम्नलिखित दोहे में दिया गया है—

शिव ! प्रताप तव तरनि सम अरि पानिप-हर मूल।
गरब करत केहि हेत है बड़वानल तो तूल॥

हे शिवाजी, आपका प्रताप सूर्य के समान शत्रु के पानी को मूल तक सुखा देने वाला है, पर तब भी वह क्यों गर्व करता है, बड़वानल तुम्हारे समान है। अब विचारणीय यह है कि द्वितीय प्रतीप की भूषणकृत परिभाषा तथा उदाहरण मिलते जुलते हैं और एक दूसरे का समर्थन करते हैं या नहीं। परिभाषा कहती है कि उपमेय तिरस्कृत हो पर उदाहरण में दोनों—प्रताप और बड़वानल समान कहे गए हैं। तृतीय प्रतीप का लक्षण तथा उदाहरण एक दूसरे को पुष्ट करते हैं। उपमान चाँदनी का उपमेय कीर्ति द्वारा तिरस्करण दिखलाया गया है। पर इसी प्रकार द्वितीय प्रतीप में उपमेय प्रताप का उपमान बड़वानल से अनादृत होना नहीं दिखलाया गया है। काव्यप्रकाश १० उल्लास में लिखा है 'यत् असामान्यगुणयोगान्नोपमानभावपि अनुभूतिपूर्वि, तस्य तत्कल्पनायामपि भवति प्रतीपमिति

प्रत्येतव्यम्'। अर्थात् किसी वस्तु का किसी गुण में बहुत बढ़ कर होना दिखलाने पर दूसरे से उसकी समता की जाय। जब पहिला दूसरे का उपमान बना दिया जाय, तब वह भी प्रतीप कहलाता है। इस दोहे में इस भेद के उदाहरण का होना ज्ञात होता है।

पञ्चम प्रतीप का लक्षण यों कहा गया है कि 'उपमेय से हीन होकर उपमान नष्ट होता है।' यह अशुद्ध है। वास्तव में उपमान व्यर्थ और निष्फल हो जाता है और सादृश्य योग्य नहीं रह जाता है। पहिले उदाहरण में कहा गया है कि 'शेष, ऐरावत, हाथी, हंस, महादेव, अमृत का तालाब सभी तुम्हारे समान हैं, पर सब संसार छोड़कर भाग गए हैं। इसलिये हे शिवाजी, तुम्हारे यश के समान आज किसे गिनें? उदाहरण ही की भाषा देखिये। 'तो सम का' तो शिवाजी के लिए है और शेष आदि यश के उपमान हैं। परिभाषा करते हैं कि उपमान हीन होकर नष्ट हो जाय, पर उदाहरण में सम होकर दुनिया छोड़ गया है। अन्य दोनों उदाहरण निष्फलत्व के अच्छे उदाहरण हैं।

'साम्यादतस्मिन् तद्बुद्धिः भ्रांतिमान् प्रतिभोत्थितः' (सा० द०) अर्थात् किसी वस्तु में सादृश्य के कारण अन्य वस्तु का भ्रम कविकल्पना द्वारा उत्पन्न किया जाय। इस नाम की व्युत्पत्ति अलंकार-सर्वस्वकार ने यों की है 'भ्रांतिश्चित्तधर्मः स विद्यते यस्मिन् भणितिप्रकारे स भ्रांतिमान्।' यह ठीक है पर अलंकार स्वतः भ्रांत नहीं है और इससे उसका नाम भ्रांतिमान् रखना अनुचित है। रसगंगाधर में पण्डितराज लिखते हैं कि "अत्र च भ्रांतिमात्रमलंकारः। भ्रांतिमानलंकार इति व्यवहारस्त्वौपचारिकः। तथा चाहुः 'प्रमात्रन्तरधीभ्रांति-

रूपा यस्मिन्ननूद्यते । स भ्रांतिमानितिख्यातोऽलंकारे त्वौपचारिकः ॥" इस कारण भ्राँति या भ्रम ही अलङ्कार का नामकरण ठीक है। इस अलङ्कार में दो बातें अवश्य होनी चाहिये। (१) भ्रम या भ्रांति साम्य पर ही स्थित हो और (२) भ्रम काल्पनिक मात्र हो, वास्तविक न हो। भूषण ने भ्रम की परिभाषा यों दी है कि 'अन्य में अन्य बात का जहाँ भ्रम हो वहाँ यह अलंकार होता है' रज्जु में सर्प का भ्रम होना आलङ्कारिक चमत्कार नहीं है। 'दामोदरकराघातचूर्णिताशेषवक्षसा। दृष्टं चाणूरमल्लेन शतचंद्रं नभस्तलम् ।' यहाँ चन्द्रमा में सौ चंद्र का भ्रम घूँसे की चोट से हुआ है, सादृश्य से नहीं हुआ है, इस लिये इन दोनों उदाहरणों में भ्रम अलङ्कार नहीं है। इसी कारण भूषण का किया हुआ लक्षण भी पर्याप्त नहीं है, प्रत्युत् भ्रामक है। जो उदाहरण दिया गया है उसमें भ्रम कहीं नहीं है और स्यात् वह भ्रमवश हो इस अलंकार का उदाहरण मान लिया गया है।

प्रस्तुताद्वाच्यादप्रस्तुतस्य प्रतीयमानत्वे संक्षेपेणार्थयोः कथनमित्यन्वर्था समासोक्तिः। (एकावली पृ० २५४) मम्मट भी लिखते हैं कि 'समासेन संक्षेपेण अर्थद्वयकथनात् समासोक्तिः।' दो बातों को एक ही में संक्षेप में कहने से इस अलंकार का समासोक्ति नामकरण हुआ है। साहित्य-दर्पण में इसका लक्षण यों दिया है "यत्र समैः कार्यलिंगविशेषणैः अन्यस्य वस्तुनः प्रस्तुते व्यवहारसमारोपः सा समासोक्तिः"। अर्थात् कार्य लिंग तथा गुण की समानता देख कर अन्य के धर्म का प्रस्तुत में समारोप किया जाय। यहाँ अन्य से तात्पर्य उससे है जिसका वर्णन नहीं हो रहा है। इस प्रकार इस अलंकार में (१) कार्य (२) लिंग तथा (३) विशेषण तीनों में

से किसी का साम्य होना आवश्यक है। अंतिम का साम्य श्लेष सम्बन्ध तथा उपमा तीन प्रकार से हो सकता है। महाकवि भूषण इसका लक्षण यों कहते हैं– "बरनन कीजै आन को ज्ञान आन को होय।" बस, समासोक्ति अलंकार की परिभाषा पूर्ण समझ ली गई। उदाहरण तीन दिए गये हैं और तीनों ही औपम्यमूलक विशेषणों के साम्य द्वारा समारोपित किए गए हैं। तात्पर्य यह है कि लक्षण अपर्याप्त है।

व्याघातः स तु केनापि वस्तु येन यथा कृतम्। तेनैव चेदुपायेन कुरुतेऽन्यस्तदन्यथा ॥ सौकर्येण च कार्यस्य विरुद्धं क्रियते यदि (सा० द० १० स० ५५--६) जब किसी एक उपाय से किसी ने एक कार्य किया तब उसी उपाय से दूसरा उस कार्य के विपरीत करे तब एक प्रकार का व्याघात होता है। दूसरी प्रकार का व्याघात वह है कि जब उसी तर्क को उलट कर सुगमता से विरुद्ध पक्ष का समर्थन किया जा सके। शिवराजभूषण में दिया हुआ लक्षण ठीक नहीं है। दोनों उदाहरण प्रथम व्याघात के हैं।

'विकल्पस्तुल्यबलयोर्विरोधश्चातुरीयुतः' (साहित्य द० १० पृ० ८४) जहाँ चातुरीपूर्ण दो विरुद्ध बातें, जो समान शक्ति की हों, कही जायँ वहाँ विकल्प होता है। भूषण महाराज ने परिभाषा ठीक की है, पर दोनों उदाहरणों में आरम्भ में विकल्प रखते हुए अंत में निश्चयात्मक बात कह डाली है।

समुच्चयोऽयमेकस्मिन्सति कार्यस्य साधके। खलेकपोतिका-न्यायत्तत्करः स्यात् परोऽपि चेत्। गुणौ क्रिये वा युगपत्स्यातां यद्वा गुणक्रिये ॥ (सा० द० ८४-५) समुच्चय के दो भेद हैं। (१) जहाँ किसी कार्य की पूर्ति के लिए एक काफी कारण रहते अन्य कई कारण दिए जायँ। (२) जहाँ दो गुण या दो कार्य या एक गुण

और एक कार्य एक साथ ही उत्पन्न हों। भूषण ने इन्हीं दोनों भेदों की परिभाषा की है, पर अस्पष्ट भाषा में होने से कुछ लोग इसे नहीं समझ सके हैं और व्यर्थ का अर्थ कर बैठे हैं। भूषण ने यों लक्षण दिया है --

१ एक बार ही जहँ भयो बहु काजन को बन्ध।
२ वस्तु अनेकन को जहाँ बरनत एक हि ठौर।

अर्थात् (१) जहाँ बहुत से कार्य एक साथ उत्पन्न हुए हों या (२) जहाँ एक के स्थान पर अनेक वस्तुओं (कारणों) का वर्णन हो। उदाहरण दोनों के स्पष्ट हैं।

सामान्यं वा विशेषेण विशेषस्तेन वा यदि। कार्यं च कारणेनेदं कार्येण च समर्थ्यते। साधर्म्येणेतरेणार्थांतरन्यासोऽष्टधा ततः॥ (सा० द० १० प० ६१-६२) जहाँ एक सामान्य बात का विशेष से या विशेष बात का सामान्य से समर्थन किया जाय या कार्य का कारण से या कारण कार्य से समर्थन किया जाय। इस प्रकार का समर्थन साधर्म्य या वैधर्म्य दोनों प्रकार से होने से अर्थांतरन्यास आठ प्रकार का हुआ। परन्तु अन्य आचार्यगण कार्य-कारण समर्थन को अर्थांतरन्यास के अंतर्गत नहीं मानते क्योंकि वह तब काव्यलिंग अलङ्कार हो जाता है। अस्तु, भूषण इसकी परिभाषा यों करते हैं—

कह्यो अरथ जहँ ही लियो और अरथ उल्लेखि।

जहाँ किसी दूसरी बात का उल्लेख करके कही हुई बात मान ली जाय अर्थात् उसका समर्थन किया जाय। परिभाषा ठीक है, पर पर्याप्त नहीं है। इसे न समझकर विद्वान् संपादकों ने अशुद्ध अर्थ किया है और दूसरे कवियों के लक्षण देकर समझाने का प्रयत्न किया है। भूषण ने दो उदाहरण दिए हैं, पहिले में 'समय पर वीरों का शस्त्र उनका साहस होता है इस सामान्य बात

का समर्थन रामचन्द्र, अर्जुन तथा शिवाजी की विशेष कृतियों से साधर्म्य द्वारा किया गया है। दूसरे में शिवाजी की विशेष कृतियों का समर्थन 'एसियै रीति सदा शिवजी की' सामान्य बात द्वारा की गई है।

भूषण की भाषा

भूषण काल के पहिले हिंदी काव्य परम्परा की भाषा के दो प्रधान भेदों ब्रजभाषा तथा अवधी में अनेकानेक अच्छे अच्छे काव्यग्रन्थ लिखे जा चुके थे। कृष्णोपासक वैष्णवों की सगुण भक्ति धारा से अनेक सागर जब ब्रजभाषा में भरे जा चुके थे तब अवधी में रामोपासक भक्तों द्वारा मानस आदि तथा सूफियों द्वारा प्रेम गाथाएँ निर्मित हो चुकी थीं। इन महा-कवियों द्वारा काव्य भाषा विशेष रूप से परिमार्जित भी हो चुकी थी और यही समय काव्यांगों की विवेचना के साथ भाषा को व्याकरण बनाकर सुव्यवस्थित करने के लिये अनुकूल था। परन्तु ऐसा नहीं किया गया और इस कारण यह अव्यवस्था बनी ही रही। भाषा की सफाई, चुस्ती, वाक्ययोजना आदि पर उर्दू भाषा के कवियों ने विशेष ध्यान दिया है, जिससे उसमें भाषा की वैसी अव्यवस्था नहीं रहने पाई।

हिन्दी काव्य-भाषा में ब्रजभाषा, अवधी, बुन्देलखण्डी, खड़ी बोली, उर्दू आदि के मिश्रण से यह अव्यवस्था और भी बढ़ी है। इस प्रकार का बेमेल मेल अच्छे अच्छे कवियों में पाया जाता है। सुकवि भिखारीदास जी के समय षट्विधि की भाषाएँ इस काव्य भाषा में एकत्र हो चुकी थीं और उनके ज्ञानोपार्जन का भी इन्होंने निम्नलिखित साधन बतलाया है।

सूर केशव मंडन बिहारी कालिदास ब्रह्म,
चिंतामणि मतिराम भूषण सुजानिए।
लीलाधर सेनापति निपट नेवाज निधि,
नीलकंठ मिश्र सुखदेव देव मानिए॥
आलम रहीम रसखान सुन्दरादिक,
अनेकन सुकवि भए कहाँ लौं बखानिए।
ब्रजभाषा हेत ब्रजबास ही न अनुमानो,
ऐसे ऐसे कविन की बानी हू सों जानिए॥

ऐसी अवस्था में सुकवियों की भाषा इस योग्य होनी चाहिए थी कि उसे पढ़कर पाठकगण उस भाषा का पूरा पूरा ज्ञान प्राप्त कर सकें। आचार्य दास ने ब्रजभाषा ही को प्रधानता दी है जिसमें अन्य भाषाओं के शब्दों का केवल सम्मिश्रण होना चाहिए। पर 'निरंकुशाः कवयः' ऐसे नियम नहीं मानते थे और ब्रजभाषा में अवधी आदि भाषाओं के कारक चिन्ह तथा क्रियाओं के रूपों तक को बराबर व्यवहृत करते रहे। इसका कारण विशेषतः सुगमता थी जिससे छंद में जो कुछ खप गया उसी का प्रयोग कर कविगण आगे बढ़ चलते थे। मुसलमानों के संसर्ग से फारसी, तुर्की भाषाओं के शब्द भी हिंदी काव्य-भाषा में क्रमशः बढ़ने लगे। भूषण जी ने ऐसे शब्दों का मनमाना प्रयोग किया है। कितनों को इतना तोड़ मरोड़ दिया है और कितनों का ऐसा प्रयोग किया है कि अर्थ भी समझना कठिन हो जाता है। उदाहरणार्थ दो एक शब्द लीजिए छं० १९७ में एक शब्द 'इलाम' लिख गया है। एक सज्जन ने अरबी शब्द एलान का इसे अपभ्रंश मानकर इश्तहार अर्थ लगाया है। इस शब्द से विशेष मिलते जुलते दो अन्य अरबी शब्द एलाम और इलहाम हैं। प्रथम का अर्थ समाचार बतलाना और द्वितीय

का दैवी आज्ञा है। अंतिम ही शब्द विशेष जँचता है। इसीमें एक शब्द 'लरजा' आया है जो फारसी क्रिया लर्जीदन का हिन्दी भूतकाल का रूप है। यह इसी प्रकार आधुनिक हिन्दी की कविता में अंग्रेजी 'शिवर' क्रिया से 'शिवरा' बनाने के समान हास्योत्पादक मात्र है। छंद २०९ का 'जोर सिवा करता अनरत्थ भली भई हत्थ हथ्यार न आया' अंतिम चरण है। इसमें जोर शब्द फारसी 'जरूर' का भ्रष्ट रूप है और उसी भाषा के 'ज़ोर' शब्द से विशेष साम्य रखता है। इस अर्थ में भूषण ने इसे प्रयुक्त भी किया है। उद्धरित पंक्ति खड़ी बोली में है, पर वाक्य-योजन कितनी शिथिल है। अन्य भाषाओं के शब्द लेकर उनका इतना रूप बिगाड़ना किसी कवि का महत्व नहीं दिखलाता, प्रत्युत् उस महत्व का अपकर्ष अवश्य करता है। 'नाहन को निंदते' समान कहीं एकाध लिंग भेद की अशुद्धि भी रह गई है। 'बामी तें निकासती' के स्थान पर 'निकसती' होना चाहिए, पर इस कवित्त में 'भूषन' उपनाम नहीं आया है। तात्पर्य यह कि भूषण ने ओजपूर्ण वर्णन करने के समय इन 'छोटी मोटी' बातों पर ध्यान ही नहीं दिया।

भूषण वीर रस के कवि थे और उन्होंने अपनी भाषा व्रजभाषा रखते हुए भी उसमें ओज लाने के लिए खड़ी बोली का यत्र तत्र प्रयोग बराबर किया है। इनकी भाषा का सौंदर्य केवल इसी में है कि उसके पढ़ने से पाठकों के हृदय में वीरों के आतंक, युद्ध-कौशल, रणचंडी-नृत्य इत्यादि का पूरा चित्र खचित हो जाता है। रस के अनुकूल शब्दों तथा अक्षरों में शस्त्र-चालन भेरी-रव आदि की विकट ध्वनि परिलक्षित होती रहती है। प्रभावोत्पादन के लिए जिस प्रकार की भाषा समीचीन है वैसी भाषा का भूषण ने पूर्णरूपेण प्रयोग किया है। कवि ने

शिवाजी के आतंक का बहुत ही जोरदार वर्णन किया है, वह कितना व्याप्त हो गया था और उसने शत्रुओं के हृदयों में कैसा स्थान प्राप्त कर लिया था, यह एक एक शब्द से स्पष्ट हो रहा है। मुगलसम्राट् औरंगजेब ने स्वरक्षा का बहुत सा प्रबन्ध करके तब शिवाजी को दरबार में बुलाया था, तिस पर भी वह उनके अतंक से इतना डरा हुआ था कि गुसुलखाने के पास ही ठिठक रहा था।

कैयक हजार जहाँ गुर्जबरदार ठाढ़े,
करिके हुस्यार नीति पकरि समाज की।
राजा जसवंत को बुलाय कै निकट राखो'
तेऊ लखैं नीरे जिन्हें लाज स्वामि-काज की॥
भूषण तबहु ठठकत ही गुसुलखाने,
सिंह लौं झपट गुनि साहि महाराज की।
हटकि हथ्यार फड़ बाँधि उमरावन की,
कीन्ही तब्र नौरँग ने भेट शिवराज की,॥

कैसा उदात्त वर्णन है? कोई भी इसे पढ़कर शिवाजी के प्रताप तथा आतंक का समग्र-भारत-व्यापी होना सहज में समझ जाएगा। उक्ति पूर्ण, प्रसाद-गुण-संपन्न तथा सुष्ठु योजना-युक्त ऐसे वर्णन भूषण ही के योग्य हैं। भूषण की उक्तियाँ भी विचित्र होती थीं। इन्होंने प्रकृति-निदर्शन भी खूब किया था। भ्रमर सभी पुष्पों का रस लेता है, पर चंपा पर उसकी तीव्र गंध के कारण नहीं बैठ सकता। कवि ने इस पर एक नई युक्ति निकाली। भारत-सम्राट् औरंगजेब को भ्रमर बनाया और अन्य सभी देशी राजाओं को फूल बनाया। उदयपुर के महाराणा को केतकी पुष्प बनाना विदग्धतापूर्ण है, क्योंकि उसका रस लेने में उसे काँटे

निरंतर गड़ते रहे। शिवाजी को चंपा बनाना चमत्कार-युक्त है, जिसका वह कभी रस न ले सका।

> कूरम कमल कमधुज है कदम, फूल
> गौर है गुलाब राना केतकी बिराज है।
> पाँडरी पँवार जूही सोहत हैं चन्द्रावत,
> सरस बुंदेला सो चमेली साजबाज है॥
> भूषन भनत मुचकुंद बड़गूजर हैं,
> बघेले बसन्त सब कुसुम समाज है।
> लेइ रस ऐतेन को बैठिन सकत अहै
> अलि नौरंगजेब चम्पा सिवराज है॥

उपसंहार

इस प्रकार विचार करने के अनंतर यह निश्चयतः कहा जा सकता है कि जिस प्रकार महाकवि भूषण का शिवाजी के दरबार के हिंदी कवि-श्रेणी में उच्चतम स्थान था उसी प्रकार हिंदी-साहित्येतिहास के वीररस के कवियों में इनका सर्व-श्रेष्ठ स्थान है। हिंदी-साहित्य के इतिहासकारों ने इसी कारण इन्हें उस इतिहास के नवरत्न में परिगणित किया है। हिंदीसाहित्य तथा भारत के इतिहास में भूषण कवि का नाम सदा अमर रहेगा।

इतिहास-प्रेमी तथा मातृभाषा भक्त होने के नाते भूषण की कविता पढ़ना अवश्यंभावी था और इधर इनके रचना-काल विषय को लेकर विशेष तर्क वितर्क होने से पत्र-पत्रिकाओं में चहल-पहल भी मची हुई थी। यह विवाद ऐतिहासिक था इससे उसे बराबर पढ़ता रहता था। पूर्वपक्ष ने भूषण को शिवाजी के

समकालीन न होने का विवाद उठाया और अपनी शैली पर अंत तक अपने पक्ष को साबित ही कर डाला और स्यात् अभी भविष्य में भी ऐसा करते रहें; पर उत्तर पक्ष तथा प्रायः सभी अन्य साहित्य-प्रेमी और इतिहासकार इसे अस्वीकार करते हैं और भूषण का शिवाजी ही का समकालीन होना मानते हैं। इस भूमिका में, उस विवाद को पूर्णतया पढ़कर भी, उससे अलग अपने विचारों के अनुसार तर्क किया गया है और जिसका आधार किसी प्रकार की हठधर्मी नहीं है।

"विशाल-भारत" की अगस्त सन् १९३० ई० की संख्या में कुँअर महेंद्रपाल सिंह का एक लेख निकला है जिसमें लिखा है कि तिकवाँपुर के एक पुराने भाट से उन्हें पता लगा है कि भूषण का असली नाम 'पतिराम' था जो मतिराम के वजन पर होने से ठीक हो सकता है। उस भाट ने भूषण के विषय में कुछ दंत-कथाएँ भी बतलाईं, जो प्रायः वैसी ही हैं जिनका उल्लेख हो चुका है। निमक वाली कथा के बदले इनका कथन है कि 'एक दिन भूषण की स्त्री स्नान कर घर आई तब द्वार पर बँधे किसी हाथी ने धूलि उड़ायी जो उस पर पड़ गई। उसने मतिराम की स्त्री से कुछ क्रोध के साथ कहा कि 'जेठ जी ने व्यर्थ इन पँड़वों को यहाँ इकट्ठा कर रखा है।' मतिराम की स्त्री ने उत्तर दिया कि 'इन पँड़वों को कौन कमाकर लाया है, जाओ अपने खसम से कहो कुंजर मँगा दें।' भूषण की स्त्री यह व्यंग्य सुनकर पति से हाथी कमा लाने के लिए हठ करने लगी, तब भूषण जी घर से निकल पड़े। एक योगी की सहायता से देवी से बरदान पाया और चित्रकूट-पति के यहाँ जाकर उनसे भूषण की पदवी ली। इसके अनन्तर बादशाह के दरबार में गए और केवल बादशाह ही का, नहीं, सभी सभासदों का हाथ धुलवा कर निम्न लिखित कवित्त पढ़ा—

कीन्हें खंड खंड ते प्रचंड बलबंड वीर,
मंडन मही के अरि खंडन भुलाने हैं।
लै लै डंड छंडे ते न मंडे मुख रंचक हू,
हेरत हिराने ते कहू न ठहराने हैं॥
पूरब पछाँह आन माने नहिं दच्छिन हू,
उत्तर धरा को धनी रोपत निज थाने हैं।
भूषन भनत नवखंड महिमंडल में,
जहाँ तहाँ दीसत अब साहि के निसाने हैं॥

इसके बाद कई राज्यों में घूमते हुए यह शिवाजी के यहाँ गए और छद्मवेशधारी महाराष्ट्रपति को बावन बार 'इंद्रजिमि जंभ पर' वाला कवित्त सुनाकर बावन हाथी वगैरह पाए जिनमें से चार अपनी भावज को भेजे थे। इस दंतकथा में कुछ नवीनता थी इसलिए उसका आशय उपसंहार ही में दे दिया गया है क्योंकि भूमिका का और सब अंश छप चुका था।

इस ग्रन्थ के संपादन में जिन सज्जनों के लेखों तथा रचनाओं से सहायता ली गई है उनकी सूची अन्यत्र दे दी गई है और उनके प्रति इस संग्रह का संपादक विशेष रूप से आभारी है।

रथयात्रा
२००६

विनीत
व्रजरत्नदास

भूषणग्रंथावली

—↔—↔—

शिवराज-भूषण

[मंगलाचरण]

(घनाक्षरी अथवा मनहरण)

बिकट अपार भव-पन्थ के चले को श्रम, हरन करन बिजना से ब्रह्म ध्याइए। इहि लोक-परलोक सुफल करन कोकनद से चरन हिए आनि कै जुड़ाइए॥ अलि-कुल-कलित कपोल ध्यान ललित, अनन्द-रूप-सरित मैं 'भूषन' अन्हाइए। पाप-तरु भंजन बिघन-गढ़-गंजन जगत-मनरंजन द्विरदमुख गाइए॥ १॥

(छप्पय अथवा षट्पद)

जै जयन्ति जै आदि सकति जै कालि-कपर्दिनि।
जै मधुकैटभ-छलनि देवि जै महिष-विमर्दिनि॥
जै चमुंड जै चंड-मुंड भंडासुर खंडिनि।
जै सुरक्त जै रक्तबीज-बिड्डाल बिहंडिनि॥
जै जै निसुम्भ-सुम्भद्दलनि भनि 'भूषन' जै जै भननि।
सरजा समत्थ सिवराज कहँ देहि बिजै जै जग-जननि॥ २॥

(दोहा)

तरनि जगत-जलनिधि-तरनि जै जै आनँद-ओक।
कोक-कोकनद-सोकहर, लोक-लोक आलोक॥ ३॥

[राजवंश-वर्णन]

राजत है दिनराज को बंस अवनि-अवतंस।
जामैं पुनि पुनि अवतरे कंसमथन-प्रभु-अंस ॥ ४ ॥
महाबीर ता बंस मैं भयो एक अवनीस।
लियो बिरुद "सीसौदिया" दियो ईस को सीस ॥ ५ ॥
ता कुल मैं नृपवृन्द सब उपजे बखत बुलंद।
भूमिपाल तिन मैं भयो बड़ो माल मकरंद ॥ ६ ॥
सदा दान-किरवान मैं जाके आनन अंभु।
साहि निजाम सखा भयो दुग्ग देवगिरि खंभु ॥ ७ ॥
ताते सरजा बिरद भो सोभित सिंह-प्रमान।
रन-भू-सिला सु भौंसिला आयुषमान खुमान ॥ ८ ॥
'भूषन' भनि ताके भयो भुव-भूषन नृप साहि।
रातौ दिन संकित रहैं साहि सबै जग माहि ॥ ९ ॥

(कवित्त – मनहरण)

एते हाथी दीन्हे माल मकरंद जू के नन्द जेते गनि सकति बिरंच हू को न तिया। 'भूषन' भनत जाकी साहिबी सभा के देखे लागैं सब और छितिपाल छिति में छिया। साहस अपार हिंदुवान को अधार धीर, सकल सिसौदिया सपूत कुल को दिया। जाहिर जहान भयो साहिजू खुमान बीर साहिन को सरन सिपाहिन को तकिया ॥ १० ॥

(दोहा)

दसरथ जू के राम भे, बसुदेव के गोपाल।
सोई प्रगटे साहि के श्रीसिवराज भुवाल ॥ ११ ॥
उदित होत सिवराज के मुदित भए द्विजदेव।
कलियुग हट्यो मिट्यो सकल म्लेच्छन को अहमेव ॥ १२ ॥

(कवित्त—मनहरण)

जा दिन जनम लीन्हों भू पर भुसिल भूप ताहि दिन जीत्यो अरि-उर के उछाह को। छठी छत्रपतिन को जीत्यो भाग अनायास जीत्यो नामकरन में कारन-प्रवाह को॥ 'भूषन' भनत बाल-लीला गढ़कोट जीत्यो साहिके सिवाजी करि चहूँ चक्क चाह को। बीजापुर-गोलकुंडा जीत्यो लरिकाई ही मैं ज्वानी आए जीत्यो दिल्लीपति पातसाह को॥ १३॥

(दोहा)

दच्छिन के सब दुग्ग जिति दुग्ग सहार बिलास।
सिव-सेवक सिव गढ़पती कियो रायगढ़ बास॥१४॥

[रायगढ़—वर्णन]

(मालती सवैया)

जापर साहि-तनै सिवराज सुरेस की ऐसि सभा सुभ साजै।
यों कवि 'भूषन' जंपत है लखि संपति को अलकापति लाजै।
जामधि तीनहु लोक की दीपति ऐसो बड़ो गढ़राज बिराजै।
बारि पताल सी माची मही अमरावति की छबि ऊपर छाजै॥ १५॥

(हरिगीतिका छंद)

मनिमय महल सिवराज के इमि रायगढ़ मैं राजहीं।
लखि जच्छ-किन्नर-असुर-सुर-गंधर्ब्ब हौंसनि साजहीं॥
उत्तंग मरकत मंदिरन मधि बहु मृदंग जु बाजहीं।
घन-समै मानहु घुमरि करि घन घनपटल गलगाजहीं॥ १६॥

मुकतान की झालरिन मिलि मनि-माल छज्जा छाजहीं।
संध्या-समै मानहुँ नखत गन लाल अंबर राजहीं॥
जहँ तहाँ ऊरध उठे हीरा किरन घन-समुदाय हैं।
मानो गगन तंबू तन्यो ताके सपेत तनाय हैं॥ १७॥

'भूषन' भनत जहँ परसि कै मनि पुहुपरागन की प्रभा।
प्रभु-पीत पट की प्रगट पावत सिंधु मेघन की सभा॥
मुख नागरिन के राजहीं कहुँ फटिक महलन संग मैं।
बिकसंत कोमल कमल मानहु अमल गंग-तरंग मैं॥ १८॥

आनंद सों सुंदरिन के कहुँ बदन-इंदु उदोत हैं।
नभ-सरित के प्रफुलित कुमुद मुकुलित कमल-कुल होत हैं॥
कहुँ बावरी-सर-कूप राजत बद्ध मनि- सोपान हैं।
जहँ हंस सारस चक्रबाक बिहार करत सनान हैं॥ १९॥

कितहूँ बिसाल प्रबाल-जालन जटित अंगनि भूमि है।
जहँ ललित बागनि द्रुमलता मिलि रहै झिलमिलि भूमि है॥
चंपा चमेली चारु चंदन चारिहू दिसि देखिए।
लवली-लवंग यलानि-केरे लाखहौं लगि लेखिए॥ २०॥

कहुँ केतकी-कदली-करौंदा-कुंद अरु करबीर हैं।
कहुँ दाख-दाड़िम-सेब-कटहल-तूत अरु जंभीर हैं॥
कितहूँ कदंब-कदंब कहुँ हिंताल-ताल-तमाल हैं।
पीयूष ते मीठे फले कितहूँ रसाल रसाल हैं॥ २१॥

पुन्नाग कहुँ कहुँ नागकेसरि कतहुँ बकुल असोक हैं।
कहुँ ललित अगर-गुलाब-पाटल-पटल-बेला-थोक हैं॥
कितहूँ नेवारी-माधवी-सिंगारहार कहूँ लसैं।
जहँ भाँति भाँतिन रंग रंग बिहंग आनँद सों रसैं॥ २२॥

(षट्पद)

लसत बिहंगम बहु लवनित बहु भाँति बाग महँ ।
कोकिल-कीर-कपोत केलि कलकल करंत तहँ ॥
मंजुल महरि-मयूर चटुल चातक-चकोर-गन ।
पियत मधुर मकरंद करत झंकार भृंग घन ॥
'भूषन' सुबास फल फूलजुत छहुँ ऋतु बसत बसंत जहँ ।
इमि राजदुग्ग राजत रुचिर सुखदायक सिवराज कहँ ॥ २३ ॥

(दोहा)

तहँ नृप रजधानी करी जीति सकल तुरकान ।
सिव सरजा रुचि दान में कीन्हों सुजस जहान ॥ २४ ॥

[कविवंश-वर्णन]

देसन देसन ते गुनी आवत जाचन ताहि ।
तिनमें आयो एक कवि 'भूषण' कहियतु जाहि ॥ २५ ॥
दुज कनौज-कुल कस्यपी रतनाकर-सुत धीर ।
बसत त्रिबिक्रमपुर सदा तरनितनूजा-तीर ॥ २६ ॥
बीर बीरबर से जहाँ उपजे कवि अरु भूप ।
देव बिहारीश्वर जहाँ बिश्वेश्वर तद्रूप ॥ २७ ॥
कुल-सुलंक चितकूटपति साहस-सील समुद्र ।
कवि 'भूषन' पदवी दई हृदयराम-सुत रुद्र ॥ २८ ॥
सिव चरित्र लखि यों भयों कवि 'भूषन' के चित्त ।
भाँति भाँति भूषननि सों भूषित करौं कवित्त ॥२९॥
सुकविन हूँ की कछु कृपा समुझि कविन को पंथ ।
भूषन भूषनमय करत 'शिवभूषन' सुभ ग्रंथ ॥ ३० ॥
भूषन सब भूषननि मैं उपमहि उत्तम चाहि ।
याते उपमहि आदि दै बरनत सकल निबाहि ३१ ॥

[ग्रन्थ प्रारंभः]

[उपमा]

(लक्षण—दोहा)

जहाँ दुहुन की देखिए सोभा बनति समान।
उपमा भूषन ताहि को 'भूषन' कहत सुजान ॥ ३२ ॥
जा को बरनन कीजिए सो उपमेय प्रमान।
जाकी सरबरि कीजिए ताहि कहत उपमान ॥ ३३ ॥

(उदाहरण—मनहरण दंडक)

मिलतहि कुरुख चकत्ता को निरखि कीन्हों सरजा सुरेस ज्यों दुचित ब्रजराज को। 'भूषन' कुमिस गैरमिसिल खरे किए को किए म्लेच्छ मुरछित करि कै गराज को ॥ अरे ते गुसुलखाने बीच ऐसे उमराय लै चले मनाय महराज सिवराज को। दाबदार निरखि रिसानो दीह दलराय जैसे गड़दार अड़दार गजराज को ॥ ३४ ॥

(मालती सवैया)

सासता खाँ दुरजोधन सा औ दुसासन सो जसवंत निहार्यो। द्रोन सो भाऊ करन्न करन्न सो और सबै दल सो दल भार्यो। ताहि बिगोय सिवा सरजा भनि 'भूषन' औनि-छता यों पछार्यो। पारथ कै पुरुषारथ भारथ जैसे जगाय जयद्रथ मार्यो ॥ ३५ ॥

[लुप्तोपमा]

(लक्षण—दोहा)

उपमा-बाचक पद, धरम, उपमेयो, उपमान।
जामैं सो पूर्णोपमा लुप्त घटत लौं मान ॥ ३६ ॥

(उदाहरण धर्मलुप्ता—मालती सवैया)

पावक-तुल्य अमीतन को भयो, मीतन को भयो धाम सुधा को। आनँद भो गहिरो समुदै कुमुदावली-तारन को बहुधा को॥ भूतल माहिं बली सिवराज भो भूषन' भाखत शत्रु मुधा को। बंदन तेज त्यों चंदन कीरति सोंधे सिंगार बधू बसुधा को॥ ३७॥

(मनहरण)

आए दरबार बिललाने छरीदार देखि जापता करनहारे नेक हू न मिनके। 'भूषन' भनत भौंसिला के आय आगे ठाढ़े बाजे भए उमराय तुजुक करन के॥ साहि रह्यो जकि सिव साहि रह्यो तकि और चाहि रह्यो चकि बने ब्योंत अनबन के। ग्रीषम के भानु सो खुमान को प्रताप देखि तारे सम तारे गए मूँदि तुरकन के॥ ३८॥

[अनन्वय]

(लक्षण-दोहा)

जहाँ करत उपमेय को उपमेयौ उपमान।
तहाँ अनन्वै कहत हैं 'भूषन' सकल सुजान॥ ३९॥

(उदाहरण मालती सवैया)

साहि-तनै सरजा तव द्वार प्रतिच्छन दान की दुंदुभि बाजै। 'भूषन' भिच्छुक-भीरन को अति भेजहु ते बढ़ि मौजनि साजै॥ राजन को गन, राजन! को गनै? साहिन मैं न इती छबि छाजै। आजु गरीबनेवाज मही पर तो सो तुही सिवराज बिराजै॥ ४०॥

[प्रथम प्रतीप]

(लक्षण-दोहा)

जहँ प्रसिद्ध उपमान को करि बरनत उपमेय।
तहँ प्रतीप-उपमा कहत 'भूषन' कविता प्रेय॥ ४१॥

(उदाहरण-मालती सवैया)

छाय रही जितही तितही अतिही छवि छीरधि रंग करारी।
भूषन' सुद्ध सुधान के सौधनि सोधति सी धरि ओप उज्यारी॥
यों तम-तोमहि चाबिकै चंद चहूँ दिसि चाँदनि चारु पसारी।
ज्यों अफजल्लहि मारि मही पर कीरति श्रीसिवराज बगारी॥४२॥

[द्वितीय प्रतीप]

(लक्षण-दोहा)

करत अनादर बन्य को पाय और उपमेय।
ताहू कहत प्रतीप जे भूषन' कविता प्रेय॥ ४३॥

(उदाहरण-दोहा)

शिव ! प्रताप तव तरनि-सम अरि-पानिप-हर मूल।
गरब करत केहि हेत है, बड़वानल तो तूल॥ ४४॥

[तृतीय प्रतीप]

(लक्षण-दोहा)

आदर घटत अबन्य को जहाँ बन्य के जोर।
तृतीय प्रतीप बखानहीं तहँ कविकुलसिरमौर॥ ४५॥

(उदाहरण-दोहा)

गरब करत कत चाँदनी हीरक छीर समान।
फैली इती समाज-गत कीरति सिवा खुमान॥ ४६॥

[चतुर्थ प्रतीप]

(लक्षण दोहा)

पाय बरन उपमान को जहाँ न आदर और।
कहत चतुर्थ प्रतीप हैं 'भूषन' कवि-सरमौर॥ ४७॥

(उदाहरण-मनहरण)

चंदन मैं नाग, मद भरायो इंद्र-नाग, बिषभरो सेस नाग कहै उपमा अबस को ? भोर ठहरात न कपूर बहरात मेघ सरद उड़ात बात लागे दिसि दस को ॥ शंभु नीलग्रीव, भौर पुंडरीक ही बसत, सरजा सिवा जी सन 'भूषन' सरस को ? छुरधि मैं पंक, कलानिधि मैं कलंक, याते रूप एक टंक ए लहैं न तव जस को ॥ ४८ ॥

[पंचम प्रतीप]

(लक्षण-दोहा)

हीन होय उपमेय सों नष्ट होत उपमान।
पंचम कहत प्रतीप तेहि 'भूषन' सुकवि सुजान ॥ ४९ ॥

(उदाहरण-मनहरण)

तो सम हो सेस सो तो बसत पताल लोक, ऐरावत गज सो तो इंद्र-लोक सुनियै। दुरे हंस मानसर, ताहि मैं कैलास-धर. सुधा सुरबर सोऊ छोड़ि गयो दुनियै ॥ सूर दानी सिरताज महाराज सिवराज रावरे सुजस सम आजु काहि गुनियै ? 'भूषन' जहाँ लौं गनौं तहाँ लौं भटकि हार्‍यौ लखिये कछू न केती बातैं चित चुनियै ॥ ५० ॥

(मालती सवैया)

कुंद कहा, पय-वृन्द कहा अरु चंद कहा सरजा जस आगे ? 'भूषन' भानु कृसानु कहाऽब खुमान-प्रताप महीतल पागे ? राम कहा, द्विज राम कहा, बलराम कहा रन मैं अनुरागे ? बाज कहा मृगराज कहा अति साहस मैं सिवराज के आगे ? ॥ ५१ ।

यों सिवराज को राज अडोल कियो सिव जोऽब कहा ध्रुव धू है ? कामना दानि खुमान लखे म कछू सुर-रूख न देव-गऊ है ॥

भूषन' भूषन मैं कुल-भूषन भौंसिला भूप धरे सब भू है। मेरु कछू न कछू दिगदंति न कुंडलि कोल कछू न कछू है ॥ ५२ ॥

[उपमेयोपमा]

(लक्षण-दोहा)

जहाँ परस्पर होत है उपमेयो उपमान।
'भूषन' उपमेयोपमा ताहि बखानत जान ॥ ५३ ॥

(उदाहरण-मनहरण)

तेरो तेज, सरजा समत्थ ! दिनकर सो है, दिनकर सोहै, तेरे तेज के निकर सो। भौंसिला भुवाल ! तेरो जस हिमकर सो है हिमकर सोहै तेरे जस के अकर सो ॥ 'भूषन' भनत तेरो हियो रतनाकर सो, रतनाकरो है तेरे हिय सुखकर सो। साहि के सपूत सिव साहि दानि ! तेरो कर सुरतरु सो है, सुरतरु तेरे कर सो। ५४ ॥

[मालोपमा]

(लक्षण-दोहा)

जहाँ एक उपमेय के होत बहुत उपमान।
ताहि कहत मालोपमा 'भूषन' सुकवि सुजान ॥ ५५ ॥

(उदाहरण मनहरण)

इंद्र जिमि जंभ पर, बाड़व सुअंभ पर, रावन सदंभ पर रघुकुलराज है। पौन बारिवाह पर संभु रतिनाह पर, ज्यों सहस्रबाह पर राम द्विजराज है॥ दावा द्रुम-दंड पर, चीता मृगझुन्ड पर, 'भूषन' बितुंड पर जैसे मृगराज है। तेज तम-अंस पर, कान्ह जिमि कंस पर त्यों मलिच्छ-बंस पर सेर सिवराज है ॥ ५६ ॥

[ललितोपमा]

(लक्षण-दोहा)

जहँ समता को दुहुन की लीलादिक पद होत।
ताहि कहत ललितोपमा सकल कविन के गोत ॥ ५७ ॥
बिहसत, निदरत, हँसत जहँ, छबि अनुसरत बखानि।
सत्रु-मित्र इमि औरऊ लीलादिक पद जानि ॥ ५८ ॥

(उदाहरण-मनहरण)

साहि-तनै सरजा सिवा की सभा जामधि है मेरु-वारी सुर की सभा को निदरति है। 'भूषन' भनत जाके एक एक सिखर ते केते धौं नदी-नद की रेल उतरति है ॥ जोन्ह को हँसति जोति हीरा-मनि-मंदिरन कंदरन मैं छबि कुहू की उछरति है। ऐसो ऊँचो दुरग महाबली को जामैं नखतावली सों बहस दिपावली धरति है ॥ ५९ ॥

[रूपक]

(लक्षण-दोहा)

जहाँ दुहुन को भेद नहिं बरनत सुकवि सुजान।
रूपक भूषन ताहि को 'भूषन' करत बखान ॥ ६० ॥

(उदाहरण -छप्पय)

कलिजुग-जलधि अपार उद्ध अधरम्म उम्मिमय।
लच्छनि लच्छ मलिच्छ-कच्छ अरु मच्छ-मगर-चय ॥
नृपति नदीनद-वृन्द होत जाको मिलि नीरस।
भनि 'भूषन' सब भुम्मि घेरि किन्निय सुअप्प बस ॥
हिंदुवान-पुन्य-गाहक-बनिक तासु निबाहक साहि-सुव।
बर बादबान किरवान धरि जस-जहाज सिवराज तुव ॥ ६१ ॥

साहिन मन समरत्थ, जासु नवरंग साहि सिरु ।
हृदय जासु अब्बास साहि बहुबल बिलास थिरु ॥
एदिल साहि कुतुब्ब जासु जुग भुज 'भूषन' भनि ।
पाय म्लेच्छ उमराय, काय तुरकानि आन गनि ॥
यह रूप अवनि अवतार धरि जेहि जालिम जग दंडियव ।
सरजा सिव साहस खग्ग गहि कलिजुग सोइ खल खंडियव ॥ ६२ ॥

(कवित्त मनहरण)

सिंह थरि जाने बिन जावली जँगल भठी हठी गज एदिल पठाय करि भटक्यो । 'भूषन' भनत देखि भभरि भगाने सब हिम्मति हिये मैं धारि काहुवै न हटक्यौ ॥ साहि के सिवा जी गाजी सरजा समत्थ महा मदगल अफजलै पंजा बल पटक्यो । ता बिगिरि ह्वै करि निकाम निज धाम कहँ आकुत महाउत सुआँकुस लै सटक्यो ॥ ६३ ॥

[रूपक के भेद—न्यून तथा अधिक]

(लक्षण-दोहा)

घटि बढ़ि जहँ बरनन करै करिकै दुहुन अभेद ।
'भूषन' कवि औरौ कहत द्वै रूपक के भेद ॥ ६४ ॥

(उदाहरण न्यून—मनहरण)

साहि-तनै सिवराज 'भूषन' सुजस तव बिगिर कलङ्क चन्द उर आनियतु है । पंचानन एक ही बदन गनि तोहि गजानन गज-बदन-बिना बखानियतु है ॥ एक सीस ही सहससीस कला करिबे को दुहूँ दृग सों सहसदृग मानियतु है । दुहूँ कर सों सहसकर मानियतु तोहि दुहूँ बाहु सों सहसबाहु जानियतु है ॥ ६५ ॥

(उदाहरण अधिक)

जेते हैं पहार भुव माहि पारावार तिन सुनि के अपार कृपा गहे सुख फैल है। 'भूषन' भनत साहि-तनै सरजा के पास आइबे को चढ़ी उर हौंसनि की ऐल है।। किरवान बज्र सों बिपच्छ करिबे के डर आनिकै कितेक आए सरन की गैल है। मघवा मही मैं तेजवान सिवराज बीर कोट करि सकल सपच्छ किए सैल है ।। ६६ ।।

[परिणाम]

(लक्षण-दोहा)

जहँ अभेद करि दुहुन सों करत और से काम।
भनि 'भूषन' सब कहत हैं तासु नाम परिनाम ।। ६७ ।।

(उदाहरण—मालती सवैया)

भौंसिला भूप बली भुव को भुज भारी भुजंगम सों भरु लीनो।
'भूषन' तीखन तेज-तरन्नि सों बैरिन को कियो पानिप हीनो।।
दारिद-दौ करि-बारिद सों दलि त्यों धरनीतल सीतल कीनो।
साहि-तनै कुल-चन्द सिवा जस-चन्द सों चन्द कियो छबि छीनो ।। ६८ ।।

(कवित्त मनहरण)

बीर बिजैपुर के उजीर-निसिचर गोलकुन्डा-वारे घूघू ते उड़ाए हैं जहान सों। मन्द करी मुखरुचि चन्द-चकता की, कियो 'भूषन' भूषित द्विज चक्र खानपान सों।। तुरकान मलिन कुमुदिनी करी है हिन्दुवान-नलिनी खिलायो बिबिध बिधान सों। चारु सिवा नाम को प्रतापी सिवा साहि-सुव तापी सब भूमि यों कृपान भासमान सों ।। ६९ ।।

[उल्लेख]

(लक्षण-दोहा)

कै बहुतै कै एक जहँ एक वस्तु को देखि।
बहु विधि करि उल्लेख हैं सो उल्लेख उलेखि ॥ ७० ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

एक कहैं कलपद्रुम है इमि पूरत है सब की चित चाहै। एक कहैं अवतार मनोज को यों तन मैं अति सुन्दरता है। 'भूषन' एक कहैं महि-इंदु यों राज बिराजत बाढ्यो महा है। एक कहैं नरसिंह है संगर, एक कहैं नर-सिंह सिवा है ॥ ७१ ॥

(मनहरण दंडक)

कवि कहै करन, करनजीत कमनैत, अरिन के उर माहिं कीन्ह्यो इमि छेव है। कहत धरेस सब, धराधर सेस ऐसो और धराधरन को मेट्यो अहमेव है ॥ 'भूषन' भनत महाराज सिवराज तेरो राज-काज देखि कोऊ पावत न भेव है। कहरी यदिल, मौज लहरी कुतुब कहै, बहरी निजाम को जितैया कहै देव है ॥ ७२ ॥

पैज प्रतिपाल, भूमिभार को हमाल, चहुँचक्क को अमाल, भयो दंडक जहान को। साहिन को साल भयो, ज्वाल को जवाल भयो, हर को कृपाल भयो हार के बिधान को ॥ बीर रस ख्याल सिवराज भुवपाल तुव हाथ को बिसाल भयो 'भूषण' बखान को। तेरो करवाल भयो दच्छिन को ढाल, भयो हिंदु को दिवाल, भयो काल तुरकान को ॥ ७३ ॥

[स्मृति]

(लक्षण-दोहा)

सम सोभा लखि आन की सुधि आवति जहि ठौर।
स्मृति भूषन तेहि कहत हैं 'भूषन' कवि-सिरमौर ॥ ७४ ॥

(उदाहरण—मनहरण दंडक)

तुम सिवराज ब्रजराज-अवतार आजु तुम ही जगत-काज पोषत भरत हौ। तुम्हैं छोड़ि यातें काहि बिनती सुनाऊँ मैं तुम्हरे गुन गाऊँ तुम ढीले क्यों परत हौ? 'भूषन' भनत वहि कुल मैं नयो गुनाह नाहक समुझि यह चित मैं धरत हौ। और बाभनन देखि करत सुदामा सुधि मोहिं देखि काहे सुधि भृगु की करत हौ॥ ७५॥

[भ्रम]

(लक्षण-दोहा)

आन बात को आन मैं होत जहाँ भ्रम आय।
तासों भ्रम सब कहत हैं 'भूषन' सुकवि बनाय॥ ७६॥

(उदाहरण – मालती सवैया)

पीय पहारन पास न जाहु यों तीय बहादुर सों कहैं सोषैं। कौन बचैहै नवाब तुम्हें भनि 'भूषन' भौंसिला भूप के रोषैं? बन्दि सइस्तखँहू को कियो जसवंत से भाऊ करन्न से दोषैं। सिंह सिवा के सुवीरन सों गो अमीर न बाचि गुनीजन घोषैं॥ ७७॥

[सन्देह]

(लक्षण-दोहा)

कै यह कै वह यों जहाँ होत आनि संदेह।
'भूषन' सो संदेह है या मैं नहिं संदेह॥ ७८॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

आवत गुसुलखाने ऐसे कछु त्योर ठाने जाने अवरङ्ग जू के प्रानन को लेवा है। रस खोट भए तें अगोट आगरे मैं सातौ

चौकी डाँकि आनि घर कीन्हीं हद्द रेवा है।। 'भूषन' भनत वह चहूँ चक्क चाहि कियो पातसाहि चकता की छाती माहिं छेवा है। जान्यो न परत ऐसे काम है करत कोऊ गंधरब देवा है कि सिद्ध हैं कि सेवा है ॥ ७६ ॥

[शुद्ध अपन्हुति]

(लक्षण-दोहा)

आन बात आरोपिये साँची बात दुराय।
शुद्धापन्हुति कहत है भूषन' सुकवि बनाय ॥ ८० ॥

(उदाहरण—मनहरण दंडक)

चमकतीं चपला न फेरत फिरंगैं भट, इन्द्र की न चाप रूप बैरष समाज को। धाए धुरवा न छाये धूरि के पटल, मेघ गाजिबो न बाजिबो है दुन्दुभि दराज को॥ भौंसिला के डरन डरानी रिपु-रानी कहैं, पिय भजौ, देखि उदै पावस के साज को। घन की घटा न गज-घटनि-सनाह-साज, 'भूषन' भनत आयो सेन शिवराज को ॥ ८१ ॥

[हेत्वपन्हुति]

(लक्षण-दोहा)

जहाँ जुगुति सों आन को कहिये आन छपाय।
हेतु अपन्हुति कहत हैं ताकहँ कवि समुदाय ॥ ८२ ॥

(उदाहरण-दोहा)

सिव सरजा के कर लसै सो न होय किरवान।
भुज-भुजगेस-भुजंगिनी भखति पौन-अरि-प्रान ॥ ८३ ॥

(कवित्त मनहरण)

भाषत सकल सिव जी को करबाल पर 'भूषन' कहत यह करि कै बिचार को। लीन्हो अवतार करतार के कहे तें कलि-म्लेच्छन-हरन उद्धरन भुव-भार को। चंडी ह्वै घुमंडि अरि-चडमुंड चाबि करि पीवत रुधिर कछु लावत न बार को। निज भरतार-भूत-भूतन की भूख मेटि भूषित करत भूतनाथ भरतार को ॥ ८४ ॥

[पर्य्यस्त अपन्हुति]

(लक्षण-दोहा)

वस्तु गोय ताको धरम आन वस्तु मैं रोपि ।
पर्य्यस्तापन्हुति कहत कवि 'भूषन' मति वोपि ॥ ८५ ॥

(उदाहरण—दोहा)

काल करत कलिकाल मैं नहिं तुरकन को काल ।
काल करत तुरकान को सिव-सरजा करबाल ॥ ८६ ॥

(कवित्त मनहरण)

तेरे ही भुजन पर भूतल को भार कहिबे को सेसनाग दिग-नाग हिमाचल है। तेरो अवतार जग-पोसन-भरन-हार कछु करतार को न तामधि अमल है ॥ साहिन मैं सरजा समत्थ सिवराज कवि 'भूषन' कहत जीबो तेराई सफल है। तेरो करबाल करै म्लेच्छन को काल बिनु काज होत काल बदनाम धरातल है ॥ ८७ ॥

[भ्रांत अपन्हुति]

(लक्षण—दोहा)

संक आन को होत ही जहँ भ्रम कीजै दूरि ।
भ्रांतापन्हुति कहत है तहँ 'भूषन' कवि भूरि ॥ ८८ ॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

साहि-तनै सरजा के भय सों भगाने भूप मेरु मैं लुकाने ते लहत जाय वोत हैं। 'भूषन' तहाऊँ मरहटपति के प्रताप पावत न कल अति कौतुक उदोत हैं॥ "सिव आयो, सिव आयो" संकर के आगमन सुनि कै सब मैन परान ज्यों लगत अरि गोत हैं। "सिव सरजा न यह सिव है महेस" करि यों ही उपदेस जच्छ रच्छक से होत हैं॥ ८९॥

(मालती सवैया)

एक समै सजि कै सब सैन सिकार को आलमगीर सिधाये।
"आवत है सरजा सम्हरौ,, यक ओर ते लोगन बोल जनाए॥
'भूषन' भो भ्रम औरँग के सिव भौंसिला भूप की धाक धुकाये।
धायकै "सिंह" कह्यौ समुझाय करौलनि आय अचेत उठाये॥ ९०॥

[छेक अपन्हुति]

(लक्षण—दोहा)

जहाँ और को संक करि साँच छिपावत बात।
छेकापन्हुति कहत हैं भूषन' कवि-अवदात॥ ९१॥

(उदाहरण-दोहा)

तिमिर-बंस-हर अरुन-कर आयो, सजनी भोर ?।
सिव सरजा, चुप रहि सखी, सूरज-कुल-सिरमौर॥ ९२॥
दुरगहि बल पंजन प्रबल सरजा जिति रन माहिं।
औरँग कहै देवान सों सपन सुनावत तोहिं॥ ९३॥
सुनि मु उजीरन यों कह्यो "सरजा, सिव महाराज ?"।
'भूषन' कहि चकता सकुचि "नहिँ सिकार मृगराज"॥ ९४॥

[कैतव अपन्हुति]

(लक्षण-दोहा)

जहँ कैतव, छल, व्याज मिसि, इन सों होत दुराव।
कैतवपन्हुति ताहि सों 'भूषन' कहि सति भाव ॥ ९५ ॥

(उदाहरण—दंडक मनहरण)

साहिन के सिच्छक, सिपाहिन के पातसाह, संगर मैं सिंह कैसे जिनके सुभाव हैं। 'भूषन' भनत सिव सरजा की धाक ते वै काँपत रहत चित्त गहत न चाव हैं ॥ अफजल की अगति, सासता की अपगति, बहलोल बिपति सों डरे उमराव हैं । पक्का मतो करि कै मलिच्छ मन सब छोड़ि मक्का ही के मिस उतरत दरियाव हैं ॥ ९६ ॥

साहि-तनै सरजा खुमान सलहेरि पास कीन्हों कुरुखेत खीझि मीर अचलन सों। 'भूषन' भनत बलि करी है अरीन धर धरनी पै डारि नभ प्रान दै बलन सों ॥ अमर के नाम के बहाने गो अमरपुर चंदावत लरि सिवराज के दलन सों। कालिका-प्रसाद के बहाने ते खवायो महि बाबू उमराव राव पसु के छलन सों ॥ ९७ ॥

[उत्प्रेक्षा]

(लक्षण—दोहा)

आन बात को आन मैं जहँ संभावन होय।
वस्तु, हेतु, फल युत कहत उत्प्रेक्षा है सोय ॥ ९८ ॥

(उदाहरण वस्तूत्प्रेक्षा—मालती सवैया)

दानव आयो दगा करि जावली दीह भयारो महामद भार्यो।
'भूषन' बाहुबली सरजा तेहि भेंटिबे को निरसंक पधार्यो ॥ बीछू

के घाय गिरे अफजल्लहि ऊपर ही सिवराज निहार्‌यो। दाबि यों बैठा नरिंद अरिंदहि मानों मंयद गयंद पछार्‌यो ॥९९॥

साहि-तनै सिव साहि निसा मैं निसाँक लियो गढ़सिंह सोहानौ। राठिवरों को सँहार भयो लरिकै सरदार गिर्‌यौ उदभानौ ॥ 'भूषन' यों घमसान भो भूतल घेरत लोथिन मानों मसानौ। ऊँचे सुछज्ज छटा उचटो प्रगटो परभा परभात को मानौ ॥ १०० ॥

(कवित्त मनहरण)

दुरजन-दार भजि भजि बेसम्हार चढ़ीं उत्तर पहार डरि सिवजा नरिंद ते। 'भूषन' भनत बिन भूषन बसन, साधे भूखन पियासन हैं नाहन हो निंदते ॥ बालक अयाने बाट बीच ही बिलाने कुम्हिलाने मुख कोमल अमल अरबिंद ते। दृगजल कज्जल कलित बढ़्यौ कढ़्यौ मानो दूजो सोत तरनि-तनूजा कौ कलिंद ते ॥ १०१ ॥

(दोहा)

महाराज सिवराज तव सुघर धवल धुव कित्ति।
छबि छटान सों छुवति मो छिति अंगन दिग भित्ति ॥ १०२ ॥

(हेतूत्प्रेक्षा—कवित्त मनहरण)

लूट्यो खानदौराँ जोरावर सफजंग अरु लूट्यो कारतलब खाँ मनहुँ अमाल है। 'भूषन' भनत लूट्यो पूना मैं सइस्त खान गढ़न मैं लूट्यो त्यों गढ़ोइन को जाल है॥ हेरि हेरि कूटि सलहेरि बीच सरदार घेरि घेरि लूट्यो सब कटक कराल है। मानो हय हाथी उमराव करि साथ अवरंग डरि सिवाजी पै भेजत रिसाल है ॥ १०३ ॥

(फलोत्प्रेक्षा—मनहरण दंडक)

जाहि पास जात सो तौ राखि ना सकत याते तेरे पास अचल सुप्रीति नाधियतु है। 'भूषन' भनत सिवराज तव कित्ति

सम और की न कित्ति कहिबे को काँधियतु है॥ इन्द्र कौ अनुज तैं उपेंद्र-अवतार याते तेरो बाहुबल लै सलाह साधियतु है। पाय तर आय नित निडर बसायबे को कोट बांधियतु मानो पाग बाँधियतु है॥ १०४॥

(दोहा)

दुवन-सदन सब के बदन सिव सिव आठौ याम।
निज बचिबे को जपत जनु तुरकौ हर को नाम॥ १०५॥

[गम्योत्प्रेक्षा]

(लक्षण—दोहा)

मानो इत्यादिक बचन आवत नहिं जेहि ठौर।
उत्प्रेक्षा गम गुप्त सो 'भूषन' कहत अमोर॥ १०६॥

(उदाहरण--मनहरण)

देखत उँचाई उदरत पाग सुधो राह द्यास हू मैं चढ़ै ते जे साहस-निकेत हैं। सिवाजी हुकुम तेरो पाय पैदलन सलहेरि परनालो ते वै जीते जनु खेत हैं॥ सावन भादौं की भारी कुहू की अँध्यारी चढ़ि दुग्ग पर जात मावलीदल सचेत हैं। 'भूषन' भनत ताको बात मैं बिचारी तेरे परताप-रवि की उज्यारी गढ़ लेत हैं॥ १०७॥

(दोहा)

और गढ़ोई नदीनद सिव गढ़पति दरयाव।
दौरि दौरि चहुँ ओर ते मिलत आनि यहि भाव॥ १०८॥

[रूपकातिशयोक्ति]

(लक्षण-दोहा)

ज्ञान करत उपमेय को जहँ केवल उपमान।
रूपकातिशय-उक्ति सो 'भूषन' कहत सुजान॥ १०९॥

(उदाहरण—मनहरण दंडक)

बासव के बिसरत बिक्रम की कहा चली, बिक्रम लखत बीर बखत-बुलन्द के। जागे तेज-वृन्द सिवाजी नरिंद मसनन्द मालमकरंद-कुलचंद-साहिनन्द के॥ 'भूषन' भनत देस देस बैरि-नारिन मैं होत अचरज घर घर दुख दंद के। कनकलतानि इंदु, इंदु माहिं अरबिंद, झरैं अरबिंदन ते बुन्द मकरंद के॥ ११०॥

[भेदकातिशयोक्ति]

(लक्षण—दोहा)

जेहि थर आनहि भाँति की बरनत बात कछूक।
भेदकातिसय-उक्ति सो 'भूषन' कहत अचूक॥ १११॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

श्रीनगर, नयपाल जुमिला के छितिपाल भेजत रिसाल चौरगढ़ कुही बाज की। मेवार, ढुँढार, मारवाड़ औ बुँदेलखंड झारखंड बाँधौ-धनी चाकरी इलाज की॥ 'भूषन' जे पूरब पछाँह नरनाह ते वै ताकत पनाह दिलीपति सिरताज की। जगत को जैतवार जीत्यो अवरंगजेब न्यारी रीति भूतल निहारी सिवराज की॥ ११२॥

[अक्रमातिशयोक्ति]

(लक्षण—दोहा)

जहाँ हेतु अरु काज मिलि होत एक ही साथ।
अक्रमातिसय-उक्ति सो कहि 'भूषन' कविनाथ॥ ११३॥

(उदाहरण कवित्त मनहरण)

उद्धत अपार तव दुंदुभी-धुकार साथ लंघै पारावार बाल बृन्द रिपुगन के। तेरे चतुरंग के तुरङ्गन के रँगरेजे साथ ही उड़ात

रजपुंज हैं परन के। दच्छिन के नाथ सिवराज! तेरे हाथ चढ़ैं धनुष से साथ गढ़ कोट दुरजन के। 'भूषन' असीसै, तोहिं करत कसीसैं पुनि बानन के साथ छूटैं प्रान तुरकन के॥ ११४॥

[चंचलातिशयोक्ति]

(लक्षण-दोहा)

जहाँ हेतु चरचाहि मैं काज होत ततकाल।
चंचलातिसय- उक्ति सो 'भूषन' कहत रसाल॥ ११५॥

(उदाहरण--दोहा)

आयो आयो सुनत ही सिव सरजा तुव नाँव।
बैर-नारि-दृग जलन सों बूड़ि जात अरि गाँव॥ ११६॥

(कवित्त मनहरण)

गढ़नेर गढ़ चाँदा भागनेर बीजापुर-नृपन की नारी रोय हाथन मलति हैं। करनाट-हबस-फिरंगहू बिलायत बलख रूम-अरि तिय छतियाँ दलति हैं॥ 'भूषन' भनत साहितनै सिवराज एते मान तव धाक आगे दिसा उबलति हैं। तेरी चमू चलिबे की चरचा चले तें चक्रवर्तिन की चतुरंग-चमू बिचलति हैं॥ ११७॥

[अत्यंतातिशयोक्ति]

(लक्षण-दोहा)

जहाँ हेतु ते प्रथम ही प्रगट होत है काज।
अत्यंतातिसयोक्ति सो कहि 'भूषन' कविराज॥ ११८॥

(उदाहरण कवित्त मनहरण)

मंगन मनोरथ के प्रथमहि दाता तोहिं कामधेनु कामतरु सो गनाइयतु है। याते तेरे गुन सब गाय को सकत कवि, बुद्धि

अनुसार कछु तऊ गाइयतु है ।'भूषन' भनत साहितनै सिव-राज निज बखत बढ़ाय करि तोहि ध्याइयतु है। दीनता को डारि औ अधीनता बिडारि दीह दारिद को मारि तेरे द्वार आइयतु है ॥ ११९ ॥

(दोहा)

कवि तरुवर सिव सुजस रस सींचे अचरज मूल ।
सुफल होत है प्रथम ही पीछे प्रगटत फूल ॥ १२० ॥

(सामान्य-विशेष)

(लक्षण-दोहा)

कहिबे जहँ सामान्य है कहै जु तहाँ विशेष ।
सो सामान्य विशेष है बरनत सुकवि अशेष ॥ १२१ ॥

(उदाहरण—दोहा)

और नृपति 'भूषन' कहै करै न सुगमौ काज ।
साहितनै सिव सुजस तो करै कठिनऊ आज ॥ १२२ ॥

(मालती—सवैया)

जीति लई बसुधा सिगरी घमसान घमंड कै बीरन हू की ।
'भूषन' भौंसिला छीनि लई जगती उमराव-अमीरन हू की ॥
साहितनै सिवराज की धाकनि छूटि गई धृति धीरन हू की ।
मीरन के उर पीर बढ़ी यों जु भूलि गई सुधि पीरन हू की ॥ १२३ ॥

(तुल्ययोगिता)

(लक्षण—दोहा)

तुल्ययोगिता तहँ धरम जहँ बरन्यन को एक ।
कहूँ अबरन्यन को कहत 'भूषन' बरनि विवेक ॥ १२४ ॥

(उदाहरण—मनहरण दंडक)

चढ़त तुरंग चतुरंग साजि सिवराज चढ़त प्रताप दिन दिन अति जंग मैं। 'भूषन' चढ़त मरहट्टन के चित्त चाव खग्ग खुलि चढ़त है अरिन के अंग मैं॥ भौंसिला के हाथ गढ़ कोट हैं चढ़त अरि जोट ह्वै चढ़त एक मेरुगिरि शृंग मैं। तुरकान-गन व्योमयान हैं चढ़त बिनु मान है चढ़त बदरंग अवरंग मैं॥ १२५॥

(दोहा)

सिव सरजा भारी भुजन भुव भरु धर्यौ सभाग।
'भूषन' अब निहचिंत हैं सेसनाग दिगनाग॥ १२६॥

(द्वितीय लक्षण-दोहा)

हित अनहित को एक सो जहँ वरनत व्यवहार।
तुल्ययोगिता और सो भूषन ग्रंथ बिचार॥ १२७॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

गुनन सों इनहूँ को बाँधि लाइयतु पुनि गुनन सों उनहूँ को बाँधि लाइयतु है। पाय गहि इनहूँ को रोज ध्याइयतु अरु पाय गहि उनहूँ को रोज ध्याइयतु है॥ 'भूषन' भनत महराज सिवराज रस-रोस तो हिये मैं एक भाँति पाइयतु है। दोहाई कहे ते कवि लोग ज्याइयतु अरु दोहाई कहे ते अरि लोग ज्याइयतु है॥ १२८॥

[दीपक]

(लक्षण-दोहा)

वर्न्य अबन्यंन को धरम जहँ बरनत हैं एक।
दीपक ताको कहत हैं 'भूषन' सुकवि विवेक॥ १२९॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

कामिनी कंत सों, जामिनी चंद सों, दामिनी पावस-मेघ-घटा सों। कीरति दान सों सूरति ज्ञान सों, प्रीति बड़ी सनमान महा सों॥ 'भूषन' भूषन' सों तरुनी, नलिनी नव पूषनदेव प्रभा सों। जाहिर चारिहु ओर जहान लसै हिन्दुवान खुमान सिवा सों॥ १३० ॥

[दीपकावृत्ति]

(लक्षण-दोहा)

दीपक पद के अरथ जहँ फिरि फिरि करत बखान।
आवृति दीपक तहँ कहत 'भूषन' सुकवि सुजान ॥१३१॥

(उदाहरण—दोहा)

सिव सरजा तव दान को करि को सकत बखान।
बढ़त नदीगन दान-जल उमड़त नद गजदान॥ १३२ ॥

(मालती—सवैया)

चक्कवती चकता-चतुरंगिनि चारिउ चापि लई दिसि चंका। भूप दरीन दुरे भनि 'भूषन' एक अनेकन बारिधि नंका॥ औरंगसाहि सों साहि को नंद लरो सिव साहि बजाय कै डंका। सिंह को सिंह चपेट सहै गजराज सहै गजराज को धंका॥ १३३ ॥

(मनहरण—दंडक)

अटल रहे हैं दिगअंतन के भूप धरि रैयति को रूप निज देस पेस करि कै। राना रह्यो अटल बहाना करि चाकरी को बाना तजि 'भूषन' भनत गुन भरि कै। हाड़ा रायठौर कछवाहे गौर और रहे अटल चकत्ता को चमाऊ धरि डरि कै। अटल सिवाजी रह्यो दिल्ली को निदरि धीर धरि ऐड़ धरि तेग धरि गढ़ धरि कै॥ १३४ ॥

[प्रतिवस्तूपमा]

(लक्षण-दोहा)

बाक्यन को जुग होत जहँ एकै अरथ समान ।
जुदो जुदो करि भाषिए प्रतिवस्तूपम जान ॥ १३५ ॥

(उदाहरण—लीलावती छंद)

मद-जल धरत द्विरद-बल राजत, बहु-जल-धरन जलद छबि साजै । पुहुमि-धरन फनिनाथ लसत अति, तेज-धरन ग्रीषम-रबि छाजै ॥ खरग धरन सोभा तहँ राजत, रुचि 'भूषन' गुन धरन समाजै । दिल्ली-दलन दक्खिन दिसि-थम्भन, ऐंड़-धरन सिवराज बिराजै ॥ १३६ ॥

[दृष्टांत]

(लक्षण-दोहा)

जुग बाक्यन को अरथ जहँ प्रतिबिंबित सो होत ।
तहाँ कहत दृष्टांत हैं 'भूषन' सुमति उदोत ॥ १३७ ॥

(उदाहरण-दोहा)

शिव औरंगहि जिति सकै और न राजा राव ।
हत्थिमत्थ पर सिंह बिनु आन न घालै घाव ॥ १३८ ॥
चाहत निरगुन सगुन को ज्ञानवन्त गुनधीर ।
यहि भाँति निरगुन गुनिहि सिवा नेवाजत बीर ॥ १३९ ॥

(मालती— सवैया)

देत तुरी-गन गीत सुने बिनु देत करीगन गीत सुनाए । 'भूषन' भावत भूप न आन जहान खुमान को कीरति गाए ॥ मंगन को भुवपाल घने पै निहाल करै सिवराज रिझाए । आन ऋतै बरसैं सरसैं उमड़ैं नदिया ऋतु पावस पाए ॥ १४० ॥

[निदर्शना]

(लक्षण-दोहा)

सदृश वाक्य जुग अरथ को करिए एक अरोप ।
'भूषन' ताहि निदर्शना कहत बुद्धि दै ओप ॥ १४१ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

मच्छहु कच्छ में कोल नृसिंह में बावन में भनि 'भूषन' जो है। जो द्विजराम में जो रघुराम में जो ब कह्यो बलरामहु को है॥ बौद्ध में जो अरु जो कलकी मह बिक्रम होवे को आगे सुनो है। साहस भूम-अधार सोई अब श्रीसरजा सिवराज में सो है ॥ १४२ ॥

(कवित्त—मनहरण)

कीरति-सहित जो प्रताप सरजा में बर मारतंड मध्यतेज चाँदनी सो जानी मैं। सोहत उदारता औ सीलता खुमान में सो कंचन में मृदुता सुगंधता बखानी मैं॥ 'भूषन' कहत सब हिंदुन को भाग फिरै चढ़े ते कुमति चकता हू की निसानी मैं। सोहत सुबेस दान कीरति सिवा में सोई निरखी अनूप रुचि मोतिन के पानी मैं ॥ १४३ ॥

(दोहा)

औरन को जो जनम है, सो वाको यक रोज ।
औरन को जो राज सो, सिव सरजा की मौज॥ १४४ ॥
साहिन सों रन माँडिबो कीबो सुकबि निहाल ।
सिव सरजा को ख्याल है औरन को जंजाल ॥ १४५ ॥

[व्यतिरेक]

(लक्षण-दोहा)

सम छबिवान दुहून में, जहँ बरनत बढ़ि एक ।
'भूषन' कवि कोविद सबै, ताहि कहत व्यतिरेक ॥ १४६ ॥

(उदाहरण-छप्पय)

त्रिभुवन मैं परसिद्ध एक अरि-बल वह खंडिय।
यहि अनेक अरि-बल बिहंडि रन-मंडल मंडिय॥
'भूषन' वह ऋतु एक पुहुमि पानिपहि बढ़ावत।
यह छहु ऋतु निसि दिन अपार पानिप सरसावत॥
सिवराज साहि सुव सत्थ नित हय गय लक्खन संचरइ।
यक्कइ गयंद यक्कइ तुरँग किमि सुरपति सरवरि करइ॥ १४७॥

(कवित्त मनहरण)

दारुन दुगुन दुरजोधन ते अवरंग 'भूषन' भनत जग राख्यो छल मढ़ि कै। धरम धरम, बल भीम, पैज अरजुन, नकुल अकिल, सहदेव तेज चढ़ि कै॥ साहि के सिवाजी गाजी, कर्‌यो दिली माँहि चंड पांडवनहू ते पुरुषारथ सु बढ़ि कै। सूने लाखभौन ते कढ़े वै पाँच राति, वैं जु द्योस लाख चौकी ते अकेलो आयो कढ़ि कै॥ १४८॥

[सहोक्ति]

(लक्षण-दोहा)

बस्तुन को भासत जहाँ, जन-रंजन सह भाव।
ताहि सहोक्ति बखानहीं, जे 'भूषन' कविराव॥ १४९॥

(उदाहरण—मनहरण दंडक)

छूट्यो है हुलास आम खास एक सङ्ग छूट्यो हरम-सरम एक संग बिनु ढंग ही। नैनन ते नीर धीर छूट्यो एक संग छूट्यो सुख-रुचि मुख-रुचि त्योंहि बिन रंग ही। 'भूषन' बखानै सिवराज मरदाने तेरी धाक बिललाने न गहत बल अङ्ग ही। दक्खिन को सूबा पाय दिली के अमोर तजैं उत्तर की आस जीव-आस एक संग ही॥ १५०॥

[विनोक्ति]

(लक्षण-दोहा)

बिना कछू जहँ बरनिए कै हीनो कै नीक।
ताको कहत बिनोक्ति है कवि 'भूषन' मति ठीक ॥ १५१ ॥

(उदाहरण-दोहा)

सोभमान जग पर किए सरजा सिवा खुमान।
साहिन सो बिनु डर अगड़ बिन गुमान को दान ॥ १५२ ॥

(मालती सवैया)

को कविराज-बिभूषन होत बिना कबि साहि-तनै को कहाए ?
को कबिराज सभाजित होत सभा सरजा के बिना गुन गाए ?
को कबिराज भुवालन भावत भौंसिला के मन मैं बिनु भाए ?
को कबिराज चढ़ै गज बाजि सिवाजि कि मौज मही बिनु पाए ? ॥ १५३ ॥

(कवित्त मनहरण)

बिना लोभ को बिबेक बिना भय जुद्ध टेक साहिन सों सदा साहि-तनै सिरताज के। बिना ही कपट प्रीति बिना ही कलेस जीति बिना ही अनीति रीति लाज के जहाज के ॥ सुकबि-समाज बिन अपजस-काज भनि 'भूषन' भुसिल भूप गरिबनेवाज के। बिना ही बुराई आज बिना काज घनो फौज बिना अभमान मौज राजै सिवराज के ॥ १५४ ॥

कीरति को ताजी करी बाजि चढ़ि लूटि कीन्हीं भई सब सेना बिनु बाजी बिजैपुर की। 'भूषन' भनत भौंसिला भुवाल धाक ही सों धीर धरबो न फौज कुतुब के धुर की ॥ सिंह

उदैभान बिन अमर सुजान बिन मान बिन कीन्ही स हिबी त्यों दिलीसुर की। साहि-सुव महाबाहु सिवाजी-सलाह बिन कौन पातसाह की न पातसाही मुरकी ॥ १५५ ॥

[समासोक्ति]

(लक्षण-दोहा)

बरनन कीजै आन को ज्ञान आन को होय।
समासोक्ति भूषन कहत कवि कोविद सब कोय ॥ १५६ ॥

(उदाहरण-दोहा)

बड़ो डील लखि पील को सबन तज्यो बन थान।
धनि सरजा तू जगत मैं ताको हर्यो गुमान ॥ १५७ ॥
तुही साँच द्विजराज है तेरी कला प्रमान।
तो पर सिव किरपा करी जानत सकल जहान ॥ १५८ ॥

(कवित्त मनहरण)

उत्तर पहार बिधनोल खँडहर झारखंडहु प्रचार चारु केली है बिरद की। गौर गुजरात अरु पूरब पछाँह ठौर जन्तु जंगलीन की बसति मारि रद की॥ 'भूषन' जो करत न जाने बिनु घोर सोर भूलि गयो आपनी ऊँचाई लखे कद को। खोइयो प्रबल मदगल गजराज एक सरजा सों बैर कै बड़ाई निज मद को ॥ १५९ ॥

[परिकर तथा परिकरांकुर]

(लक्षण-दोहा)

साभिप्राय बिशेषननि 'भूषन' परिकर मान।
साभिप्राय विशेष्य ते परिकर अंकुर जान ॥ १६० ॥

(उदाहरण परिकर-कवित्त मनहरण)

बचैगा न समुहाने बहलोल खाँ अयाने 'भूषन' बखाने दिल आनि मेरा बरजा। तुझ ते सवाई तेरा भाई सलहेरि पास कैद किया साथ का न कोई बीर गरजा॥ साहिन के साहि उसी औरँग के लीन्हे गढ़ जिसका तू चाकर औ जिसकी है परजा। साहि का ललन दिली-दल का दलन अफजल का मलन सिवराज आया सरजा॥ १६१॥

जाहिर-जहान जाके धनद-समान पेखियतु पासवान यों खुमान चित चाय है। 'भूषन' भनत देखे भूषन रहत सब आप ही सों जात दुख-दारिद बिलाय है॥ खीझे ते खलक माहि खलभल डारत है रीझे ते पलक माहिं कीन्हें रङ्क राय है। जंग जुरि अरिन के अंग को अनंग कीबो दीबो सिव साहब के सहज सुभाय है॥ १६२॥

(दोहा)

सूर-सिरोमनि सूर-कुल सिव सरजा मकरंद।
'भूषन' क्यो औरँग जितै कुल मलिच्छ कुल चंद॥ १६३॥

(परिकरांकुर-दोहा)

'भूषन' भनि सबही तबहि जीत्यो हो जुरि जंग।
क्यों जीतै सिवराज सों अब अंधक अवरंग ?॥ १६४॥

[श्लेष]

(लक्षण-दोहा)

एक बचन मैं होत जहँ बहु अर्थन को ज्ञान।
स्लेस कहत हैं ताहि को 'भूषन' सुकबि सुजान॥ १६५॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

सीता संग सोभित सुलच्छन सहाय जाके भू पर भरत्त नामै भाई नीति चारु है । 'भूषन' भनत कुल सूर कुल-भूषन हैं दासरथी सब जाके भुज भुव भारु है ।। अरि लंक तोर जोर जाके संग बानर हैं सिंधुर हैं बाँधे जाके दल को न पारु है । तेगहि कै भेंटै जौन राकस मरद जानै सरजा सिवाजी राम ही को अवतारु है ॥ १६६ ॥

देखत सरूप को सिहात न मिलन काज जग जीतिबे की जामैं रीति छल बल की । जाके पास आवै ताहि निधन करति बेगि 'भूषन' भनत जाकी संगति न फल की ।। कीरति कामिनी राच्यो सरजा सिवा की एक बस कै सकै न बस-करनी सकल की । चंचल सरस एक काहू पै न रहै दारी गनिका-समान सूबेदारी दिल्ली-दल की ।। १६७ ।।

[अप्रस्तुतप्रशंसा]

(लक्षण-दोहा)

प्रस्तुति लीन्हें होत जहँ. अप्रस्तुत परसंस ।
अप्रस्तुति परसंस सो कहत सुकवि अवतंस ।। १६८ ।।

(उदाहरण-दोहा)

हिंदुनि सों तुरकिनि कहैं तुम्हैं सदा संतोष ।
नाहिन तुम्हरे पतिन पर सिव सरजा कर रोष ।। १६९ ।।
अरि-तिय भिल्लिनि सों कहैं घन बन जाय इकंत ।
सिव सरजा सों बैर नहिं सुखी तिहारे कंत ।। १७० ।।

(मालती सवैया)

काहू पै जात न 'भूषन' जे गढ़पाल कि मौज निहाल रहे हैं ।
आवत हैं जु गुनी जन दच्छिन भौंसिला के गुन गीत लहे हैं ।।

राजन राव सबै उमराव खुमान कि धाक धुके यों कहे हैं। संक नहीं, सरजा सिवराज सों आजु दुनी में गुनी निरभै हैं॥ १७१॥

[पर्य्यायोक्ति]

(लक्षण-दोहा)

बचनन की रचना जहाँ वर्णनीय पर जानि।
परजायोकति कहत हैं 'भूषन' ताहि बखानि॥ १७२॥

(उदाहरण—मनहरण दंडक)

महाराज सिवराज तेरे बैर देखियतु घन बन ह्वै रहे हरम हबसीन के। 'भूषन' भनत तेरे बैर रामनगर जवारि परबाह बहे रुधिर नदीन के॥ सरजा समत्थ बीर तेरे बैर बीजापुर बैरी-बैयरनि कर चीन्ह न चुरीन के। तेरे रोस देखियत आगरे दिली के बीच सिंदुर के बुंद मुख इंदु जमनीन के॥ १७३॥

[व्याजस्तुति]

(लक्षण-दोहा)

सुस्तुति में निंदा कहै निंदा में स्तुति होय।
व्याजस्तुति ताको कहत कवि 'भूषन' सब कोय॥ १७४॥

(उदाहरण-कवित्त मनहरण)

पीरी पीरी ह्वै तुम देत हो मँगाय हमैं सुबरन हम सों परखि करि लेत हो। एक पलही मैं लाख रूखन सों लेत लाग तुम राजा ह्वै कै लाख दीबे को सचेत हो॥ 'भूषन' भनत महराज सिवराज बड़े दानी दुनी ऊपर कहाए केहि हेत हौ? रीझि हँसि हाथी हमैं सब कोऊ देत कहा रीझि हँसि हाथी एक तुमहियौ देत हौ॥ १७५॥

तू तो रातो दिन जग जागत रहत वेऊ जागत रहत रातो दिन बन रत हैं। 'भूषन' भनत तू बिराजै रज भरो वेऊ रज भरे देहिन दरी मैं बिचरत हैं॥ तूतौ सूर गन को बिदारि बिहरत सूर-मंडलै बिदारि वेऊ सुरलोक रत हैं। काहे ते सिवाजी गाजी तेरोई सुजस होत तोसों अरिबर सरिबर सो करत हैं॥ १७६॥

[आक्षेप]

(लक्षण-दोहा)

पहिले कहिये बात कछु, पुनि ताको प्रतिषेध।
ताहि कहत आच्छेप हैं 'भूषन' सुकबि सुमेध॥ १७७॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

जाय भिरौ न भिरे बचिहौ भनि 'भूषन' भौंसिला भूप सिवा सों। जाय दरीन दुरौ दरिऔ तजिकै दरियाव लँघौ लघुता सों॥ सीछन काज वजीरन को कढ़ै बोल यों एदिल साहि सभा सों। छूटि गयो तौ गयो परनालो सलाह कि राह गहौ सरजा सों॥ १७८॥

(द्वितीय—लक्षण-दोहा)

जेहि निषेध आभास ही भनि 'भूषन' सो और।
कहत सकल आच्छेप हैं जे कबिकुल-सिरमौर॥ १६९॥

(उदाहरण कवित्त मनहरण)

पूरब के उत्तर के प्रबल पछाहँ हू के सब बादसाहन के गढ़ कोट हरते। 'भूषन' कहैं यों अवरंग सों वजीर जीति लीबे को पुरतगाल सागर उतरते॥ सरजा सिवा पर पठावत मुहीम काज हजरत हम मरिबे को नाहिंन हैं डरते। चाकर हैं उजुर कियो न जाय नेक पै कछू दिन उबरते तो घने काज करते॥ १८०॥

[विरोध—द्वितीय विषम]

(लक्षण-दोहा)

द्रव्य क्रिया गुन में जहाँ उपजत काज-विरोध।
ताको कहत विरोध हैं 'भूषन' सुकवि सुबोध ॥ १८१ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

श्रीसरजा सिव तो जस सेत सों होत हैं बैरिन के मुँह कारे। 'भूषन' तेरे अरुन्न प्रताप सपेद लखे कुनबा नृप सारे॥ साहि-तने तव कोप कृसानु ते बैरि गरे सब पानिप वारे। एक अचंभव होत बड़ो तिन ओंठ गहे अरि जात न जारे॥ १८२ ॥

[विरोधाभास]

(लक्षण-दोहा)

जहँ बिरोध सो जानिये, साँच बिरोध न होय।
तहाँ विरोधाभास कहि, बरनत हैं सब कोय ॥ १८३ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

दच्छिन नायक एक तुही भुव-भामिनि को अनुकूल ह्वै भावै। दीनदयाल न तो सो दुनी पर म्लेच्छ के दीनहिं मारि मिटावै॥ श्रीसिवराज भनै कवि 'भूषन' तेरे सरूप को कोउ न पावै। सूर सुबंस मै सूर-सिरोमनि ह्वै करि तू कुलचंद कहावै॥ १८४ ॥

[विभावना]

(लक्षण-दोहा)

भयो काज बिनु हेतुही, बरनत हैं जेहि ठौर।
तहँ विभावना होत है, कवि 'भूषन' सिरमौर॥ १८५ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

बीर बड़े बड़े मीर पठान खरो राजपूतन को गन भारो।
'भूषन' आय तहाँ सिवराज लयो हरि औरंगजेब को गारो॥
दीन्हों कुज्वाब दिलीपति को अरु कीन्हों वजीरन को मुँह कारो।
नायो न माथहि दक्खिननाथ न साथ मैं फौज न हाथ हथ्यारो॥ १८६॥

(दोहा)

साहितनै सिवराज की सहज टेव यह ऐन।
अनरीझे दारिद हरै, अनखीझे अरि-सैन॥ १८७॥

[और दो विभावना]

(लक्षण-दोहा)

जहाँ हेतु पूरन नहीं, उपजत है पर काज।
कै अहेतु ते और यों द्वै विभावना साज॥ १८८॥

(उदा०—अपूर्ण कारण के कार्य की उत्पत्ति—कवित्त मनहरण)

दच्छिन को दाब करि बैठो है सइस्त खान पूना महिं दूना करि जोर करवार को। हिंदुवान-खंभ गढ़पति दलथंभ भनि 'भूषन' भरैया कियो सुजस अपार को॥ मनसबदार चौकीदारन गँजाय महलन में मचाय महाभारत के भार को। तो सो को सिवाजी जेहि दो सौ आदमी सों जीत्यो जंग सरदार सौ हजार असवार को॥ १८९॥

(अहेतु से कार्य की उत्पत्ति)

ता दिन अखिल खलभले खल खलक हैं जा दिन सिवाजी गाजी नेक करखत हैं। सुनत नगारन अगार तजि अरिन की दारगन भाजत न बार परखत हैं॥ छूटे बार बार छूटे बारन ते

लाल देखि 'भूषन' सुकवि बरनत हरखत हैं। क्यों न उतपात होंहि बैरिन के झुंडन में कारे घन उमड़ि अंगारे बरखत हैं॥ १६० ॥

[और विभावना]

(लक्षण दोहा)

जहाँ प्रकट 'भूषन' भनत हेतु काज ते होय।
सो विभावना औरऊ कहत सयाने लोय ॥ १६१ ॥

(उदाहरण-दोहा)

अचरज 'भूषन' मन बढ़यो, श्रीसिवराज खुमान।
तव कृपान-धुव-धूम ते, भयो प्रताप कृसान ॥ १६२ ॥

(कवित्त मनहरण)

साहि-तनै सिव ! तेरो सुनत पुनीत नाम धाम धाम सब ही को पातक कटत है। तेरो जस काज आज सरजा निहारि कवि मन भोज विक्रम कथा ते उचटत है॥ 'भूषन' भनत तेरो दान-संकलप-जल अचरज सकल मही में लपटत है। और नदी नदन ते कोकनद होत तेरो कर-कोकनद नदी नद प्रगटत है ॥ १६३ ॥

[विशेषोक्ति]

(लक्षण-दोहा)

जहाँ हेतु समरथ भयहु प्रगट होत नहिं काज।
तहाँ बिषेसोकति कहत 'भूषन' कवि सिरताज ॥ १६४ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

दै दस पाँच रुपैयन को जग कोऊ नरेस उदार कहायो। 'भूषन' कोऊ गरीबन सों भिरि भीमहुँ ते बलवंत गनायो। कोटिन दान सिवा सरजा के सिपाहिन साहिन को बिचलायो॥ दौलति इंद्र समान बढ़ी पै खुमान के नेक गुमान न आयो॥ १६५ ॥

[असंभव]

(लक्षण-दोहा)

अनहूवे की बात कछु प्रगट भई सी जानि।
तहाँ असंभव बरनिए सोई नाम बखानि ॥ १९६ ॥

(उदाहरण—दोहा)

औरँग यों पछितात मैं करतो जतन अनेक।
सिवा लेइगो दुरग सब को जानै निसि एक ॥ १९७ ॥

(कवित्त मनहरण)

जसन के रोज यों जलूस गहि बैठो जोऽब इंद्र आवै सोऊ लागै औरँग की परजा। 'भूषन' भनत तहाँ सरजा सिवाजी गाजी तिनको तुजुक देखि नेकहू न लरजा ॥ ठान्यो न सलाम भान्यो साहि को इलाम धूम धाम कै न मान्यो राम सिंहहू को बरजा। जासों वैर करि भूप बचै न दिगन्त ताके दंत तोरि तखत तरे ते आयो सरजा ॥ १९८ ॥

[असंगति, प्रथम]

(लक्षण-दोहा)

हेतु अनत ही होय जहँ काज अनत ही होय।
ताहि असंगति कहत हैं 'भूषन' सुमति समोय ॥ १९९ ॥

(उदाहरण - कवित्त मनहरण)

महाराज सिवराज चढ़त तुरग पर ग्रीवा जात नै करि गनीम अतिबल की। 'भूषन' चलत सरजा की सैन भूमि पर छाती दरकत है खरी अखिल खल की ॥ कियो दौरि घाव उमरावन अमीरन पै गई कटि नाक सिगरेई दिली-दल की। सूरत जराई कियो दाह पातसाह उर स्याही जाय सब पातसाही मुख झलकी ॥ २०० ॥

[असंगति, द्वितीय]

(लक्षण दोहा)

आन ठौर करनीय सो करै और ही ठौर।
ताहि असंगति और कबि 'भूषन' कहत सगौर॥ २०१॥

(उदाहरण—मनहरण दंडक)

भूपति सिवाजी तेरी धाक सों सिपाहिन के राजा पातसाहिन के मन ते अहं गली। भौंसिला अभंग तू तौ जुरतो जहाँई जंग तेरी एक फते होत मानो सदा संग ली॥ साहि के सपूत पुहुमी के पुरहूत कवि 'भूषन' भनत तेरो खरगऊ दंगली। सत्रुन की सुकुमारी थहरानी सुन्दर औ सत्रु के अगारन मैं राखे जंतु जंगली॥ २०२॥

[असंगति, तृतीय]

(लक्षण-दोहा)

करन लगै औरै कछू करै औरई काज।
तहाँ असंगति होत है कहि 'भूषन' कविराज॥ २०३॥

(उदाहरण-मालती सवैया)

साहि तनै सरजा सिव के गुन नेकहु भाषि सक्यो न प्रबीनो।
उद्यत होत कछू करिबे को करै कछु बीर महा रस भीनो॥ ह्यांते गयो चकतै सुख देन को गोसलखाने गयो दुख दीनो! जाय दिल्ली दरगाह सुसाह को 'भूषन' बैरि बनाय ही लीनो॥ २०४॥

[विषम]

(लक्षण-दोहा)

कहाँ बात यह कहँ वहै, यों जहँ करत बखान।
तहाँ विषम भूषन कहत 'भूषन' सुकबि सुजान॥ २०५॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

जावलि बीर सिंगारपुरी औ जवारि को राम के नैरि को गाजी। 'भूषन' भौंसिला भूपति ते सब दूरि किए करि कीरति ताजी ॥ बैर कियो सिवाजी सों खवास खाँ डौंड़ियै सैन बिजैपूर बाजी। बापुरो एदिल साहि कहाँ कहाँ दिल्लि को दामनगीर सिवाजी ॥ २०६ ॥

लै परनालो सिवा सरजा करनाटक लौं सब देस बिगूँचे। बैरिन के भगे बालक वृन्द कहै कबि 'भूषन' दूरि पहूँचे ॥ नाँघत नाँघत घोर घने बन हारि परे यों कटे मनो कूँचे। राजकुमार कहाँ सुकुमार कहाँ बिकरार पहार वे ऊँचे ? ॥ २०७ ॥

[सम]

(लक्षण-दोहा)

जहाँ दुहूँ अनुरूप को करिए उचित बखान।
सम भूषन तासों कहत 'भूषन' सकल सुजान ॥ २०८ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

पंजहजारिन बीच खड़ा किया मैं उसका कुछ भेद न पाया। 'भूषन' यों कहि औरँगजेब उजीरन सों बेहिसाब रिसाया ॥ कम्मर की न कटारी दई इसलाम ने गोसलखाना बचाया। जोर सिवा करता अनरत्थ भली भई हत्थ हथ्यार न आया ॥ २०९ ॥

(दोहा)

कछु न भयो केतो गयो, हार्‌यो सकल सिपाह।
भली करै सिवराज सों, औरंग करै सलाह ॥ २१० ॥

[विचित्र]

(लक्षण-दोहा)

जहाँ करत हैं जतन फल, चित्त चाहि बिपरीत।
'भूषन' ताहि बिचित्र कहि, बरनत सुकबि बिनीत ॥ २११ ॥

(उदाहरण-दोहा)

तैं जयसिंहहिं गढ़ दिये, सिव सरजा जस-हेत।
लीन्हें कैयो बरस मैं, बार न लागी देत॥ २१२॥

(कवित्त मनहरण)

बीदर कल्यान दै परेभ्रा आदि कोट साहि एदिल गँवाय है नवाय निज सीस को। 'भूषन' भनत भागनगरी कुतुब साह दै करि गँवायो रामगिरि से गिरीस को॥ भौंसिला भुवाल साहि-तनै गढ़पाल दिन दोउ ना लगाए गढ़ लेत पँचतीस को। सरजा सिवाजी जयसाह मिरजा को लीने सौ गुनी बड़ाई गढ़ दीन्हे हैं दिलीस को॥ २१३॥

[प्रहर्षण]

(लक्षण-दोहा)

जहँ मन वांछित अरथ ते प्रापति कछु अधिकाय।
तहाँ प्रहरषन कहत हैं 'भूषन' जे कविराय॥ २१४॥

(उदाहरण-मनहरण दन्डक)

साहि-तनै सरजा की कीरति सों चारों ओर चाँदनी बितान छिति-छोर छाइयतु है। 'भूषन' भनत ऐसो भूप भौंसिला है जाको द्वार भिच्छुकन सों सदाई भाइयतु है॥ महादानि सिवाजी खुमान या जहान पर दान के प्रमान जाके यों गनाइ-यतु है। रजत की हौस किए हेम पाइयतु जासों हयन की हौस किए हाथी पाइयतु है॥ २१५॥

[विषादन]

(लक्षण-दोहा)

जहँ चितचाहे काज ते उपजत काज बिरुद्ध।
ताहि बिषादन कहत हैं 'भूषन' बुद्धि बिसुद्ध॥ २१६॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

दारहि दारि मुरादहि मारि कै संगर साह सुजै बिचलायो। कै कर मैं सब दिल्लि की दौलति औरहु देस घने अपनायो॥ बैर कियो सरजा सिव सों यह नौरँग के न भयो मन भायो। फौज पठाई हुती गढ़ लेन को गाँठिहु के गढ़ कोट गँवायो। २१७॥

(दोहा)

महाराज सिवराज तव बैरी तजि रस रुद्र।
बचिबे को सागर तिरे बूड़े सोक-समुद्र॥ २१८॥

[अधिक]

(लक्षण—दोहा)

जहाँ बड़े आधार ते बरनत बढ़ि आधेय।
ताहि अधिक 'भूषन' कहत जानि सुग्रन्थ प्रमेय॥ २१९॥

(उदाहरण दोहा)

सिव सरजा तव हाथ को नहिँ बखान करि जात।
जाको बासी सुजस सब त्रिभुवन मैं न समात। २२०॥

(कवित्त मनहरण)

सहज सलील सील जलद से नील डील पब्बय से पील देत नाहिं अकुलात हैं। 'भूषन' भनत महाराज सिवराज देत कंचन को ढेरु जो सुमेरु सो लखात है॥ सरजा सवाई कासों करि कबिताई तव हाथ की बड़ाई को बखान करि जात है? जाको जस टंक साते दीप नव खंड महि-मंडल की कहा ब्रह्मंड ना समात है॥ २२१॥

[अन्योन्य]

(लक्षण-दोहा)

अन्योन्या उपकार जहँ यह बरनन ठहराय।
ताहि अन्योन्या कहत हैं अलंकार कविराय॥ २२२॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

तो कर सों छिति छाजत दान है दान हू सों अति तो कर छाजै। तैंही गुनी की बड़ाई सजै अरु तेरी बड़ाई गुनी सब साजै॥ 'भूषन' तोहि सों राज बिराजत राज सों तू सिवराज बिराजै। तो बल सों गढ़ कोट गजैं अरु तू गढ़ कोटन के बल गाजै॥ २२३॥

[विशेष]

(लक्षण-दोहा)

बरनत हैं आधेय को, जहँ बिनही आधार।
ताहि बिसेष बखानहीं, 'भूषन' कबि-सरदार॥ २२४॥

(उदाहरण—दोहा)

सिव सरजा सों जंग जुरि, चंदावत रजवंत।
राव अमर गो अमरपुर, समर रही रजतंत॥ २२५॥

(कवित्त मनहरण)

सिवाजी खुमान सलहेरि मैं दिलीस-दल कीन्हों कतलाम करवाल गहि कर मैं। सुभट सराहे चंदावत कछवाहे मुगलौ पठान ढाहे फरकत परे फर मैं। 'भूषन' भनत भौंसिला के भट उद्भट जीति घर आए धाक फैली घर घर मैं। मारु के करैया अरि अमरपुरै गे तऊ अजौं मारु मारु सोर होत है समर मैं॥ २२६॥

[व्याघात]

(लक्षण-दोहा)

और काज करता जहाँ, करै औरई काज।
ताहि कहत व्याघात हैं, 'भूषन' कबि-सिरताज॥ २२७॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

ब्रह्म रचै पुरुषोत्तम पोसत संकर सृष्टि सँहारन हारे। तू हरि को अवतार सिवा नृप काज सँवारे सबै हरि वारे॥ 'भूषन' यों अवनी यवनी कहैं कोऊ कहै सरजा सों हहारे। तू सबको प्रतिपालनहार विचारे भतार न मारु हमारे॥ २२८॥

(कवित्त मनहरण)

कसत मैं बार बार बैसोई बलंद होत वैसोई सरस रूप समर भरत है। 'भूषन' भनत महराज सिवराज मनि, सघन सदाई जस फूलन धरत है॥ बरछी कृपान गोली तीर केते मान जोराबर गोला बान तिनहू को निदरत है। तेरो करवाल भयो जगत को ढाल, अब सोई हाल म्लेच्छन के काल को करत है॥ २२९॥

[कारणमाला, गुम्फ]

(लक्षण-दोहा)

पूरब पूरब हेतु कै, उत्तर उत्तर हेतु।
या बिधि धारा बरनिए गुम्फ कहावत नेतु॥ २३०॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

शंकर की किरपा सरजा पर जोर बढ़ी कवि 'भूषन' गाई। ता किरपा सों सुबुद्धि बढ़ी भुव भौंसिला साहि-तनै की सवाई॥ राज-सुबुद्धि सों दान बढ़्यो अरु दान सों पुन्य-समूह सदाई। पुन्य सों बाढ्यो सिवाजी खुमान खुमान सों बाढ़ी जहान-भलाई॥ २३१॥

(दोहा)

सुजस दान अरु दान धन, धन उपजै किरवान।
सो जग मैं जाहिर करी, सरजा सिवा खुमान॥ २३२॥

[एकावली]

(लक्षण-दोहा)

प्रथम बरनि जहँ छोड़िए. जहाँ अरथ की पाँति ।
बरनत एकावलि अहै कवि ' भूषन ' यहि भाँति ॥ २३३ ॥

(उदाहरण—हरिगीतिका छंद)

तिहुँ भुवन मैं ' भूषन ' भनै नरलोक पुन्य सुसाज मैं। नरलोक मैं तीरथ लसै महि तीरथों को समाज मैं ॥ महि मैं बड़ी महिमा भली महिमैं महारज लाज मैं। रज-लाज राजत आजु है महराज श्रीसिवराज मैं ॥ २३४ ॥

[मालादीपक एवं सार]

(लक्षण-दोहा)

दीपक एकावलि मिले. मालादीपक होय।
उत्तर उत्तर उतकरष, सार कहत हैं सोय ॥ २३५ ॥

(उदाहरण, माला दीपक—कवित्त मनहरण)

मन कवि ' भूषन ' को सिव की भगति जीत्यो सिव की भगति जीत्यो साधु-जन सेवा ने। साधु-जन जीते या कठिन कलिकाल कलिकाल महाबीर महाराज महिमेवा ने ॥ जगत में जीते महाबीर महाराजन ते महाराज बावन हू पातसाह लेवा ने । पातसाह बावनौ दिलो के पातसाह दिल्लीपति पातसाहै जीत्यो हिंदूपति सेवा ने ॥ २३६ ॥

(उदा० सार, मालती सवैया)

आदि बड़ी रचना है बिरंचि की जामैं रह्यौ रचि जीव जड़ो है। ता रचना महँ जीव बड़ो अति काहे ते ता उर ज्ञान गड़ो है। जीवन मैं नर लोग बड़े कवि ' भूषन ' भाषत पैज अड़ो है। है नर लोग मैं राज बड़ो सब राजन में सिवराज बड़ो है ॥ २३७ ॥

[यथासंख्य]

(लक्षण-दोहा)

क्रम सों कहि तिनके अरथ, क्रम सों बहुरि मिलाय।
यथासंख्य ताको कहैं 'भूषन' जे कबिराय॥ २३८॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

जेई चहौ तेई गहौ सरजा सिवाजी देस संके दल दुवन के जे वै बड़े उर के। 'भूषन' भनत भौंसिला सों अब सनमुख कोऊ न लरैया है धरैया धीर धुर के॥ अफजल खान, रुस्तमै-जमान, फत्ते खान खूटे कूटे लूटे जूटे ए उजीर बिजैपुर के। अमर सुजान मोहकम बहलोल खान खाँड़े छाँड़े डाँड़े उमराव दिलीसुर के॥ २३९॥

[पर्य्याय]

(लक्षण-दोहा)

एक अनेकन में रहै, एकहि में कि अनेक।
ताहि कहत परयाय हैं, 'भूषन' सुकबि बिबेक॥ २४०॥

(उदाहरण—दोहा)

जीति रही अवरंग मैं, सबै छत्रपति छाँड़ि।
तजि ताहू कौ अब रही शिव सरजा कर माँड़ि॥ २४१॥

(कवित्त मनहरण)

गढ़ दै कै माल मुलुक मैं बीजापुरी गोलकुंडा-वारी पीछे ही को सरकतु है। 'भूषन' भनत भौंसिला-भुवाल-भुजबल रेवा ही के पार अवरंग हरकतु है। पेसकसै भेजत इरान फिरँगान पति उनहू के उर याकी धाक धरकतु है। साहितनै सिवाजी खुमान या जहान पर कौन पातसाह के न हिए खर-कतु है ?॥ २४२॥

अगर के धूप धूम उठत जहाँई तहाँ उठत बगूरे अब अति ही अमाप हैं। जहाँई कलावँत अलापैं मधुर स्वर तहाँ भूत प्रेत अब करत बिलाप हैं ॥ 'भूषन' सिवाजी सरजा के बैर बैरिन के डेरन में परे मनो काहु के सराप हैं। बाजत रहे जिन महलन में मृदंग तहाँ गाजत मतंग सिंह बाघ दीह दाप हैं ॥ २४३ ॥

[परिवृत्ति]

(लक्षण-दोहा)

एक बात को दै जहाँ आन बात को लेत।
ताहि कहत परिवृत्ति है 'भूषन' सुकबि सचेत ॥ २४४ ॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

दच्छिन-धरन धीर-धरन खुमान गढ़ लेत गढ़-धरन सों धरम दुवारु दै। साहि नरनाह को सपूत महाबाहु लेत मुलुक महान छीनि साहन को मारु दै ॥ संगर मैं सरजा सिवाजी अरि सैनन को सारु हरि लेत हिंदुवान-सिर सारु दै। 'भूषन' भुँसिल जय जस को पहारु लेत हरजू को हारु हरगन को अहारु दै ॥ २४५ ॥

[परिसंख्या]

(लक्षण-दोहा)

अनत बरजि कछु बस्तु जहँ बरनत एकहि ठौर।
तेहि परिसंख्या कहत हैं 'भूषन, कबि दिलदौर ॥ २४६ ॥

(उदाहरण—मनहरण दंडक)

अति मतवारे जहाँ दुरदै निहारियत तुरगन ही में चंचलाई परकीति है। 'भूषन' भनत जहाँ पर लगैं बानन मैं कोक पच्छि-नहि माहिँ बिछुरन रीति है। गुनिगन चोर जहाँ एक चित

ही के, लोक बँधैं जहाँ एक सरजा की गुन प्रीति है। कंप कदली मैं बारि बुन्द बदली मैं सिवराज अदली के राज मैं यों राजनीति है ॥ २४७ ॥

[विकल्प]

(लक्षण-दोहा)

कै वह कै यह कीजिये जहँ कहनावति होय ।
ताहि बिकल्प बखानहीं 'भूषन' कवि सब कोय ॥ २४८ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

मोरँग जाहु कि जाहु कुमाऊँ सिरीनगरै कि कबित्त बनाए। बाँधव जाहु कि जाहु अमेरि कि जोधपुरै कि चितौरहि धाए॥ जाहु कुतुब्ब कि एदिल पै कि दिलीसहु पै किन जाहु बोलाए। 'भूषन' गाय फिरो महि मैं बनिहै चित चाह सिवाहि रिझाए ॥ २४९ ॥

(मालती सवैया)

देसन देसन नारि नरेसन 'भूषन' यों सिख देहिं दया सों। मंगन ह्वै करि, दंत गहो तिन, कंत तुम्हैं हैं अनन्त महा सों ॥ कोट गहौ कि गहौ बन ओट कि फौज की जोट सजौ प्रभुता सों। और करौ किन कोटिक राह सलाह बिना बचिहौ न सिवा सों ॥ २५० ॥

[समाधि]

(लक्षण-दोहा)

और हेतु मिलि कै जहाँ होत सुगम अति काज ।
ताहि समाधि बखानहीं 'भूषन' जे कविराज ॥ २५१ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

बैर कियो सिव चाहत हो तब लौं अरि बाह्यो कटार कठैठो। योंहीं मलिच्छहि छाँड़ै नहीं सरजा मन तापर रोस मैं

पैठो ।। 'भूषन' क्यों अफजल्ल बचै अठपाव के सिंह को पाँव उमैठो। बीछू के घाव धुक्योई धरक ह्वै तौ लगि धाय धराधर बैठो ॥ २५२ ।'

[समुच्चय]

(लक्षण-दोहा)

एक बारही जहँ भयो बहु काजन को बंध ।
ताहि समुच्चय कहत हैं 'भूषन' जे मतिबंध ॥ २५३ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

माँगि पठायो सिवा कछु देस वजीर अजानन बोल गहे ना ।
दौरि लियो सरजा परनालो यों 'भूषन' जो दिन दोय लगे ना ॥
धाक सों खाक बिजैपुर भो मुख आयगो खान खवास के फेना ।
भै भरकी करकी धरकी दरकी दिल एदिल साहि के सेना ॥ २५४ ॥

[द्वितीय समुच्चय]

(लक्षण-दोहा)

वस्तु अनेकन को जहाँ बरनत एकहि ठौर ।
दुतिय समुच्चय ताहि को कहि 'भूषन' कविमौर ॥ २५५ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

सुन्दरता गुरुता प्रभुता भनि 'भूषन' होत है आदर जा मैं। सज्जनता औ दयालुता दीनता कोमलता झलकै परजा मैं ॥ दान कृपानहु को करिबो करिबो अभै दीनन को वर जा मैं। साहन सों रन-टेक बिवेक इते गुन एक सिवा सरजा मैं ॥ २५६ ॥

[प्रत्यनीक]

(लक्षण - दोहा)

जहँ जोरावर शत्रु के पच्छी पै कर जोर ।
प्रत्यनीक तासों कहै 'भूषन' बुद्धि अमोर ॥ २५७ ॥

(उदाहरण—अलसा सवैया)

लाज धरौ सिवजू सो लरौ सब सैयद सेख पठान पठाय कै। 'भूषन' ह्याँ गढ़ कोटन हारे उहाँ तुम क्यों मठ तोरे रिसाय कै ?॥ हिंदुन के पति सों न बिसात सतावत हिंदु गरीबन पाय कै। लीजै कलंक न दिल्लि के बालम आलम आलमगीर कहाय कै ॥ २५८ ॥

(कवित्त मनहरण)

गोर गरबीले अरबीले राठउर गह्यो लोहगढ़ सिंहगढ़ हिम्मति हरष ते। कोट के कँगूरन मैं गोलंदाज तीरंदाज राखे हैं लगाय गोली तीरन बरषते ॥ कै कै सावधान किरवान कसि कम्मरन सुभट अमान चहुँ ओरन करषते। 'भूषन' भनत तहाँ सरजा सिवा तें चढ़ो राति के सहारे ते अराति-अमरष ते ॥ २५९ ॥

[अर्थापत्ति]

(लक्षण-दोहा)

"वह कीन्ह्यो तौ यह कहा" यों कहनावति होय।
अर्थापत्ति बखानहीं तहाँ सयाने लोय ॥ २६० ॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

सयन मैं साहन को सुन्दरी सिखावैं ऐसे सरजा सों बैर जनि करौ महाबली है। पेसकसैं भेजत बिलायती पुरुतगाल सुनिकै सहमि जात करनाट थली है ॥ 'भूषन' भनत गढ़कोट माल मुलुक दै सिवा सों सलाह राखिए तौ बात भली है। जाहि देत दण्ड सब डरिकै अखंड सोई दिल्ली दलमली तौ तिहारी कहा चली है ? ॥ २६१ ॥

[काव्यलिङ्ग]

(लक्षण दोहा)

है दिढ़ाइबे जोग जो ताको करत दिढ़ाव।
काव्यलिंग तासों कहैं भूषन जे कबिराव ॥ २६२ ॥

(उदाहरण—मनहरण दण्डक)

साइति लै लीजिए बिलाइति को सर कीजै बलख बिलायति को बन्दि अरि हावरे ; 'भूषन' भनत कीजै उत्तरी भुवाल बस पूरब के लीजिए रसाल गज छावरे।। दच्छिन के नाथ के सिपाहिन सों बैर करि अवरंग साहिजू कहाइए न बावरे। कैसे सिवराज मानु देत अवरंगै गढ़ गाढ़े गढ़पती गढ़ लीन्हें और रावरे ॥ २६३ ॥

[अर्थान्तरन्यास]

(लक्षण-दोहा)

कह्यो अरथ जहँ ही लियो और अरथ उल्लेख।
सो अर्थांतरन्यास है कहि सामान्य बिसेख ॥ २६४ ॥

(उदाहरण- सामान्य भेद-कवित्त मनहरण)

बिना चतुरंग संग बानरन लैकै बाँधि बारिधि को लंक रघुनन्दन जराई है। पारथ अकेले द्रोन भीषम से लाख भट जीति लीन्ही नगरी बिराट में बड़ाई है। 'भूषन' भनत है गुसुलखाने मैं खुमान अवरंग-साहिबी हथ्याय हरि लाई है। तौ कहा अचम्भो महराज सिवराज सदा बीरन के हिम्मतै हथ्यार होत आई है ॥ २६५ ॥

(विशेष भेद—मालती सवैया)

साहि-तनै सरजा समरत्थ करी करनी धरनी पर नीकी।
भूलिगे भोज से बिक्रम से औ भई बलि बेनु की कीरति फीकी ॥
'भूषन' भिच्छुक भूप भए भलि भीख लै केवल भौंसिला ही की।
नैसुक रीझि धनेस करै, लखि ऐसियै रीति सदा सिवजी की ॥ २६६ ॥

[प्रौढ़ोक्ति]

(लक्षण-दोहा)

जहँ उतकरष अहेत को बरनत हैं करि हेत ।
प्रौढ़ोकति तासों कहत 'भूषन' कवि बिरदैत ॥ २६७ ॥

(उदाहरण-कवित्त मनहरण)

मानसर-वासी हंस-बंस न समान होत, चंदन सों घस्यो घन-सारऊ घरीक है । नारद को सारद की हाँसी मैं कहाँ सो आभ सरद की सुरसरी कौन पुंडरीक है ॥ 'भूषन' भनत छक्यो छीरधि मैं थाह लेत फेन लपटानो ऐरावत को करो कहै ? । कयलास-ईस ईस-सीस रजनीस वहाँ अवनीस सिवा के न जस को सरीक है ॥ २६८ ॥

[संभावना]

(लक्षण-दोहा)

"जु यों होय तौ होय इमि" जहँ संभावन होय ।
ताहि कहत संभावना क ब 'भूषन' सब कोय ॥ २६९ ॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

लोमस की ऐसी आयु होय कौन हू उपाय तापर कवच जो कारनवारो धरिए । ताहू पर हूजिए महसबाहु ताहु पर सहस गुनो साहस जो भीमहू ते करिए ॥ 'भूषन' कहैं यों अवरँगजू सों उमराव नाहक कहौ तौ जाय दच्छिन में मरिए। चलै न कछू इलाज भेजियत बेही काज ऐसो होय साज तौ सिवा सों जाय लरिए ॥ २७० ॥

[मिथ्याध्यवसित]

(लक्षण-दोहा)

झूठ अरथ की सिद्धि को झूठो बरनत आन ।
मिथ्याध्यवसित कहत हैं 'भूषन' सुकबि सुजान ॥ २७१ ॥

(उदाहरण—दोहा)

पग रन मैं चल यों लसै ज्यों अंगद पग ऐन ।
ध्रुव सो ध्रुव सो मेरु सो सिव सरजा को बैन ॥ २७२ ॥

(कवित्त मनहरण)

मेरु-सम छोटो पन, सागर सो छोटो मन, धनद को धन ऐसो छोटो जग जाहि को । सूरज सो सीरो तेज, चाँदनी सी कारी किर्त्ति, अमिय सो कटु लागै दरसन ताहि को ॥ कुलिस सो कोमल कृपान अरि भंजिबे को 'भूषन' भनत भारो भूप भौंसिलाहि को । ध्रुव सम चल पद सदा महि-मंडल में, ध्रुव सो चपल ध्रुव-बल सिव साहि को ॥ २७३ ॥

[उल्लास]

(लक्षण-दोहा)

एकहि के गुन दोष ते, औरै को गुन-दोस ।
बरनत हैं उल्लास सो सकल सुकवि मतिपोस ॥ २७४ ॥

(उदाहरण, गुण से दोष-मालती सवैया)

काज मही सिवराज बली हिंदुवान बढ़ाइबे को उर ऊटै । 'भूषन' भू निरम्लेच्छ करी चहै, म्लेच्छन मारिबे को रन जूटै ॥ हिन्दु बचाय बचाय यही अमरेस चँदावत लौं कोइ टूटै । चंद अलोक ते लोक सुखी यहि कोक अभागे को सोक न छूटै ॥ २७५ ॥

(दोष से गुण-मनहरण दण्डक)

देस दहपट्ट कीने, लूटि कै खजाने लीने, बचै न गढ़ोई काहू गढ़ सिरताज के । तोरादार सकल तिहारे मनसबदार डांड़े

जिनके सुभाय जंग दै मिजाज के । भूषन' भनत बादशाह को यों लोग सब बचन सिखावत सलाह का इलाज के। डावरे की बुद्धि है कै बावरे न कीजै बैरु रावरे के बैर होत काज सिवराज के ॥ २७६ ॥

(गुण से गुण दोहा)

नृप-सभान मैं आपनी होन बड़ाई काज ।
साहितनै सिवराज के करत कबित कविराज ॥ २७७ ॥

(दोष से दोष दोहा)

सिव सरजा के बैर को यह फल आलमगीर ।
छूटे तेरे गढ़ सबै कूटे गए वजीर ॥ २७८ ॥

(मनहरण दंडक)

दौलति दिली को पाय और कहाय आलमगीर बब्बर अकब्बर के बिरद बिसार तैं । 'भूषन' भनत लरि लरि सरजा सों जंग निपट अभङ्ग गढ़ कोट सब हारे तैं ॥ सुधर्यो न एकौ साज भेजि भेजि बे ही काज बड़े बड़े बे इलाज उमराव मारे तैं । मेरे कहे मेर करु, सिवाजी सों बैर करि गैर करि नैर निज नाहक उजारे तैं ॥ २७९ ॥

[अवज्ञा]

(लक्षण-दोहा)

औरै के गुन दोस ते होत न जहँ गुन दोस ।
तहाँ अवज्ञा होत है भनि 'भूषन' मतिपोस ॥ २८० ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

औरन के अनबाढ़े कहा अरु बाढ़े कहा नहिं होत चहा है, औरन के अनरीझे कहा अरु रीझे कहा न मिटावत हा है ॥ 'भूषन' श्री सिवराजहि माँगिए एक दुनी बिच दानि महा है। मंगन औरन के दरबार गए तौ कहा न गए तौ कहा है ? ॥ २८१ ॥

[अनुज्ञा]

(लक्षण-दोहा)

जहाँ सरस गुन देखि कै करै दोस की हौस।
तहाँ अनुज्ञा होत है 'भूषन' कबि यहि रौस ॥ २८२ ॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

जाहिर जहान सुनि दान के बखान आजु महादानि साहि-तनै गरिबनेवाज के 'भूषन' जवाहिर जलूस जरबाफ जोति देखि देखि सरजा की सुकवि समाज के॥ तप करि करि कमलापति सों माँगत यों लोग सब करि करि मनोरथ ऐसे साज के। बैपारी जहाज के न राजा भारी राज के भिखारी हमैं कीजै महाराज सिवराज के॥ २८३ ॥

[लेश]

(लक्षण-दोहा)

जहँ बरनत गुन दोष कै कहै दोष गुन रूप।
'भूषन' ताको लेस कहि गावत सुकवि अनूप। २८४ ॥

(उदाहरण—दोहा)

उदैभानु राठौर बर धरि धीरज, गढ़, ऐंड़।
प्रगटै फल ताको लह्यौ परिगो सुर-पुर-पैंड़ ॥ २८५ ॥
कोऊ बचत न सामुहें सरजा सों रन साजि।
भली करी पिय ! समर ते जिय लै आए भाजि ॥ २८६ ॥

[तद्गुण]

(लक्षण-दोहा)

जहाँ आपनो रंग तजि गहै और को रंग।
ताको तद्गुन कहत हैं 'भूषन' बुद्धि उतंग ॥ २८७ ॥

(उदाहरण – मनहरण दंडक)

पंपा मानसर आदि अगन तलाब लागे जेहि के परन मैं अकथ युत गथ के। 'भूषन' यों साज्यो रायगढ़ सिवराज रहे देव चक चाहि कै बनाए राजपथ के॥ बिन अवलंब कलिकानि आसमान मैं ह्वै होत बिसराम जहाँ इन्दु औ उदथ के। महत उतंग मनि-जोतिन के संग आनि कैयो रंग चकहा गहत रबि-रथ के ॥ २८८ ॥

[पूर्वरूप]

(लक्षण-दोहा)

प्रथम रूप मिटि जात जहँ फिरि वैसोई होय।
'भूषन' पूरब रूप सो कहत सयाने लोय । २८९ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

ब्रह्म के आनन ते निकसे ते अत्यन्त पुनीत तिहूँ पुर मानी। राम युधिष्ठिर के बरने बलमीकिहु-व्यास के अंग सोहानी॥ 'भूषन' यों कलि के कबिराजन राजन के गुन पाय नसानी। पुन्य चरित्र सिवा सरजै सर न्हाय पवित्र भई पुनि बानी ॥२९०॥

यों सिर पै छहरावत छार हैं जाते उठैं असमान बगूरे। 'भूषन' भूधरऊ धरकैं जिनके धुनि धक्कन यों बल रूरे॥ ते सरजा सिवराज दिए कबिराजन को गजराज गरूरे। सुन्डन सों पहिले जिन सोखि कै फेरि महामद सों नद पूरे॥ २९१ ॥

श्रीसरजा सलहेरि के जूझ घने उमरावन के घर घाले। कुम्भ चँदावत सैद पठान कबंधन धावत भूधर हाले॥ 'भूषन' यों सिवराज कि धाक भए पियरे अरुने रँग वाले। लोहै कटे लपटे अति लोहु भए मुँह मीरन के पुनि लाले॥ २९२ ॥

यों कबि 'भूषन' भाषत है यक तौ पहिले कलिकाल कि सैली।
तापर हिंदुन को सब राह सुनौरँग साह करी अति मैली॥
साहि तनै सिव के डर सों तुरको गहि बारिधि की गति पैली।
बेद पुरानन की चरचा अरचा द्विज देवन की फिर फैली॥ २९३॥

[अतद्गुण]

(लक्षण-दोहा)

जहँ संगति ते और को गुन कछूक नहिं लेत।
ताहि अतद्गन कहत है 'भूषन' सुकबि सचेत॥ २९४॥

(उदाहरण – मालती सवैया)

दीनदयालु दुनी-प्रतिपालक जे करता निरम्लेच्छ मही के।
'भूषन' भूधर उद्धरिबो सुने और जिते गुन ते सब जी के।
या कलि मैं अवतार लियो तऊ तेई सुभाय सिवाजी बली के।
आय धर्यो हरि ते नर रूप पै काज करै सिगरे हरि ही के॥ २९५॥

(कवित्त मनहरण)

सिवाजी खुमान तेरो खग्ग बढ़े मान बढ़े मानस लौं बदलत कुरुख उछाह ते। 'भूषन' भनत क्यों न जाहिर जहान होय प्यार पाय तो से ही दिपत नरनाह ते॥ परताप फैलो रहो सुजस लपेटो रहो बरनत खरो नर पानिप अथाह ते। रंग रंग रिपुन के रकत सों रँगो रहै राता दिन रातो पै न रातो होत स्याह ते॥ २९६॥

(दोहा)

सिव सरजा की जगत मैं राजत कीरति नौल।
अरि-तिय अञ्जन दृग हरै तऊ धौल की धौल॥ २९७॥

[अनुगुन]

(लक्षण-दोहा)

जहाँ और के संग ते बढ़ै आपनो रङ्ग ।
ता कहँ अनुगुन कहत हैं 'भूषन' बुद्धि उतंग ॥ २६८ ॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

साहि-तनै सरजा सिवा के सनमुख आय कोऊ बचि जाय न गनीम भुजबल मैं। 'भूषन 'भनत भौंसिला की दिल दौर सुनि धाक ह्वां मरत म्लेच्छ औरँग के दल मैं ॥ रातो दिन रोवत रहत यवनी हैं सोक परोई रहत दिल्ली आगरे सकल मैं। कज्जल कलित अँसुवान के उमंग संग दूनी होत रोज रंग जमुना के जल मैं ॥ २६६ ॥

[मीलित]

(लक्षण-दोहा)

सदृस वस्तु में मिलि जहाँ भेद न नेक लखाय ।
ताको मीलित कहत हैं 'भूषन' जे कबिराय ॥ ३०० ॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

इंद्र निज हेरत फिरत गज-इंद्र अरु इंद्र को अनुज हेरै दुगधनदीस को। 'भूषन' भनत सुरसरिता को हंस हेरै, बिधि हेरै हंस को, चकोर रजनीस को ॥ साहि-तनै सिवराज करनी करी है तैं जु होत है अचम्भो देव कोटि यों तैंतीस को। पावत न हेरे तेरे जस मैं हिराने निज गिरि को गिरीस हेरैं गिरिजा गिरीस को ॥ ३०१ ॥

[उन्मीलित]

(लक्षण-दोहा)

सदृस वस्तु मैं मिलत पुनि जानत कौनेहु हेत ।
उनमीलित तासों कहत 'भूषन' सुकबि सचेत ॥ १०२ ॥

(उदाहरण दोहा)

सिव सरजा तब सुजस मैं मिले धौल छबि तूल ।
बोल बास ते जानिए हंस चमेली फूल ॥ १०३ ॥

[सामान्य]

(लक्षण-दोहा)

भिन्न रूप जहँ सदृस ते भेद न जान्यो जाय ।
ताहि कहत सामान्य हैं 'भूषन' कबि समुदाय ॥ २०४ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

पावस की यक राति भली सु महाबली सिंह सिवा गमके ते। म्लेच्छ हजारन ही कटि गे दस ही मरहट्टन के झमके ते ॥ 'भूषन' हालि उठे गढ़भूमि पठान-कबन्धन के धमके ते। मीरन के अवसान गये मिलि धोपनि सों चपला चमके ते ॥ २०५ ॥

[विशेषक]

(लक्षण-दोहा)

भिन्न रूप सादृश्य मैं लहिए कछू बिसेख ।
ताहि बिशेषक कहत हैं 'भूषन' सुमति उलेख ।

(उदाहरण—कबित्त मनहरण)

अहमदनगर के थान किरवान लै कै जब नवसेरी खान ते खुमान भिर्‌यो बल ते। प्यादन सों प्यादे पखरैतन सों पखरैत बखतरवारे बखतरवारे हल ते ॥ 'भूषन' भनत एते

मान घमसान भयो जान्यो न परत कौन आयो कौन दल ते। सम बेष ताके, तहाँ सरजा सिवा के बाँके बीर जाने हाँके देत, मीर जाने चलते ॥३०७॥

[पिहित]

(लक्षण-दोहा)

परके मन की जानि गति ताको देत जनाय।
कछू क्रिया करि, कहत हैं पिहित ताहि कबिराय ॥३०८॥

(उदाहरण-दोहा)

गैर मिसिल ठाढ़ो सिवा अंतरजामी नाम।
प्रकट करी रिस साह को सरजा करि न सलाम ॥३०९॥
आनि मिल्यो अरि यों गह्यो चखन चकत्ता चाव।
साहि-तनै सरजा सिवा दियो मुच्छ पर ताव ॥३१०॥

[प्रश्नोत्तर]

(लक्षण-दोहा)

कोऊ बूझै बात कछु कोऊ उत्तर देत।
प्रश्नोत्तर ताको कहत 'भूषन' सुकवि सचेत ॥ ३११॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

लोगन सो भनि 'भूषन' यों कहै खान खवास कहा सिख दैहौ। आवत देसन लेत सिवा सरजै मिलिहौ भिरिहा कि भगैहौ॥ एदिल की सभा बोलि उठी यों सलाह करौऽब कहाँ भजि जैहो। लीन्हो कहा लरिके अफजल्ल कहा लरिकै तुमहू अब लैहो ?॥ ३१२॥

(दोहा)

को दाता को रन चढ़ो, को जग-पालनहार ?।
कबि 'भूषन' उत्तर दियो सिव नृप हरि-अवतार ॥३१३॥

[व्याजोक्ति]

(लक्षण-दोहा)

आन हेतु सों आपनो जहाँ छिपावै रूप ।
व्याज-उकुति तासों कहत 'भूषन' सुकबि अनूप ॥ ३१४ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

साहिन के उमराव जितेक सिवा सरजा सब लूटि लए हैं । 'भूषन' ते बिन दौलति ह्वै कै फकीर ह्वै देस बिदेस गए हैं ॥ लोग कहैं इमि दच्छिन जेय सिसौदिया रावरे हाल ठए हैं । देत रिसाय कै उत्तर यों हमहीं दुनया ते उदास भए हैं ॥ ३१५ ॥

(दोहा)

सिवा-बैर औरंग-बदन लगी रहै नित आहि ।
कबि 'भूषन' बूझे सदा कहै देत दुख साहि ॥ ३१६ ॥

[लोकोक्ति एवं छेकोक्ति]

(लक्षण-दोहा)

कहनावति जो लोक की लोक-उकुति सो जानि ।
जहाँ कहत उपमान ह्वै छेक-उकुति तेहि मानि ॥ ३१७ ॥

(उदाहरण—लोकोक्ति, दोहा)

सिव सरजा की सुधि करौ भली न कीन्ही पीव ।
सूबा ह्वै दच्छिन चले धरे जात कित जीव ? ॥ ३१८ ॥

(उदाहरण—छेकोक्ति, दोहा)

जे सोहात सिवराज को ते कबित्त रसमूल ।
जे परमेश्वर पै चढ़ैं तेई आछे फूल ॥ ३१९ ॥

(किरीट सवैया)

औरंग जो चढ़ि दक्खिन आवै तो ह्याँ ते सिधावै सोऊ बिनु कप्पर । दीनो मुहीम को भार बहादुर छागो सहै क्यों गयंद को

झप्पर ? ॥ सासता खाँ सँग वे हठि हारे जे साहब सातएँ ठीक भुवप्पर। ये अब सूबहु आवैं सिवा पर "कालिह के जोगो कलींदे को खप्पर" ॥ ३२० ॥

[वक्रोक्ति]

(लक्षण-दोहा)

जहाँ श्लेष सों काकु सों अरथ लगावै और।
वक्र उकुति ताको कहत 'भूषन' कवि सिरमौर ॥ ३२१ ॥

(उदा० श्लेष से वक्रोक्ति—कवित्त मनहरण)

साहि-तनै तेरे बैर बैरनि को कौतुक सों बूझत फिरत कह काहे रहे तचि हौ ? । सरजा के डर हम आए इतै भाजि तब सिंह सों डराय याहू ठौर ते उकचि हौ । 'भूषन' भनत वै कहैं कि हम सिव कहैं तुम चतुराई सों कहत बात रचि हौ। सिव जापै रूठैं तौ निपट कठिनाई तुम बैर त्रिपुरारि के त्रिलोक मैं न बचिहौ ॥ ३२२ ॥

(काकु से वक्रोक्ति—कवित्त मनहरण)

सासता खाँ दक्खिन को प्रथम पठायो तेहि बेटा के समेत हाथ जाय कै गँवायो है। 'भूषन' भनत जौलौं भेजो उत औ तिन वे ही काज बरजोर कटक कटायो है ॥ जोई सूबेदार जात सिवाजी सो हारि तासों अवरंग साहि इमि कहै मन भायो है। मुलुक लुटायो तौ लुटायो, कहा भयो ? तन आपनो बचायो महाकाज करि आयो है ॥ ३२३ ॥

(दोहा)

करि मुहीम आये कहत हजरत मनसब दैन।
सिव सरजा सो जंग जुरि ऐहैं बचिकै है न ॥ ३२४ ॥

[स्वभावोक्ति]

(लक्षण-दोहा)

साँचो तैसो बरनिए जैसो जाति स्वभाव।
ताहि सुभाबोकति कहत 'भूषन' जे कबिराव ॥ ३२५ ॥

(उदाहरण—मनहरण दण्डक)

दान समै द्विज देखि मेरहू कुबेरहू की संपति लुटायबे को हियो ललकत है। साहि के सपूत सिव साहि के बदन पर सिव की कथान मैं सनेह झलकत है॥ 'भूषन' जहान हिंदुवान के उबारिबे को तुरकान मारिबे को बीर बलकत है। साहिन सों लरिबे की चरचा चलत आनि सरजा के दृगन उछाह छलकत है॥ ३२६ ॥

काहू के कहे सुने ते जाही ओर चाहैं ताही ओर इकटक घरी चारिक चहत हैं। कहे ते कहत बात, कहे ते पियत खात, 'भूषन' भनत ऊँची साँसन जहत हैं॥ पौढ़े हैं तौ पाढ़े, बैठे बैठे, खरे खरे, हम को हैं? कहा करत? यों ज्ञान न गहत हैं। साहि के सपूत सिव साहि तव बैर इमि साहि सब रातौं दिन सोचत रहत हैं॥ ३२७ ॥

उमड़ि कुड़ाल मैं खवास खान आए भनि 'भूषन' त्यों धाए सिवराज पूरे मन के। सुनि मरदाने बाजे हय हिहनाने घोर मूछैं तरराने मुख बीर धीर जन के॥ एकै कहैं मार मार सम्हरि समर एकै म्लेच्छ गिरे मार बीच बेसम्हार तन के। कुंडन के ऊपर कड़ाके उठै ठौर ठौर जीरन के ऊपर खड़ाके खड़गन के॥ ३२८ ॥

आगे आगे तरुन तरायले चलत चले तिनके अमोद मंद मंद मोद सकसै। अड़दार बड़े गड़दारन के हाँके सुनि अड़े गैर गैर माहिं रोस रस अकसै॥ तुंडनाग्र सुनि गरजत गुंजरत

औार 'भूषन' भनत तेऊ महा मद छकसै। कीरति के काज महाराज सिवराज सब ऐसे गजराज कविराजन को बकसै ॥ ३२६ ॥

[भाविक]

(लक्षण-दोहा)

भयो होनहारो अरथ बरनत जहँ परतच्छ।
ताको भाविक कहत हैं 'भूषन' कवि मति स्वच्छ ॥ ३३० ॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

अजौं भूतनाथ मुंडमाल लेत हरषत भूतन अहार लेत अजहूँ उछाह है। 'भूषन' भनत अजौं काटे करवालन के कारे कुंजरन परे कठिन कराह है ॥ सिंह सिवराज सलहेरि के समीप ऐसो कीन्हों कतलाम दिली-दल को सिपाह है। नदी रन मंडल रुहेलन-रुधिर अजौं अजौं रविमंडल रुहेलन की राह है ॥ ३३१ ॥

गजघटा उमड़ी महा घटघटा सी घोर भूतल सकल मदजल सौं पटत है। बेला छाँड़ि उछलत सातौं सिंधु वारि मन मुदित महेस मग नाचत कढ़त है ॥ 'भूषन' बढ़त भौंसिला भुवाल को यों तेज जेतो सब बारहौ तरनि मैं बढ़त है। सिवाजी खुमान दल दौरत जहान पर आनि तुरकान पर प्रलै प्रगटत है ॥ ३३२ ॥

[भाविक छबि]

(लक्षण-दोहा)

जहँ दूर स्थित बस्तु को देखत बरनत कोय।
भूषन 'भूषन' राज भनि भाविक छबि सो होय ॥ ३३३ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

सूबन साजि पठावत है नित फौज लखे मरहट्टन केरी। औरँग आपनि दुग्ग-जमाति बिलोकत तेरियै फौज दरेरी॥ साहि तनै सिव साहि भई भनि 'भूषन' यों तुव धाक घनेरी। रातहु द्यौस दिलीस तकै तुव सैन कि सूरति सूरति घेरी॥ ३३४॥

[उदात्त]

(लक्षण-दोहा)

अति संपति बरनन जहाँ तासों कहत उदात।
कै आनै सु लखाइये बड़ी आन की बात॥ ३३५॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

द्वारन मतंग दीसैं आँगन तुरंग हीसैं बंदीजन बारन असीसैं जसरत हैं। 'भूषन' बखानै जरबाफ के सम्याने ताने झालरन मोतिन के झुंड झलरत हैं॥ महाराज सिवा के नेवाजे कविराज ऐसे साजि कै समाज तेहि ठौर बिहरत हैं। लाल करैं प्रात तहाँ नीलमनि करैं रात याही भाँति सरजा की चरचा करत हैं॥ ३३६॥

जाहु जनि आगे खता खाहु मति यारो गढ़नाह के डरन कहैं खान यों बखान कै। 'भूषन' खुमान यह सो है जेहिं पूना माहि लाखन मैं सासता खाँ डार्‌यो बिन मान कै॥ हिन्दुवान द्रुपदी की इज्जति बचैवे काज झपटि बिराटपुर बाहर प्रमान कै। वहै है सिवा जो जेहि भीम अकेले मार्‌यो अफजल कीचक को कीच घमसान कै॥ ३३७॥

(दोहा)

या पूना मैं मति टिकौ खान बहादुर आय।
ह्यांई साइत खान को दीन्ही सिवा सजाय॥ ३३८॥

[अत्युक्ति]

(लक्षण-दोहा)

जहाँ सूरतादिकन की अति अधिकाई होय।
ताहि कहत अति उक्ति हैं 'भूषन' जे कवि लोय ॥ ३३९ ॥

(उदाहरण— मनहरण दंडक)

साहि तनै सिवराज ऐसे देत गजराज जिन्हैं पाय होत कविराज बे फिकिर हैं। झूलत झलमलात झूलैं जरवाफन की जकरे जँजीर जोर करत किरिरि हैं ॥ 'भूषन' भँवर भननात घननात घंट पग झननात मनो घन रहे घिरि हैं। जिनकी गरज सुने दिग्गज बे आब होत मद ही के आब गड़काब होत गिरि हैं ॥ ३४० ॥

आजु यहि समै महाराज सिवराज तुही जगदेव जनक जजाति अम्बरीक सो। 'भूषन' भनत तेरे दान-जल जलधि मैं गुनिन को दारिद गयो बहि खरीक सो ॥ चंद-कर किंजलक चाँदनी पराग उडु बृन्द मकरंद बुन्द पुंज के सरीक सो। कंद सम कयलास नाक गंग नाल तेरे जस पुंडरीक को अकास चंचरीक सो ॥ ३४१ ॥

(दोहा)

महाराज सिवराज के जेते सहज सुभाय।
औरन को अति उक्ति से 'भूषन' कहत बनाय ॥ ३४२ ॥

[निरुक्ति]

(लक्षण-दोहा)

नामन को निज बुद्धि सों कहिए अरथ बनाय।
ताको कहत 'निरुक्ति' हैं भूषन जे कबिराय ॥ ३४३ ॥

(उदाहरण-दोहा)

कविगन को दारिद-द्विरद याही दल्यो अमान।
याते श्रीसिवराज को सरजा कहत जहान ॥ ३४४ ॥
हर्‌यो रूप इन मदन को याते भा सिव नाम।
लियो विरद सरजा सबल अरि गज दलि संग्राम ॥ ३४५ ॥

(कवित्त मनहरण)

आजु सिवराज महराज एक तुही सरनागत जनत को दिवैया अभैदान को। फैली महिमंडल बड़ाई चहुँओर ताते कहिए कहाँ लौं ऐसे बड़े परिमान को ? ॥ निपट गँभीर कोऊ लाँघि न सकत बीर जोधन को रन देत जैसे भाऊ-खान को। दिल दरियाव क्यों न कहैं कविराव तोहिं तो मैं बहिरात आनि पानिप जहान को ॥ ३४७ ॥

[हेतु]

(लक्षण-दोहा)

"या निमित्त यहई भयो" यो जहँ बरनन होय।
'भूषन' हेतु बखानहीं कबि कोबिद सब कोय ॥ ३४७ ॥

(उदाहरण—मनहरण दंडक)

दारुन दइत हरनाकुस बिदारिबे कों भयो नरसिंह रूप तेज बिकरार है। 'भूषन' भनत त्योंही रावन के मारिबे को रामचन्द्र भयो रघुकुल-सरदार है ॥ कंस के कुटिल बल बसन बिधंसिबे को भयो जदुराय बासुदेव को कुमार है पृथ्वीपुरहूत साहि के सपूत सिवराज म्लेच्छन के मारिबे को तेरो अवतार है ॥ ३४८ ॥

[अनुमान]

(लक्षण-दोहा)

जहाँ काज ते हेतु कै जहाँ हेतु ते काज।
जानि परत, अनुमान तहँ कहि 'भूषन' कबिराज ॥ ३४९ ॥

(उदाहरण—मनहरण दंडक)

चित्त अनचैन आँसू उमगत नैन देखि बीबी कहैं बैन मियाँ कहियत काहि नै ?। 'भूषन' भनत बूझे आए दरबार तें कँपत बार बार क्यों सम्हार तन नाहिंनै ?॥ सीनो धक धकत पसीनो आयो देह सब हीनो भयो रूप न चितौत बाएँ दाहिनै। सिवा जी की संक मानि गए हौ सुखाय तुम्हैं जानियत दक्खिन को सूबा करो साहि नै ३५० ॥

झंझा सी दिन की भई संझा सो सकल दिसि गगन लगन रही गरद छवाय है। चील्ह-गीध-वायस-समूह घर रोर करैं ठौर ठौर चारों ओर तम मड़राय है। 'भूषन' अँदेस देस देस के नरेस गन आपुस मैं कहत यों गरब गँवाय है। बड़ो बड़वा को जितवार चहुँघो को दल सरजा सिवा को जानियत इत आय है ॥ ३५१ ॥

[अथ शब्दालंकार]

(दोहा)

जे अरथालंकार ते 'भूषन' कहे उदार
अब शब्दालंकार ये कहत सुमति अनुसार ॥ ३५२ ॥

[छेक एवं लाट अनुप्रास]

(लक्षण-दोहा)

स्वर समेत अच्छर-पदनि आवत सदृस प्रकार।
भिन्न अभिन्नन पदन सों छेक लाट अनुप्रास ॥ ३५३॥

(उदाहरण अमृतध्वनि छंद)

दिल्लिय दलन दबाय करि सिव सरजा निरसंक ।
लूटि लियो सूरति सहर बकक्करि अति डंक ॥
बंकक्करि अति डंकक्करि अस संकक्कुलि खल ।
सोचच्चकित भरोचच्चलिय बिमोचच्चखजल ।
तट्ठट्ठइमन कट्ठट्ठिक सोइ रट्ठट्ठिल्लिय ।
सद्दद्दिसि दिसि भद्दद्दबिभइ रद्दद्दिल्लिय ॥ ३५४ ॥
गत बल खानदलेल हुव खान बहादुर मुद्ध ।
सिव सरजा सलहेरि ढिग कुद्धद्धरि किय युद्ध ॥
कुद्धद्धरि किय युद्धद्धरि अरि अद्धद्धरि करि ।
मुंडड्डरि तहँ डुंडड्डकरत रुंडड्डग भरि ॥
खेदिद्दर बर छेदिद्दय करि भेदद्दधि दल ।
जंगग्गति सुनि रंगग्गलि अवरंगग्गत बल ॥ ३५५ ॥
लिय धरि मोहकम सिंह कहँ अरु किसोर नृपकुम्भ ।
श्रीसरजा संग्राम किय भुम्मिम्मधि करि धुम्म ।
भुम्मिम्मधि धुम्मम्मड़ि रिपु चुम्मम्मलिकरि ।
जंगग्गरजि जितंगग्गरत्र मतंगगन हरि ॥
लक्खक्खन रन दक्खक्खलनि अलक्खक्खिति भरि ।
मोलल्लहि जस नोलल्लरि बहल्लोलल्लिय धरि ॥ ३५६ ॥
लिय जिति दिल्ली मुलुक सब सिव सरजा जुरि जंग ।
भनि 'भूषन' भूपति भजे भंगग्गरब तिलंग ॥
भंगग्गरब तिलंगग्गयउ कलिंगग्गलि अति ।
दुंदद्दब दुहु दंदद्दलनि बुलंदद्दहसति ॥
लच्छच्छिन करि म्लेच्छच्छय किय रच्छच्छबि छिति ।
हल्लल्लगि नरपल्लल्लरि परनल्लल्लिय जिति ॥ ३५७ ॥

(छप्पय)

मड कटत कहुँ रुंड नटत कहुँ सुंड पटत घन ।

गिद्ध लसत कहुँ सिद्ध हँसत सुख बृद्धि रसत मन ॥
भूत फिरत करि बूत भिरत सुर-दूत घिरत तहँ।
चंडि नचत गन मंडि रचत धुनि डंडि मचत जहँ ॥
इमि ठानि घोर घमसान अति 'भूषन' तेज कियो अटल।
सिवराज साहि-सुव खग्ग-बल दलि अडोल बहलोल-दल ॥ ३५८ ॥
क्रुद्ध फिरत, अति जुद्ध जुरत. नहिं रुद्ध मुरत भट।
खग्ग बजत अरि बग्ग तजत सिर पग्ग सजत चट ॥
ढुक्कि फिरत मद झुक्कि भिरत करि कुक्कि गिरत गनि।
रङ्क रकत हरसंग छकत चतुरङ्ग थकत भनि ॥
इमि करि संगर अति ही बिषम 'भूषन' सुजस कियो अचल।
सिवराज साहि-सुय खग्ग बल दलि अडोल बहलोल-दल ॥ ३५९ ॥

(कवित्त मनहरण)

बानर बरार बाघ बैहर बिलार बिग बगरे बराह जानवरन के जोम हैं। 'भूषन' भनत भारे भालुक भयानक हैं भीतर भवन भरे लीलगऊ लोम हैं ॥ ऐंड़ायल गज गन गैंड़ा गररात गनि गेहन मैं गोहन गरूर गहे गोम हैं। सिवाजी की धाक मिले खलकुल खाक, बसे खलन के खेरन खबीसन के खोम हैं ॥ ३६० ॥

तुरमती तहखाने तीतर गुसुलखाने सूकर सिलहखाने कूकर करीस हैं। हिरन हरमखाने स्याही हैं सुतुरखाने पाढ़े पीलखाने और करंजखाने कीस हैं ॥ 'भूषन' सिवाजी गाजी खग्ग सों खपाए खल, खाने खाने खलन के घेरे भये खीस हैं। खड़गी खजाने खरगोस खिलवतखाने खीसैं खोले खसखाने खाँसत खबीस हैं ॥ ३६१ ॥

(दोहा)

औरन के जाँचे कहा नहिं जाँच्यो सिवराज ?।
औरन के जाँचे कहा जो जाँच्यो सिवराज ? ॥ ३६२ ॥

[यमक अनुप्रास]

(लक्षण-दोहा)

भिन्न अरथ फिरि फिरि जहाँ ओई अच्छर-वृन्द ।
आवत हैं, सो जमक करि बरनत बुद्धि-बुलंद ॥ ३६३ ॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

पूनावारी सुनि कै अमीरन की गति लई भागिबे को मीरन समीरन की गति है। मार्‌यो जुरि जंग जसवन्त जसवन्त जाके संग केते रजपूत रजपूत पति है ॥ 'भूषन' भनै यों कुलभूषन भुसिला सिवराज! तेंहि दीन्ही सिव राज बरकति है। नौहू खंड दीप भूत भूतल के दीप आजु समै के दिलीप दिलीपति को सिदति है ॥ ३६४ ॥

[पुनरुक्तिवदाभास]

(लक्षण-दोहा)

भासति है पुनरुक्ति सी नहिं निदान पुनरुक्ति ।
वदाभास-पुनरुक्ति सो 'भूषन' बरनत युक्ति ॥ ३६५ ॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

अरिन के दल सैन संग रमैं समुहाने टूक टूक सकल कै डारे घमसान मैं। बार बार रूरो महानन्द परबाह पूरो बहत है हाथिन के मदजल दान मैं ॥ 'भूषन' भनत महाबाहु भौंसिला भुवाल सूर रबि कैसो तेज तीखन कृपान मैं। मालमकरन्द जू के नन्द कलानिधि तेरो सरजा सिवाजी जस जगत जहान मैं ॥ ३६३ ॥

[चित्र]

(लक्षण-दोहा)

लिखे सुने अचरज बढ़ै रचना होय विचित्र ।
कामधेनु आदिक घने 'भूषन' बरनत चित्र ॥ ३६७ ॥

(उदाहरण, कामधेनु चित्र-माधवी सवैया)

धुव जो	गुरता	तिनको	गुरुभूषन	दानि बड़ो	गिरजा	पिव है।
हुव जो	हरता	रिन को	तरु भूषन	दानि बड़ो	सिरजा	छिव है॥
भुव जो	भरता	दिन को	नरु भूषन	दानि बड़ो	सरजा	सिव है।
तुव जो	करता	इनके	अरु भूषन	दानि बड़ो	बर जा	निवहै ३६८

[संकर]

(लक्षण-दोहा)

'भूषन' एक कवित्त मैं भूषन होत अनेक।
संकर ताको कहत हैं जिन्हैं कबित्त की टेक॥

(उदाहरण —मनहरण दंडक)

ऐसे बाजिराज देत महाराज सिवराज 'भूषन' जे बाज की समाजैं निदरत हैं। पौन पाय हीन, हग घूँघट मैं लीन, मीन जल मैं बिलीन, क्यों बराबरी करत हैं॥ सबते चलाक चित तेऊ कुलि आलम के रहैं उर अंतर मैं धीर न धरत हैं। जिन चढ़ि आगे को चलाइयतु तीर तीर एक भरि तऊ तीर पछे ही परत हैं॥ ३७०॥

[अलङ्कार-नामावली]

(गीतिका छन्द)

उपमा अनन्वै कहि बहुरि उपमा प्रतीप प्रतीप। उपमेय-उपमा है बहुरि मालोपमा कवि दीप॥ ललितोपमा रूपक बहुरि परिनाम पुनि उल्लेख। सुमिरन भ्रमौ संदेह सुद्धापन्हुत्यौ सुभ बेख॥ ३७१॥

हेतूअपन्हुत्यौ बहुरि परजस्तपन्हुति जान । सुभ्रांतपूर्ण अपन्हुत्यौ छेकाअपन्हुति मान ॥ बर कैतवापन्हुति गनौ उतप्रेक्षा बहुरि बखानि । पुनि रूपकातिसयोक्ति भेदक-अतिसयोक्ति सुजानि ॥ ३७२ ॥

अरु अक्रमातिसयोक्ति चंचल-अतिसयोक्तिहि लेखि । अत्यंत अतिसै उक्ति पुनि सामान्य चारु बिसेखि ॥ तुलियोगिता दीपक अवृति प्रतिबस्तुपम दृष्टांत । सुनिदर्सना व्यतिरेक और सहोक्ति बरनत शांत ॥ ३७४ ॥

सुबिनोक्ति भूषन समासोक्तिहु परिकरौ अरु बंस । परिकर सुअंकुर श्लेष त्यों अप्रस्तुतौपरसंस ॥ परयायउक्ति गनाइए व्याजस्तुतिहु आक्षेप । बहुरो विरोध विरोधमास विभावना सुख खेप ॥ ३७४ ॥

सुबिशेपउक्ति असंभवौ बहुरे असंगति लेखि । पुनि बिषम सम सुबिचित्र प्रहषन अरु विषादन पेखि ॥ कहि अधिक अन्योन्यहु बिसेष व्यघात भूषन चारु । अरु गुंफ एकावली मालादीपकहु पुनि सारु ॥ ३७५ ॥

पुनि यथासंख्य बखानिए परजाय अरु परिवृत्ति । परिसंख्य कहत बिकल्प हैं जिनके सुमति संपत्ति ॥ बहुर्यो समाधि समुच्चयो पुनि प्रत्यनीक बखानि । पुनि कहत अर्थापत्ति कबिजन काव्यलिंगहि जानि ॥ ३७७ ॥

अरु अर्थअंतरन्यास भूषन प्रौढ़उक्ति गनाय । संभावना मिथ्याध्यवसितऽरु यो उलासहि गाय ॥ अवज्ञा अनुज्ञा लेस तद्गुन पूवरूप उलेखि । अनुगुन अतद्गुन मिलित उन्मीलितहि पुनि अवरेखि ॥ ३७७ ॥

सामान्य औग विशेष पिहितौ प्रश्न उत्तर जानि । पुनि व्याजउक्तिऽरु लोकउक्ति सु छेकउक्ति बखानि ॥ बक्रोक्ति जान सुभाव

उक्तिहु भाविकौ निरधारि। भाविकछबिहु सुउदात्त कहि अत्युक्ति बहुरि बिचारि ॥ ३७८ ॥

बरने निरुक्तिहु हेतु पुनि अनुमान कहि अनुप्रास 'भूषन' भनत पुनि जमक गनि पुनरुक्तिवदआभास ॥ युत चित्र संकर एक सत भूषन कहे अरु पाँच। लखि चारु ग्रन्थन निज मतो युत सुकबि मानहु साँच ॥ २७९ ॥

(दोहा)

सुभ सत्रह सै तीस पर सुचि बदि तेरस भान।
'भूषन' सिव-भूषन कियो पढ़ियौ सकल सुजान ॥ ३८० ॥

(आशीर्वाद—मनहरण दंडक)

एक प्रभुता का धाम, सजे तीनौ बेद काम, रहैं पंच आनन षड़ानन सरबदा। सातौ बार आठौ याम जाचक नेवाजै नव अवतार थिर राजै कृपन हरि गदा। सिवराज 'भूषन' अटल रहै तौलौं जौलौं त्रिदस भुवन सब गंग औ नरमदा। साहितने साहसिक भौंसिला सुरजवंस दासरथि-राज तौलौं सरजा थिर सदा ॥ ३८१ ॥

(दोहा)

पुहुमि पानि रवि ससि पवन जब लौं रहै प्रकास
सिव सरजा तब लौं जियौ 'भूषन' सुजस प्रकास ॥ ३८२ ॥

इति श्रीकविभूषणविरचिते शिवराजभूषणे
अलंकार-वर्णनं समाप्तम्।

॥ शुभमस्तु ॥

श्री शिवा बावनी

(छप्पय)

कौन करै बस वस्तु कौन यहि लोक बड़ो अति ? को साहस को सिंधु कौन रज-लाज धरे मति ? को चकवा को सुखद बसै को सकल सुमन महि ? अष्ट सिद्धि नव निद्धि देत माँगे को सो कहि ? जग बूझत उत्तर देत इमि कबि 'भूषन' कबि-कुल-सचिव । दच्छिन-नरेस सरजा सुभट साहिनंद मकरंद सिव ॥ १ ॥

(कवित्त मनहरण)

साजि चतुरंग वीर रंग मैं तुरंग चढ़ि सरजा सिवाजी जंग जीतन चलत है । 'भूषन' भनत नाद बिहद नगारन के, नदी नद मद गैबरन के रलत हैं ॥ ऐल फैल खैल-भैल खलक मैं गैल गैल गजन की ठेल पेल सैल उसलत है । तारा सो तरनि धूरि धारा मैं लगत, जिमि थारा पर पारा पारावार यों हलत है ॥ २ ॥

बाने फहराने घहराने घंटा गजन के नाहीं ठहराने राव राने देस देस के । नग भहराने ग्राम नगर पराने सुनि बाजत निसाने सिवराज जू नरेस के ॥ हाथिन के हौदा उकसाने, कुम्भ कुन्जर के भौन कै भजाने अलि छूटे लट केस के । दल के दरारे हिते कमठ करारे फूटे केरा कैसे पात बिहराने फन सेस के ॥ ३ ॥

प्रेतिनी पिसाचऽरु निसाचर निसाचरिहु मिलि मिलि आपुस मैं गावत बधाई है । भैरा भूत प्रेत भरि भूधर भयंकर से जुत्थ जुत्थ जोगिनी जमाति जुरि आई है । किलकि किलकि कै कुतूहल

---

(३) पाठां —बाजत निसाने दानसाहजू नरेस के । ककुभ के कुंजर कसमसाने 'गंग' भनै भौन के भजाने अलि छूटे लट केस के ।

करति काली, डिम डिम डमरू दिगंबर बजाई है। सिवा पूँछैं सिव सों समाज आजु कहाँ चली, काहू पै सिवा नरेस भृकुटी चढ़ाई है ॥ ४ ॥

बद्दल न होहिं दल दच्छिन घमंड माहिं घटा हू न होहिं दल सिवाजी हँकारी के। दामिनी दमक नाहिं खुले खग्ग बीरन के, बीर-सिर छाप लखु तीजा असवारी के॥ देखि देखि मुगलों की हरमैं भवन त्यागैं उझकि उझकि उठैं बहत बयारी के। दिल्ली मति-भूली कहै बात घनघोर घोर बाजत नगारे जे सितारे-गढ़-धारी के ॥ ५ ॥

बाजि गजराज सिवराज सैन साजत ही दिल्ली दिलगीर दसा दीरघ दुखन की। तनियाँ न तिलक सुथनियाँ पगनियाँ न घामै घुमरात छोड़ि सेजियाँ सुखन की॥ 'भूषन' भनत पतिबाँह बहियाँ न तेऊ छहियाँ छबीली ताकि रहियाँ रुखन की। बालियाँ बिथुरि जिमि आलियाँ नलिन पर लालियाँ मलिन मुगलानियाँ मुखन की ॥ ६ ॥

कत्ता की कराकनि चकत्ता को कटक काटि कीन्ही सिवराज बीर अकह कहानियाँ। 'भूषन' भनत तिहुँ लोक मैं तिहारी धाक दिल्ली औ बिलाइत सकल बिललानियाँ॥ आगरे अगारन ह्वै फाँदती कगारन छ्वै बाँधती न बारन मुखन कुम्हिलानियाँ। कीबी कहैं कहा औ गरीबी गहे भागी जाहिं बीबी गहे सूथनी सु नीबी गहे रानियाँ ॥ ७ ॥

ऊँचे घोर मन्दर के अन्दर रहन वारी ऊँचे घोर मन्दर के अन्दर रहाती हैं। कन्द मूल भोग करैं कन्द मूल भोग करैं, तीन बेर खातीं सो तौ तीन बेर खाती हैं॥ भूषन सिथिल अंग भूषन सिथिल अंग बिजन डुलातीं तेऽब बिजन डुलाती हैं।

'भूषन' भनत सिवराज बीर तेरे त्रास नगन जड़ातीं ते वै नगन जड़ाती हैं ॥ ८ ॥

उतरि पलंग ते न दियो है धरा पै पग तेऊ सगबग निसि दिन चली जाती हैं। अति अकुलातीं मुरझातीं ना छिपातीं गात बात ना सोहाती बोल अति अनखाती हैं॥ 'भूषन' भनत सिंह साहि के सपूत सिवा तेरी धाक सुने अरि-नारी बिललाती हैं॥ कोऊ करैं घाती कोऊ रोतीं पीटि छाती घरै तीनि बेर खातीं ते वै तीनि बेर खाती हैं ॥ ९ ॥

अंदर ते निकसीं न मंदिर को देख्यो द्वार बिन रथ पथ ते उघारे पाँव जाती हैं। हवा हू न लागती ते हवा ते बिहाल भईं लाखन की भीर मैं सम्हालती न छाती हैं॥ 'भूषन' भनत सिव-राज तेरी धाक सुनि हयादारी चीर फारि मन झुँझलाती हैं। ऐसी परी नरम हरम बादसाहन की नासपाती खातीं ते बनासपाती खाती हैं॥ १० ॥

अतर गुलाब रस चोवा घनसार सब सहज सुबास की सुरति बिसराती हैं। पल भरि पलँग ते भूमि न धरति पाँव भूली खानपान फिरैं बन बिललाती हैं॥ 'भूषन' भनत सिवराज तेरी धाक सुनि दारा हार-बार न सम्हारैं अकुलाती हैं। ऐसी परीं नरम हरम बादसाहन की नासपाती खातीं ते बनासपाती खाती हैं । ११ ॥

सोंधे को अधार किसमिस जिनको अहार चारि को सो अंक लंक चंद सरमाती हैं। ऐसी अरि-नारी सिवराज बीर तेरे

---

(८) पाठा०—घोर के स्थान पर घोल। 'मूल' तथा 'खाती ते वै' के स्थान पर 'पान' और 'खानवारो' है। तीसरी पंक्ति यों है—मैननारी सी प्रमान मैन नारी सी प्रमान। चौथी पंक्ति इस प्रकार है—कहैं कवि 'इन्दु' महाराज आज बैरि नारि।

(९) पाठा०—जोन्ह में न जातीं वे ही धूपें चलि जातीं पुनि कोऊ करै घाती कोऊ रोती पीटि छाती हैं।

त्रास पायन मैं छाले परे कन्द मूल खाती हैं ॥ ग्रीषम तपनि एती तपती न सुनी कान कंज कैसी कली बिनु पानी मुरझाती हैं। तोरि तोरि आछे से पिछौरा सों निचोरि, मुख कहैं "अब कहाँ पानी मुकतों मैं पाती हैं?" ॥ १२ ॥

साहि सिरताज और सिपाहिन मैं पातसाह अचल सुसिंधु के से जिनके सुभाव हैं। 'भूषन' भनत परी शस्त्र रन सेवा धाक काँपत रहत न गहत चित चाव हैं॥ अथह बिमल जल कालिंदी के तट केते परे जुद्ध बिपति के मारे उमराव हैं॥ नव भरि बेगम उतारैं बाँदी डोंगा भरि साहि मक्का मिस उतरत दरियाव हैं॥ १३ ॥

कैयक हजार जहाँ गुर्ज-बरदार ठाढ़े करि कै हुस्यार नीति पकरि समाज की। राजा जसवन्त को बुलाय कै निकट राख्यो तेऊ लखैं नीरे जिन्हैं लाज स्वामि-काज की॥ 'भूषन' तबहुँ ठठकत ही गुसुलखाने सिंह लौं झपट गुनि साहि महराज की। हटकि हथ्यार फड़ बाँधि उमरावन की कीन्ही तब नौरँग ने भेंट सिवराज को॥ १४ ॥

सबन के ऊपर ही ठाढ़ो रहिबे के जोग ताहि खरो कियो जाय जारन के नियरे। जानि गैर मिसिल गुसीले गुसा धारि उर कीन्हो ना सलाम न बचन बोले सियरे॥ 'भूषन' भनत महाबीर बलकन लाग्यो सारी पातसाही के उड़ाय गये जियरे। तमक ते लाल मुख सिवा को निरखि भयो स्याह मुख नौरङ्ग सिपाह मुख पियरे॥ १५ ॥

राना भो केतकी और बेला सब राजा भए ठौर ठौर रस लेत नित यह काज है। सिगरे अमीर भए कन्द मकरन्द भरे

---

(१३) शिवराज-भूषण का ६४ वाँ पद यहाँ कुछ पाठांतर के साथ दिया हुआ है।

भ्रमत भ्रमर जैसे फूलन को साज है॥ 'भूषन' भनत सिवराज बीर तैंही देस देसन मैं राखो सब दच्छिन की लाज है। त्यागे सदा षटपद-पद अनुमानि यह अलि नवरङ्गजेब चम्पा सिवराज है॥ १६॥

कूरम कमल कमधुव है कदमफूल गौर है गुलाब राना केतकी बिराज है। पाँडरि पँवार जुही सोहत है चंद्रावत सरस बुँदेला सो चमेली साजबाज है॥ भूषन भनत मुचकुंद बड़गूजर हैं बघेले बसंत सब कुसुम-समाज है। लेइ रस एतेन को बैठि न सकत अहे अलि नवरङ्गजेब चम्पा सिवराज है॥ १७॥

देवल गिरावते निसान फिरावते निसान अली ऐसे डूबे राव-राने सबी गए लबकी। गौरा गनपति आप औरङ्ग को देख ताप आप के मकान सब मारि गये दबकी॥ पीरा पयगंबरा दिखाई देत सिद्ध की सिधाई गई रही बात रब की। कासिहु ते कला जाती मथुरा मसीद होती सिवाजी नो होत तौ सुनति होत सब की॥ १८॥

साँच को न मानै देवी देवता न जानै अरु ऐसी उर आनै मैं कहत बात जब की। और पातसाहन के हुती चाह हिंदुन की अकबर साहिजहाँ कहै साखि तब की॥ बब्बर से तब्बर हुमायूँ हद्द बाँधि गय दो मैं एक करी ना कुरान बेद ढब। की कासिहु की कला जाती मथुरा मसीद होती सिवाजी न होतो तौ सुनति होत सब की॥ १९॥

कुंभकर्न असुर औतारी अवरङ्गजेब कीन्ही कत्ल मथुरा दोहाई फेरी रब की। खोदि डार देवी देव सहर मुहल्ला बाँके लाखन तुरुक कीन्हे छूटि गई तबकी॥ 'भूषन भनत भाग्यो कासीपति विश्वनाथ और कौन गिनती मैं भूली गति भव की चारौ बन धर्म छोड़ि कलमा नेवाज पढ़ि सिवा जी न होतो तौ सुनति होत सब की॥ २०॥

दावा पातसाहन सों कीन्हो सिवराज बीर जेर कीन्हो देस हद्द बाँध्यो दरबारे से। हठी मरहठी तामैं राख्यो न मवास कोऊ छीने हथियार डोलैं बन बनजारे से॥ आमिष अहारी माँसहारी दै दै तारी नाचै खाँड़े तोड़ किरचैं उड़ाये सब तारे से। पील सम डील जहाँ गिरि से गिरन लागे मुंड मतवारे गिरैं झुन्ड मतवारे से॥ २१॥

छूटत कमान और तीर गोली बानन के मुसकिल होत मुरचान हू की ओट मैं। ताहि समै सिवराज हुकुम कै हल्ला कियो दावा बाँधि पर्‌यो हल्ला बीर भट जोट मैं॥ 'भूषन' भनत तेरी हिम्मति कहाँ लौं कहौं किम्मति इहाँ लगि है जाकी भट झोट मैं। ताव दै दै मूँछन कँगूरन पै पाँव दै दै अरि-मुख घाव दै दै कूद परैं कोट मैं॥ २२॥

उतै पातसाह जू के गजन के ठट्ट छूटे उमड़ि घुमड़ि मतवारे घन भारे हैं। इतै सिवराज जू के छूटे सिंहराज औ बिदारे कुंभ करिन के चिक्करत कारे हैं॥ फौजैं सेख सैयद मुगल औ पठानन की मिलि इखलास काहू मीर न सम्हारे हैं। हद्द हिंदुवान की बिहद्द तरवारि राखि कैयो बार दिल्ली के गुमान झारि डारे हैं॥ २३॥

जीत्यो सिवराज सलहेरि को समर सुनि सुनि असुरन के सुसीने धरकत हैं। देवलोक नागलोक नरलोक गावैं जस अजहूँ लौं परे खग्ग दाँत खरकत हैं॥ कंटक कटक काटि कीट से उड़ाये केते 'भूषन' भनत मुख मोरि सरकत हैं। रनभूमि लेटे अधकटे फरलेटे परे रुधिर लपेटे पठनेटे फरकत हैं॥ २४॥

(मालती सवैया)

केतिक देस दल्यो दल के बल दच्छिन चंगुल चाँपि कै चाख्यो। रूप-गुमान हर्‌यो गुजरात को सूरत को रस चूसि कै

नाख्यो ॥ पंजन पेलि मलिच्छ मले सब सोई बच्यो जेहि दीन ह्वै भाख्यो। सो रङ्ग है सिवराज बली जेहिं नौरङ्ग मैं रङ्ग एक न राख्यो ॥ २५ ॥

सूब निरानँद ब्हादरखान गे लोगन बूझत ब्योंत बखानो। दुग्ग सबै सिवराज लिये धरि चारु विचारु हिये यह आनो ॥ 'भूषन' बोलि उठे सिगरे हुतो पूना मैं साइतखान को थानो। जाहिर है जग मैं जसवंत लियो गढ़सिंह मैं गीदर बानो ॥ २६ ॥

(कवित्त मनहरण)

जोरि करि जैहैं जुमिला हू के नरेस पर तोरि अरि खंड खंड सुभट समाज पै। 'भूषन' असाम रूम बलख बुखारे जैहैं चीन सिलहटे तरि जलधि जहाज पै ॥ सब उमरावन की हठ कूरताई देखो कहैं नवरङ्गजेब साहि सिरताज पै। भाख माँगि खैहैं बिनु मनसब रैहैं पै न जैहैं हजरत महाबली सिवराज पै ॥ २७ ॥

चंदराव चूर करि जावली जपत कीन्हो मारे सब भूप औ सँहारे पुर धाय कै। 'भूषन' भनत तुरकान दलथंभ काटि अफजल मारि डारे तबल बजाय कै ॥ एदिल सौं बेदिल हरम कहैं बार बार अब कहा सोवो सुख सिंह हू जगाय कै। भेजना है भेजो सो रिसालैं सिवराज जू की बाजीं करनालैं परनालै पर आय कै ॥ २८ ॥

(मालती सवैया)

साजि चमू जनि घाहु सिवा पर सोवत जाय न सिंह जगावो। तासों न जंग जुरौ न भुजंग महाविष के मुख मैं कर नावो ॥ 'भूषन' भाषत बैरिबधू जनि एदिल औरङ्ग लौं दुख पावो। तासु सलाह की राह तजौ मति, नाह दिवाल की राह न धावो ॥ २९ ॥

छप्पय

बिज्जपूर बिदनूर सूर सर धनुष न संधहिं । मंगल बिनु मल्लारि नारि धम्मिल्ल न बंधहि ॥ गिरत गब्भ कोटै गरब्भ चिंजी चिंजाउर। चालकुंड दलकुंड गोलकुंडा संका उर। 'भूषन' प्रताप सिवराज तव इमि दच्छिन दिसि संचरहि। मधुराधरेस धकधकत सो द्रविड़ निबिड़ डर दबि डरहि ॥ ३० ॥

(कवित्त मनहरण)

अफजल खान को जिन्हों ने मयदान मारा बीजापुर गोलकुंडा मारा जिन आज है। 'भूषन' भनत फरासीस त्यों फिरंगी मारि हबसी तुरक डारे उलटि जहाज है॥ देखत मैं रुसतम खाँ को जिन खाक किया सालति सुरति आजु सुनी जो अवाज है। चौंकि चौंकि चकता कहत चहुँघा ते यारो लेत रहौ खबरि कहाँ लौं सिवराज है। ३१ ॥

फिरँगाने फिकिर औ हदसनि हबसाने 'भूषन' भनत कोऊ सोवत न घरी है । बीजापुर-बिपति बिडरि सुनि भाज्यो सब दिल्ली दरगाह बीज पुरी खरभरी है॥ राजन के राजे सब साहिन के सिरताज आज सिवराज पातसाही चित धरी है। बलख बुखारे कसमीर लौं परी पुकार धाम धाम धूमधाम रूम साम परी है॥ ३२ ॥

गरुड़ को दावा सदा नाग के समूह पर दावा नाग-जूह पर सिंह सिरताज को। दावा पुरहूत को पहारन के कूल पर, पच्छिन के गोल पर दावा सदा बाज को ॥ 'भूषन' अखंड नवखंड महिमंडल मैं तम पर दावा रबि किरन-समाज को ॥ पूरब पछाँह देस दच्छिन ते उत्तर लौं जहाँ पादसाही तहाँ दावा सिवराज को॥ ३३ ॥

दारा की न दौर यह रारि नहीं खजुवे की, बाँधिबो नहीं है किधौं मीर सहवाल को। मठ बिश्वनाथ को न बास ग्राम

गोकुल को देवी को न देहरा न मंदिर गोपाल को॥ गाढ़े गढ़ लीन्हे अरु बैरी कतलाम कीन्हे ठौर ठौर हासिल उगाहत है साल को। बूड़ति है दिल्ली सो सम्हारै क्यो न दिल्लीपति धक्का आनि लाग्यो सिवराज महा काल को ॥ ३४ ॥

गढ़न गजाय गढ़धरन सजाय करि छाँड़ि केते धरम दुवार दै भिखारी से । साहि के सपूत पूत बीर सिवराज सिंह केते गढ़धारी किये बन बनचारी से ॥ 'भूषन' बखानै केते दीन्हें बंदीखाने सेख सैयद हजारी गहे रैयति बजारी से । महतो से मुगल महाजन से महाराज डाँड़ि लीन्हे पकरि पठान पटवारी से ॥ ३५ ॥

सक्र जिमि सैल पर, अर्क तम फैल पर. बिघन की रैल पर लंबोदर लेखिये । राम दसकंध पर, भीम जरासंध पर, 'भूषन' ज्यों सिंधु पर कुंभज बिसेखिये ॥ हर ज्यों अनंग पर, गरुड़ भुजंग पर, कौरव के अंग पर पारथ ज्यों पेखिये । बाज ज्यौं बिहंग पर, सिंह ज्यों मतंग पर, म्लेच्छ चतुरंग पर सिवराज देखिये ॥ ३६ ॥

बारिधि के कुंभभव, घन-बन दावानल, तरुन-तिमिर हू के किरन-समाज हौ । कंस के कन्हैया कामधेनु हू के कंटकाल, कैटभ के कालिका. बिहंगम के बाज हौ ॥ 'भूषन भनत' जग जालिम के सचीपति, पन्नग के कुल के प्रबल पच्छिराज हौ। रावन के राम , कार्तबीज के परसुराम, दिल्लीपति दिग्गज के सेर सिवराज हौ ॥ ३७ ॥

दरबर दौरि करि नगर उजारी डारि कटक कटायो कोटि दुजन दरब की । जाहिर जहान जंग जालिम है जोरावर चलै न कछूक अब एक राजा रब की ।। सिवराज तेरे त्रास दिल्ली भयो भुवकंप थर थर. काँपत बिलायति अरब की । हालत

---

(३७) पाठा०—चिन्तामनि ।

दहलि जात काबुल कँधार बीर रोष करि काढ़ै समसेर ज्यों करब की ॥ ३८ ॥

'सेवा की बड़ाई और हमारी लघुताई क्यों कहत बार बार' कहि पातसाह गरजा । 'सुनिये खुमान हरि तुरुक गुमान महि देवन जेंवायो' कवि 'भूषन' यों अरजा ॥ तुम वाको पाय कै जरूर रन छोरो वह रावरे वजीर छोरि देत करि परजा । मालुम तिहारो होत याहि में निबेरो रनु कायर सो कायर औ सरजा सो सरजा ॥ ३९ ॥

कोट गढ़ ढाहियतु एकै पातसाहन के एकै पातसाहन के देस दाहियतु है । 'भूषन' भनत महाराज सिवराज एकै साहन की फौज पर खग्ग बाहियतु है ॥ क्यों न होहिं बैरिन की बौरी सुनि बैर बधू दौरनि तिहारे कहौ क्यों निबाहियतु है । रावरे नगारे सुने बैरवारे नगरन नैनवारे नदन निवारे चाहियतु है ॥ ४० ॥

चकित चकत्ता चौंकि चौंकि उठै बार बार दिल्ली दहसति चित चाह खरकति है । बिलखि बदन बिलखात बिजैपुर । पति फिरत फिरंगिन की नारी फरकति है । थर थर काँपत कुतुबसाहि गोलकुंडा हहरि हबस भूप भीर भरकति है । राजा सिवराज के नगारन की धाक सुनि केते पातसाहन की छाती दरकति है ॥ ४१ ॥

मोरंग कुमाउँ औ पलाऊँ बाँधे एक पल कहाँ लौं गनाऊँ जेऽब भूषन के गोत हैं । 'भूषन' भनत गिरि बिकट निवासी लोग, बावनी बवंजा नव कोटि धुन्ध जोत हैं ॥ काबुल कँधार खुरासान जेर कीन्हो जिन मुगल पठान सेख सैयदहू रोत हैं । अब लगि जानत हे बड़े होत पातसाह सिवराज प्रकटे ते राजा बड़े होत हैं ॥ ४२ ॥

दुग्ग पर दुग्ग जीते सरजा सिवाजी गाजी डग्ग नाचे डग्ग पर रुंड मुंड फरके। 'भूषन' भनत बाजे जीति के नगारे भारे सारे करनाटी भूप सिंहल के सरके ॥ मारे सुनि सुभट पनारे वारे उद्भट तारे लगे फिरन सितारे गढ़धर के। बीजापुर बीरन के गोलकुंडा धीरन के, दिल्ली उर मीरन के दाड़िम से दरके ॥ ४३

मालवा उजैन भनि 'भूषन' भेलास ऐन सहर सिरोंज लौं परावने परत हैं। गोंडवानो तिलँगानो फिरँगानो करनाट रुहिलानो रुहिलन हिये हहरत हैं ॥ साहि के सपूत सिवराज तेरी धाक सुनि गढ़पति बीर तेऊ धीर न धरत हैं बीजापुर गोलकुंडा आगरा दिल्ली के कोट बाजे बाजे रोज दरवाजे उघरत हैं ॥ ४४ ॥

मारि करि पातसाही खाकसाही कीन्ही जिन जेर कीन्ही जोर सों लै हद्द सब मारे की। खिसि गई सेखी फिसि गई सूरताई सब हिसि गई हिम्मत हजारों लोग सारे की ॥ बाजत दमामे लाखौं धौंसा आगे घहरात गरजत मेघ ज्यों बरात चढ़े भारे की। दूल्हो सिवाजी भयो दच्छिनी दमामे वारे दिल्ली दुलहिनि भई सहर सितारे की ॥ ४५ ॥

डाढ़ी के रखैयन की डाढ़ी सी रहति छाती बाढ़ी मरजाद जस हद्द हिंदुवाने की। कढ़ि गई रैयति के मन की कसक सब मिटि गई ठसक तमाम तुरुकाने की। 'भूषन' भनत दिल्लीपति दिल धकधका सुनि सुनि धाक सिवराज मरदाने की। मोटी भई चंडी बिनु चोटी के चबाय सीस खोटी भई संपति चकत्ता के घराने की ॥ ४६ ॥

---

(४६) पाठां०—कहत 'निवाज' दिल्लीपति दिल धकधकै धाक सुनि राजा छत्रसाल मरदाने की।

जिन फन फुतकार उड़त पहार भार कूरम कठिन जनु कमल बिदलि गो। विषजाल ज्वालामुखी लवलीन होत जिन झारन चिकारि मद दिग्गज उगलि गो॥ कीन्हों जेहि पान पयपान सो जहान कुल कोल हू उछलि जल सिंधु खलभलि गो। खग्ग खगराज महाराज सिवराज जू को अखिल भुजङ्ग मुगलद्दल निगलि गो॥ ४७॥

राखी हिंदुआनी हिंदुआन को तिलक राख्यो अस्मृति पुरान राखे बेद बिधि सुनी मैं। राखी रजपूती राजधानी राखी राजन की धरा में धरम राख्यो राख्यो गुन गुनी मैं॥ 'भूषन' सुकवि जीति हद्द मरहट्टन की देस देस कीरति बखानी तव सुनी मैं। साहि के सपूत सिवराज समसेर तेरी दिल्ली दल दाबि कै दिवाल राखी दुनी मैं॥ ४८॥

साहि के सपूत रनसिंह सिवराज वीर वाही समसेर सिर सत्रुन पै कढ़ि कै। काटे वे कटक कटकिन के निकट भू में हम सों न जात कह्यो सेस सम पढ़ि के॥ पारावार ताहि को न पावत हैं पार कोऊ सोनित समुद्र यहि भाँति रह्यो बढ़ि कै। नाँदिया की पूंछ गहि पौरि के कपाली बचे काली बचो माँस के पहारन पै चढ़ि कै॥ ४९॥

साहि के सपूत सिवराज बीर तेरे डर अडग अपार महा दिग्गज सो डोलिया। बंदर बिलायत सो उर अकुलाने अरु संकित सदाय रहे बेस बहलोलिया॥ 'भूषन' भनत कौल करत कुतुबशाह चारे चहुँ ओर इच्छा एदिल सा भोलिया। दाहि दाहि दिल कीने दुखदाई दाग ताते आहि आहि करत औरंगशाह औलिया॥ ५०॥

बेद राखे बिदित पुरान राखे सार युत रामनाम राख्यो अति रसना सुघर मैं। हिंदुन की चोटी रोटी राखी है सिपाहिन की काँधे मैं जनेऊ राख्यो माला राखी गर मैं॥ मीड़ि राखे मुगल

मरोड़ि राखे पातसाह बैरी पीसि राखे बरशन राख्यो कर मैं। राजन की हद्द राखी तेग बल सिवराज देव राखे देवल स्वधर्म राख्यो घर मैं ॥ ५१ ॥

सपत नगेस चारौं ककुभ गजेस कोल कच्छप दिनेस धरैं धरनि अखंड को । पापी घालै धरम, सुपथ चालै मारतंड करतार प्रतिपालै प्रानिन के चंड को ॥ भूषन' भनत सदा सरजा सिवाजी गाजी म्लेच्छन को मारै करि कीरति घमंड को । जग काज वारे निहचिंत करि डारे सब भोर देत आसिष तिहारे भुजदंड को ॥ ५२ ॥

छत्रशाल दशक

(दोहा)

इक हाड़ा बूंदी-धनी मरद महेवा-वाल ।
सालत नौरंगजेब को ये दोनों छतसाल ॥ १ ॥
वै देखौ छत्ता पता ये देखो छतसाल ।
वै दिल्ली की ढाल यै दिल्ली-ढाहन-वाल ॥ २ ॥

भुज भुजगेस की वै संगिनी भुजंगिनी सी खेदि खेदि खातीं दीह दारुन दलन के। बखतर बीच धँसि जाति मीन पैरि पार जात परवाह ज्यों जलन के ॥ रैया राय चंपति को छत्रसाल महाराज 'भूषन' सकत को बखानि यों बलन के पच्छी पर छीने ऐसे परे पर छीने बीर तेरी बरछी ने बर छीने हैं खलन के ॥ ३ ॥

रैया राय चंपति को चढ़ो छत्रसालसिंह 'भूषन' भनत सम-सेर जोम जमकैं। भादौं की घटा सी उठीं गरदै गगन घेरैं सेलैं समसेरैं फेरैं दामनी सी दमकैं ॥ खान उमरावन के आन राजा रावन के सुनि सुनि उर लागैं घन कैसी घमकैं । बैहर बगारन की अरि के अगारन की नाँघती पगारन नगारन की धमकैं ॥ ४ ॥

अत्र गहि छत्रसाल खीझ्यो खेत बेतवै के उत ते पठाननहू कीन्हीं झुकि झपटैं । हिम्मति बड़ी के गबड़ो के खिलवारन लौं देत सै हजारन हजार बार चपटैं ॥ 'भूषन' भनत काली हुलसी असीषन को सीसन को ईस की जमाति जोर जपटैं। समद लौं समद की सेना त्यों बुंदेलन की सेलैं समसेरैं भईं बाड़व की लपटैं ॥ ५ ॥

हैबर हरट्ट साजि गैबर गरट्ट सम पैदर के टट्ट फौज जुरी तुरकाने की । 'भूषन' भनत राय चंपति को छत्रसाल रोप्यो रन ख्याल ह्वै के ढाल हिंदुवाने की ॥ कैयक हजार एक बार बैरी मारि डारे रंजक दगनि मानो अगिनि रिसाने की । सैद अफगन सेन सगर सुतन लागी कपिल सराप लौं तराप तोपखाने की ॥ ६ ॥

चाक चक चमू के अचाक चक चहूँ ओर चाक सी फिरति धाक चंपति के लाल की । भूषन' भनत पातसाही मारि जेर कीन्हीं काहू उमराव ना करेरी करबाल की ॥ सुनि सुनि रीति बिरदैत के बड़प्पन की थप्पन उथप्पन की बानि छत्रसाल की । जंग जीतिलेवा ते वै ह्वै के दामदेवा भूप सेवा लागे करन महेवा महिपाल की ॥ ७॥

राजत अखंड तेज छाजत सुजस बड़ो गाजत गयंद दिग्गजन हिय साल को । जाहि के प्रताप सों मलीन आफताप होत ताप तजि दुजन करत बहु ख्याल को ॥ साज सजि गज तुरी पैदर कतार दीन्हें 'भूषन' भनत ऐसो दीन प्रतिपाल को । और राव राजा एक मन मैं न ल्याऊँ अब साहू को सराहौं कै सराहौं छत्रसाल के ॥ ८ ।

साँगन सों पेलि पेलि खग्गन सों खेलि खेलि समद सा जीता जो समद लौं बखाना है । भूषन बुँदेलामनि चंपत सपूत धन्य जाकी धाक बचा एक मरद मियाना है ॥ जंगल के से बल से उदंगल प्रबल लूटा महमद अमी खाँ का कटक खजाना है । बीर रसमत्ता जाते काँपत चकत्ता यारो कत्ता ऐसा बाँधिए जो छत्ता बाँधि जाना ॥ ९ ॥

देस दहवट्टि आयो आगरे दिल्ली के मेंडे बरगी बहरि मानौ दल जिमि देवा को । 'भूषन' भनत छत्रसाल छितिपाल मनि ताके ते कियो

बिहाल जङ्ग जीति लेवा को ॥ खंड खंड सारे यों अखंड महि मंडल में मंडौ ने बुन्देलखंड मंडल महेवा को। दच्छिन के नाह को कटक रोक्यो महाबाहु ज्यों सहस्रबाहु ने प्रवाह रोक्यो रेवा को ॥ १० ।

बड़ी औंड़ी उमड़ी नदी सी फौज छेकी जहाँ मेंड़ बेड़ी छत्रसाल मेरु से रेख रहे। चंपति के चक्कवै मचायो घमासान बैरी मलियै मसान आनि सौंहें जे अरे रहे ॥ 'भूषन' भनत भकरुन्ड रहे रुन्ड मुंड भव के भुसुंड तुंड लोहू से भरे रहे। कीन्हों जस पाठ हर पठनेटे ठाट पर काठ लौं निहारे कोस साठ लौं डरे रहे ॥ ११ ॥

स्फुट पद

[कवित्त मनहरण]

जानि पति बागवान मुगल पठान सेख,
बैल सम फिरत रहत दिन रात हैं।
ताते ह्वै अनेक कोई सामने चलत कोई,
पीठ दै चलत मुख नहीं सरमात हैं॥
'भूषन' भनत जुरे जहाँ जहाँ जुद्ध भूमि,
सरजा सिवा के जस बाग न समान हैं।
रहँट की घड़ी जैसे औरङ्ग के उमराव,
पानिप दिल्ली तें लाइ ढोरि ढोरि जात हैं॥ १॥

तेग बरदार स्याह पंखा बरदार स्याह,
निखिल नकीब स्याह बोलत बिराह को।
पान पीकदानी स्याह सेनापति मुख स्याह,
जहाँ तहाँ ठाढ़े गिनें 'भूषन' सिपाह को।
स्याह भये सारी पातसाही के अमीर खान;
काहू को न रह्यो जोम समर उमाह को।
सिंह सिवराज दल मुगल बिनास करि,
घास ज्यों पजार्‌यो आमखास पातसाह को॥ २॥

सिंधु के अगस्त और बाँस-बन-दावानल,
तिमिर पै तरनि की किरन-समाज हो।
कंस के कन्हैया और चूहा के बिड़ाल पुनि,
कैटभ की कालिका बिहंगम के बाज हो॥
'भूषन' भनत सब असुर के इन्द्र पुनि,
पन्नग के कुल के प्रबल पच्छिराज हो।
रावन के राम सहसबाहु के परसुराम,
दिल्ली-पति दिग्गज के सिंह सिवराज हो*॥ ३॥

*शिवा बावनी के २७ वें छन्द से कुछ ही पाठभेद है।

बाप ते बिसाल भूमि जीत्यो दस दिसिन तें,
महि में प्रताप कीनों भारी भूप भान सों।
ऐसे भयो साहि के सपूत सिवराज बीर,
तैसा भयो होत है न ह्वै है कोऊ आन सों॥
एदिल कुतुबसाहु औरँग के मारिबे को,
भूषन' भनत को है सरजा खुमान सों।
तीनपुर त्रिपुर के मारे शिव तीन बान,
तीन पातसाही हनी एक किरवान सों॥ ४॥

तेरी धाक ही ते नित हबसी फिरङ्गी औ,
बिलायती बिलन्दे करें बारिधि-बिहरनौ।
'भूषन' भनत बीजापुर भागनेर दिल्ली,
तेरे बैर भयौ उमरावन कौ मरनौ॥
बीच बीच उहाँ केते जोर से मुलुक लूटे,
कहाँ लगि साहस सिवाजी तेरी बरनौ।
आठ दिगपाल त्राम आठ दिसि जीतिबे के,
आठ पातसाहन सों आठो जाम लरनौ॥ ५॥

भूप सिवराज कोप करी रनमंडल में,
खग्ग गहि कूद्यो चकता के दरबारे में।
काटे भट बिकट औ गजन के सुन्ड काटे,
पाटे उरभूमि काटे दुवन सितारे में॥
'भूषन' भनत चैन उपजे शिवा के चित्त,
चौसठ नचाई जबै रेवा के किनारे में।
आँतन की ताँत बाजी खाल की मृदंग बाजो,
खोपरी की ताल पसुपाल के अखारे में॥ ६॥

दौरि चढ़ि ऊँट फरियाद चहुँ खूँट कियो,
सूरत को कूट सिवा लूट धन लै गयो।

कहि ऐसे आप आमखास मधि साहन को,
कौन ठौर जायें दाग छाती बीच दै गयो ॥
सुनि सोइ साह कहे यारो उमराओ जाओ,
सौ गुनाह राव एती बेर बीच कै गयो ।
'भूषन' भनत मुगलान सबै चौथ दानी,
हिन्द में हुकुम साहि-चन्द जी को ह्वै गयो ॥ ७ ॥

मारे दल मुगल तिहारी तलवार आज,
उछलि बिछलि म्यान बामी तें निकासती ।
तेरी तलवार लागे दूसरी न माँगे कोऊ,
काटि के करेजा स्रोन पावत बिनासती ॥
साहि के सपूत महाराज सिवराज बीर,
तेरी तरवार स्याह नागिन ते जासती ।
ऊँट हय पैदल सवारन के झुन्ड काटि,
हाथिन के मुण्ड तरबूज लौं तरासती ॥ ८ ॥

तेरी स्वारी माँझ महाराज सिवराज बली,
केते गढ़पतिन के पंजर मचकि गे ।
केते बीर मारि के बिडारे किरवानन ते,
केते गिद्ध खाय केते अंबिका अचकि गे ॥
'भूषन' भनत रुण्ड मुण्डन की माल करि,
चार पाँव नाँदिया के भार ते भचकि गे ।
टूटिगो पहार बिकराल भुव मंडल के,
सेस के सहस फन कच्छप कचकि गे ॥ ९ ॥

तखत तखत पर तपत प्रताप पुनि,
नृपति नृपति पर सुनी है अवाज की ।
दंड सातौं दीप नवखंडन अदंड पर,
नगर नगर पर छावनी समाज की ॥

उदधि उदधि पर दाबनी खुमान जू की,
थल थल ऊपर सुबानी कविराज की।
नग नग ऊपर निसान झरि जगमगे,
पग पग ऊपर दुहाई सिवराज की ॥१०॥

बारह हजार असवार जोरि दलदार,
ऐसे अफजल खान आयो सुरसाल है।
सरजा खुमान मरदान सिवराज बीर,
गंजन गनीम आयो गाढ़े गढ़पाल है॥
'भूषन' भनत दोऊ दल मिलि गये बीर,
भारत सो भारी भयो जुद्ध बिकराल है।
पार जावली के बीच परताप तलै,
स्नान भयो सोनित सो अजो धरा लाल है॥
कत्ता के कसैया महाबीर सिवराज तेरी,
रूम के चकत्ता तक संका सरसात है॥११॥

कासमीर काबुल कलिंग कलकत्ता अरु,
कुल्ल करनाटक की हिम्मत हिराम है।
बिकट बिराट बंग व्याकुल बलख बीर,
बारहो बिलायत सकल त्रिललात है॥
तेरी धाक धुंधरि धरा में अरु धाम धाम,
अंधाधुन्ध आंधी सी हमेस हहरात है॥१२॥

तेरी त्रास बैरी बधू पीवत न पानी कोऊ,
पावत अघाय धाय उठे अकुलाई है।
कोऊ रही बाल कोऊ कामिनी रसाल सो तो,
भई बेहवाल भागी फिरै बनराई है॥
साहि के सपूत खुद आलम खुमान सुनो,
'भूषन' भनत तेरी कीरति बनाई है।

दिल्ली को तखत तजि नींद खान पान तजि,
सिवा सिवा बकत से सारी पातसाई है ॥१३॥

बंद की ने बलख सो बैर कीनो खुरासान,
कीनी हबसान पर पातसाही पलही ।
बेदर कल्यान घमसान कै छिनाय लीने,
जाहिर जहान उपखान ये ही चलही ॥
जंग करि जोर सों निजाम साहि जेर कीनी,
रन में नमाय हैं बुँदेल छलबल ही ।
ताके सब देस लूटि शाह जी के सिवराज,
कूटी फौज अजौं मुगलन हाथ मलहीं ॥१४॥

कूरम, कबंध, हाड़ा, तूँबर, बघेला बीर,
प्रबल बुँदेला हूते जेते दलमनी सों ।
देवल गिरन लागे मूरति ले बिप्र भागे.
नेकहू न जागे सोई रहो रजधनी सों ॥
सबने पुकार करी सुरन मनाइबे को,
सुर ने पुकार भारी कीनी बिश्वधनी सों ।
धरम रसातल को डूबत उबार्‌यौ सिवा,
मारि तुरकान घोर बल्लम की अनी सों ॥१५॥

बैठतीं दुकान लै कै रानी रजवारन की,
तहाँ आइ बादशाह राह देखे सबकी ।
बेटिन को यार और यार है लुगाइन को,
राहन के मार दावादार गये दबकी ॥
ऐसी कीनी बात तौऊ कोऊ ए न कीनी घात,
भई है नदान! बंस छत्तिस में कबकी ।
दच्छिन के नाथ ऐसी देखि धरे मूछों हाथ,
सिवाजी न होतो तो सुनत होती सबकी ॥१६॥

देह देह देह फिरे पाइये न ऐसी देह,
जौन तौन जो न जानै कौन जौन आइबो।
जेते मनमानिक हैं तेते मनमानि कहैं,
धराई में धरे ते तौ धराई में धराइबो॥
एक भूख राख भूख राखै मत भूषन की,
याहि भूख राख भूप 'भूषन' बनाइबो।
गगन के गौन जम न गिनन दैहैं नग,
नगन चलैगो साथ नग न चलाइबो॥ १७॥
जोर रूसियान को है तेग खुरासान की है,
नीति इंगलॉड चीन हुन्नर महादरी।
हिम्मत अमान मरदात हिन्दुवान हू की,
रूम अभिमान हबसान हद कादरी॥
नेकी अरबान सान अदब इरान त्योंही,
क्रोध है तुरान ज्यों फरांस फंद आदरी।
'भूषन' भनत इमि देखिये महीतल पै,
बीर सिरताज सिवराज की बहादरी॥ १८॥
आपस की फूट ही ते सारे हिन्दुवान टूटे,
टूटयो कुल रावन अनीति अति करते।
पैठिगो पताल बलि बज्रधर-ईरषा तें,
टूटयो हिरनाक्ष अभिमान चित्त धरते॥
टूटयो शिशुपाल बासुदेव जू सों बैर करि,
टूटयो है महिष दैत्य अधम बिचरते।
राम कर छुवन ते टूट्यो ज्यों महेश चाप,
टूटी पातसाही सिवराज संग लरते॥ १९॥
साजि दल सहज सितारा महाराज चलै,
बाजत नगारा पढ़ै धाराधर साथ से।

राइ उमराइ राना देसदेसपति भागे,
तजि तजि गढ़न गढ़ोई दसमथ से ॥
पैग पैग होत भारी डावाँडोल भूमि गोल,
पैग पैग होत दिग्ग मैगल अनाथ से।
उलटत पलटत गिरत झुकत उझकत,
शेषफनि बेदपाठिन के हाथ से॥ २० ॥

चोरी रही मन में ठगोरी रही रूप ही में,
नाहीं तो रही है एक मानिना के मान में।
केस में कुटलताई नैन में चपलताई,
भौंह में बँकाई हीनताई कटियान में॥
'भूषन' भनत पातसाही पातसाहन में,
तेरे सिवराज राज अदल जहान में।
कुच में कठोरताई रति में निलजताई,
छाड़ि सब ठौर रही आई अबलान में॥२१॥

सुमन में मकरन्द रहत है साहि-नन्द,
मकरन्द सुमन रहत ज्ञान बोध है।
मानस में हंस-बंस रहत हैं तेरे जल,
हंस में रहत करि मानस बिसोध है॥
'भूषन' भनत भौंसिला भुवाल भूमि तेरी,
करतूति रही अद्भुत रस ओध है।
पानी में जहाज रहे लाज के जहाज,
महाराज सिवराज तेरे पानिप पयोध है॥ २२ ॥

[सवैया]

अवरँग सा इक ओर सजे इक ओर सिवा नृप खेलन वारे।
'भूषन' दच्छिन दिछिय देस किए दुहुँ ठीक ठिकान मिनारे॥

साह सिपाह खुमानहि के खग लोग घटान समान निहारे।
आलमगीर के मार वजीर फिरैं चहुगान बटान से मारे॥ २३॥
श्रीसिवराज धरापति के यहि भाँति न पराक्रम होवत भारी।
दंड लिये भुवमंडल के नहिं कोऊ अदंड बच्यो छतधारी॥
बैठि सुदच्छिन 'भूषन' दच्छ खुमान सबै हिन्दुवान उँजारी।
दिल्ली तें गाजत आवत ताजि ये पीटत आपको पंज हजारी॥ २४॥
यों पहिले उमराव लरे रन जेर किये* जसवन्त अजूबा।
साइत खाँ अरु † दाउद खाँ पुनि हारि दिलेर ‡ महमन्द डूबा॥
'भूषन' देखे बहादुर खाँ फिर होय महाबत खाँ अति ऊबा।
सूखत जानि शिवाजी के तेज सों पान से फेरत नौरँग सूबा॥ २५॥

[छप्पय]

तहवरखान हराय ऐंड़ अनवर की जँग हरि।
सुतरुदीन बहलोल गये अबदुल समद्द मुरि॥
महमद को मद मेटि सैद अफ़गनहि जेर किय।
अति प्रचंड भुजदंड बलन काहिनै दंड दिय॥
'भूषन' बुँदेल छतसाल डर, रंग तज्यो अवरंग लजि।
झुक्के निशान तजि समर सों मक्के तक्कि तुरुक्क भजि॥२६॥
सैयद मुग़ल पठान सेख चन्द्रावत भच्छन।
सोमसूर द्वै बंस राव राना रन रच्छन॥
इमि 'भूषन' अवरंग और एदिल दल जंगी।
कुल करनाटक कोट भोट कुल हबस फिरंगी॥
चहुँ ओर बैर महि मेरु लगि साहितनै साहस झलक।
फिर एक ओर शिवराज नृप एक ओर सारी खलक॥२७॥

---

* पाठा०—कै पहिले उमराव अशीरुल फेरि कियो।

† फेरि कुत्तब खाँ। ‡ दलेल।

[कवित्त मनहरण]

सारस से सूबा करवानक से साहजादे,
मोर से मुगल मीर धीर ही धचैं नहीं।
बगुला से बंगस बलूचियो बतक ऐसे,
काबली कुलंग याते रन में रचैं नहीं॥
'भूषन' जू खेलत सितारे में सिकार संभा,
सिवा को सुवन जाते दुवन सचैं नहीं।
बाजी सब बाज से चपेटै चंगु चहूँ ओर,
तीतर तुरुक दिल्ली भीतर बचैं नहीं॥ २८॥

साहू जी की साहिबी दिखात कछू होनहार,
जाके रजपूत भरे जोम बमकत हैं।
भारे भारे नग्र वारे भागे घर तारे दै दै,
बाजे ज्यों नगारे घनघोर धमकत हैं॥
व्याकुल पठानी मुगलानी अकुलानी फिरैं,
'भूषन' भनत माँग मोती दमकत हैं।
दच्छिन के आमिल भो सामिलही चहूँ ओर,
चम्बल के आर पार नेजा चमकत हैं॥ २९॥

बलख बुखारे मुलतान लौं हहर पारै,
काबुल पुकारै कोऊ धरत न सार।
रूम रूँदि डारै खुरासान खूँदि मारै खाक,
खादर लौं झारै ऐसी साहू की बहार है॥
सक्खर लौं भक्खर लौं मक्कर लौं चले जात,
टक्कर लेवैया कोऊ वार है न पार है।
'भूषन' सिरौंज लौं परावने परत फेरि,
दिल्ली पर परति परिन्दन की छार है॥ ३०॥

[दोहा]

रेवा तें इत देत नहिं, पथिक म्लेच्छ निवास।
कहत लोग इन पुरनि मैं, है सरजा को त्रास ॥ ३१ ॥

[कवित्त मनहरण]

बाजी बम्बा चढ़ो साजि बाजि जब कलाँ भूप,
गाजी महाराज राजी 'भूषन' बखानते।
चंडी की सहाय महि मंढी तेजताई ऐंड़,
छंडी राय राजा जिम दंडी औनि आनते॥
मन्दीभूत रवि-रज बन्दीभूत हठ धर,
नन्दी भूतपति भो अनंदी अनुमान ते।
रङ्कीभूत दुवन करङ्कीभूत दिगदन्ती,
पंकीभूत समुद सुलंकी के पयान ते ॥३२॥

रहत अछक पै मिटै न धक पावन की,
निपट जुनाँगी डर काहू के डरै नहीं।
भोजन बनावै नित चोखे खानखानन के,
सोनित पचावै तऊ उदर भरै नहीं॥
उगिलत आसौं तऊ सुकल समर बीच,
राजै राव बुद्ध कर बिमुख परै नहीं।
तेग या तिहारी मतवारी है अछक तौ लौं,
जौ लौं गजराजन की गजक करै नहीं ॥३३॥

जा दिन चढ़त दल साजि अवधूतसिंह
ता दिन दिगन्त लौं दुवन दाटियतु है।
प्रलै केसे धाराधर धमकैं नगारा धूरि,
धारा ते समुद्रन की धारा पाटियतु है॥

---

(३३) इसमें 'भूषण' उपनाम नहीं आया है तथा याज्ञिक महाशय इसे लाल कलानिधि कृत लिखते हैं। यह छंद संदिग्ध अवश्य है।

'भूषन' भनत भुवगोल को कहर तहाँ,
हहरत तगा जिमि गज काटियतु है।
काँच से कचरि जात सेस के असेस फन,
कमठ की पीठि पै पिठी सी बाँटियतु है ॥३४॥

मेचक कवच साजि बाहन बयारि बाजि,
गाढ़े दल गाजि रहे दीरघ बदन के।
'भूषन' भनत समसेर सोइ दामिनी है,
हेतु नर कामिनी के मान के कदन के॥
पैदरि बलाका धुरवान के पताका गहे,
घेरियत चहूँ ओर सूते ही सदन के।
ना करु निरादर पिया सों मिलु सादर यै,
आये बीर बादर बहादर मदन के ॥३५॥

उलदत मद अनुमद ज्यों जलधि जल बल हद,
भीम कद काहू के न आह के।
प्रबल प्रचंड गंड मंडित मधुप वृन्द,
बिन्ध्य से बिलन्द सिन्धु सात हू के थाह से॥
'भूषन' भनत भूल झंपति झपान झुकि,
झूमत झुलत झहरात रथ डाह के॥
मेघ से घमंडित मजेजदार तेजपुंज,
गुंजरत कुंजर कुमाऊँ नरनाह के ॥३६॥

किबले की ठौर बाप बादसाह साहजहाँ
ताको कैद कियो मानो मक्के आगि लाई है।
बड़ो भाई दारा वाको पकरि कै कैद कियो,
मेहर हू नाहिं माँ को जायो सगो भाई है॥
बंधु तौ मुराद बक्स बादि चूक करिबे को,
बीच दै कुरान खुदा की कसम खाई है।

'भूषन' सुकबि कहै सुनौ नवरंगजेब,
ऐते काम कीन्हे फेरि पातसाही पाई है ॥ ३७ ॥

हाथ तसबीह लिए प्रात उठै बन्दगी को,
आप ही कपट रूप कपट सु जप के।
आगरे में जाय दारा चौक में चुनाय लीन्हों,
छत्र हू छिनायो मानो मरे बूढ़े बप के ॥
कीन्हों है सगोत घात सोमै नहीं कहों फेरि,
पील पै तोरायो चार चुगुल के गपके।
'भूषन' भनत छरछंदी मतिमंद महा,
सौ सौ चूहे खाय कै बिलारी बैठी तप के ॥ ३८ ॥

जुद्ध को चढ़त दल बुद्ध को जसत तब,
लंक लौं अतंकन के पतरें पतारे से।
'भूषन' भनत भारे घूमत गयंद कारे,
बाजत नगारे जात अरि उर छारे से ॥
धसिके धरा के गाढ़े कोल के कड़ा कै डाढ़े,
आवत तरारे दिगपालन तमारे से।
फेन से फनीस-फन फूटि विष छूटि जात,
उछरि उछरि सिंह पुरवै भुआरे से ॥ ३९ ॥

अकबर पायो भगवन्त के तनै सों मान,
बहुरि * जगतसिंह महा मरदाने सों।
'भूषन' त्यों पायो जहाँगीर महासिंह जू सों,
साहिजहाँ पायो जयसिंह जग जाने † सों ॥
अब अवरंगजेब पायो रामसिंह जू सों और,
दिन दिन पैहै कूरम के माने सों।

*पाठा०-तनय जू सों बहुर् यो।
† बर बान।

केते राजा राय मान पावै पातसाहन सों,
पावें पातसाह मान मान के घराने सों ॥ ४० ॥

डंका के दिये ते दल डम्बर उमंड्यो,
उडमंड्यो उड़मंडल लौं खुर की गरद्द है।
जहाँ दारासाह बहादुर के चढ़त पैड़
पैड़ में मड़त मारू राग बम्ब नद्द है॥
'भूषन' भनत घने घुम्मत हरौल वारे,
किम्मत अमोल बहु हिम्मत दुरद्द है।
हद्दन छपद्द महि मद्द फरनद्द होत,
कद्दन भनद्द से जलद्द हलदद्द है ॥ ४१ ॥

भले भाई भासमान भासमान भान जाको,
भानत भिखारिन के भूरि भय जाल है।
भोगन को भोगी भोगि-राज कैसो भाँति भुजा,
भारि भूमिभार के उभारन को ख्याल है॥
भावतो समानि भूमि-भामिनी को भरत र,
'भूषन' भरतखंड भरत भुवाल है।
विभौ को भँडार औ भलाई को भवन भासे,
भाग भरे भाल जयसिंह भुवपाल है॥ ४२ ॥

पौरच नरेस अमरेस जू के अनिरुद्ध,
तेरे जस सुने ते सुहात स्रौन सीतलै।
चंदन सी चाँदनी सी चादरै सी चहुँ दिसि.
पथ पर फैलती है परम पुनीत लै॥
'भूषन' बखानी कवि मुखन प्रमानी सोतो,
बानी जू के बाहन हरख हंस हीतलै।
सरद के घन की घटान सी घमंडती हैं.
मेंडू ते उमंडती हैं मंडती महीतलै॥ ४३ ॥

कोकनद-नैनी केलि करी प्रानपति संग,
उठी परजंक ते अंनग जोति सोकी सी।
'भूषन' सकल दलमलि हलचल भये,
बिन्दु लाल भाल फैल्यो कान्ति रवि रोकी सी॥
छूटि रही गोर गाल ढाल पै अलक आछी,
कुसुम गुलाब के ज्यों लीक अलि दो की सी॥
मोति सीसफूल ते बिथुरि फैलि रह्यो मानो,
चन्द्रमा ते छूटी है नछत्रन की चौकी सी॥ ४४॥

देखत ही जीवन बिडारौ तो तिहारौ जान्यो,
जीवनद नाम कहिबे ही को कहानी मैं॥
कैधौं घनश्याम जो कहावै सो सतावै मोहि,
निहचै कै आजु यह बात उर आनी मैं॥
'भूषन' सुकवि कीजै कौन पर रोसु निज,
भागि ही को दोसु आगि उठति ज्यों पानी मैं।
रावरे हू आये हाय हाय मेघराय सब,
धरती जुड़ानी पै न बरती जुड़ानी मैं॥४५॥

मलय समीर परलै को जो करत अति जम की,
दिसा ते आयो जम ही को गोतु है।
साँपन को साथी न्याय चन्दन छुयो तो डसै,
सदा सहवासी बिष गुन को उदोतु है॥
सिंधु को सपूत कलपद्रुम को बंधु दीनबंधु
को है लोचन सुधा को तनुसोतु है।
'भूषन' भनै रे भुव-भूषन द्विजेस तैं,
कलानिधि कहाय कै कसाइ कत होतु है॥ ४६॥

बन उपवन फूले अंबनि के मौर भूले,
अवसि सुहात सोभा और सरसाई है।

अलि मदमत्त भये केतकी वसंती फूली,
'भूषन' बखानै सोभा सबै सुखदाई है॥
बिषम बिडारिबे को बहत समीर मंद,
कोकिला की कूक कान कानन सुनाई है।
इतनो सँदेसो है जू पथिक तिहारे हाथ.
कहो जाय कन्त सों बसन्त ऋतु आई है॥ ४७॥
जिन किरनन मेरा अंग छुयो तिनहीं सों,
पिया अंग छुवै क्यों न मैन दुख दाहे को।
'भूषन' भनत तू तो जगत को भूषन है,
हौं कहा सराहौं ऐसे जगत सराहे को॥
चंद ऐसी चाँदनी तू प्यारे पै बरसि उतै,
रहि न सकै मिलाप होय चित चाहे को।
तू तो निसाकरै सब हां की निसा करै,
मेरी जो न निसा करै तू निसाकर काहे को॥ ४८॥
कारो जल जमुना को काल सो लगत आली,
छाइ रह्यो मानो यह विष कालीनाग को।
बैरिन भई है कारी कोयल निगोड़ी यह,
तैसो ही भँवर कारो बसि बन बाग को॥
'भूषन' भनत कारे कान्ह को बियोग हियै,
सबै दुखदाई जो करैया अनुराग को।
कारो घन घेरि घेरि मार्‍यो अब चाहत है,
एते पर करति भरोसो कारे काग को॥ ४९॥

[सवैया]

सौंधे भरी सुखमा सुखरी मुख ऊपर आइ रही अलकैं।
कवि 'भूषन' अंगे नवीन बिराजत मोतिन माल हियै झलकैं।
उन दोउन की मनसा मनसी नित होत नई ललना ललकैं।
भरि भाजन बाहिर जात मनौ मुसुकानि किधौं छबि की छलकैं॥५०॥

[कवित्त मनहरण]

नैन जुग नैनन सो प्रथमै लड़े हैं धाय,
अधर कपोल तेऊ टरै नाहिं टेरै हैं।
अड़ि अड़ि पिलि पिलि लड़े हैं उरोज बीर,
देखो लगे सीसन पै घाव ये घनेरे हैं।।
पिय को चखायो स्वाद कैसो रति संगर को
भये अंग अंगनि ते केते मुठभेरे हैं।
पाछे परे बारन को बाँधि कहै आलिन सो,
'भूषन' सुभट ये ही पाछे परे मेरे हैं॥ ५१॥
सुने हूजै बेसुख सुने बिन रह्यौ न जाय
याही ते बिकल सी बितातीं दिन राती हैं।
'भूषन' सुकबि देखि बावरी बिचार काज,
भूलिबे के मिस स स नन्द अनखाती हैं॥
सोई गति जानै जाके भिदी होय कानै सखि,
जेती कहैं तानै लेती छेदि छेदि जाती हैं।
हूक पाँसुरी मैं क्यों भरौ न आँसुरी मैं,
थोरे छेद बाँसुरी मैं, घने छेद किये छाती हैं॥ ५२॥
सतयुग द्वापर औ त्रेता कलियुग मध्य,
आदि भयो नाहीं भूप तिनहूँ ते आ घरी।
अकबर बब्बर हुमायूँ साह सासन सों,
स्नेह ते सुधारी हेम हीरन तें सगरी॥
'भूषन' भनत ऐसी मुगलानी चहुँथ द नी,
दौरि दौरि पौरि पौरि लूट ली चहूँ फिरी।
धूरि तन लाइ बैठि सूरत है रैन दिन,
सूरत को मोरि बदसूरत सिवा करी॥ ५३॥
सिंहल के सिंह सम रन सरजा की हाँक,
सुनि चौक चलत बँधाइ पाट सादा के।

'भूषन' भनत भुवपाल दुरे द्राविड़ को,
ऐल फैल गैल गैल भूले उनमादा के ॥
उछलि उछलि ऊँचे सिंह गिरे लंक माँहि,
बूड़ गये महल विभीषन के दादा के।
महि हाले मेरु हाले अलका कुबेर हाले,
जा दिन नगारे बाजे सिव साहजादा के ॥ ५४ ॥

पक्खर प्रबल दल भक्खर सौं दौरि करि,
आय साह जी को नंद बाँधी तेग बाँकरी।
सहर भोलायो मारि गरद मिलायो गढ़,
अजहूँ न आगे पाछे भूप किन ना करी ॥
हीरा मानि मानिक को लाख पोट लादि गयो,
मजीद ढहायो जा पै काढ़ि मल काँकरी।
आलम पुकार करे आलम पनाह जू पै,
होरी सी जराय सिवा सूरत फना करी ॥ ५५ ॥

दिल्ली के हरौल भारी सुभट अडोल गोल,
चालिस हजार ले पठान धायो तुरको।
'भूषन' भनत जाकी दौर ही को सोर मच्यो,
ऐदिल की सीमा पर फौज आन दुरकी ॥
भयो है उचाट करनाट नरनाहन को,
काँपि उठी छाती गोलकुंडा ही के धुर की।
साहि के सपूत सिवराज बीर तैंने तब,
बाहुबल राखी पातसाही बीजापुर की ॥ ५६ ॥

घिरे रहे घाट और बाट सब घिरे रहे,
बरस दिना को गैल छिन माहि छ्वै गयो।
ठौर ठौर चौकी ठाढ़ी रही सब स्वारन की,
मीर उमरावन के बीच ह्वै चलो गयो ॥

देखे में न आयो ऐसे कौन जाने कैसे गयो,
दिल्ली कर मीड़े कर झारत किते गयो।
सारी पातसाही के सिपाही सेवा सेवा करै,
पर्यो रह्यो पलंग परेवा सेवा ह्वै गयो॥ ५७॥
बाजे बाजे राजे से निवाजे हैं निजर करी,
बाजे बाजे राजे काटि काटे असिमत्ता सों॥
बाँके बाँके सूबा नालबंदी दै सलाह करै,
बाँके बाँके सूबा करै एक एक लत्ता सों॥
गाढ़े गाढ़े गढ़पति छाँड़े रामद्वार दै दै गाढ़े,
गाढ़े गढ़पति आने तरे कत्ता सों।
बाजीराव गाजी तैं उबार्यौ आइ छत्रसाल,
आमिल बिठायो बल करि कै चकत्ता सों॥ ५८॥
भेंटि सुरजन तोहि मेटि गुरजन-लाज पंथ,
परिजन की न त्रास जिय जानी है।
नेह ही को तात गुन जीवन सकल गात,
भादौं-तम-पुंजन निकुंजन सकानी है॥
सावन की रैनि कवि 'भूषन' भयावनी मैं,
भावत सुगति तेरी संकहू न मानी है।
आज रावरे की यहाँ बातै चलिबै की मीत,
मेरे जान कुलिश घटा सी घहरानी है॥५९॥

[सवैया]

मेरु को सोनो कुबेर की संपति ज्यों न घटै बिधि राति अमा की।
नीरधि नीर कहै कबि 'भूषन' छीरधि छीर छमा है छमा की॥
रीति महेस उमा की महा रस रीति निरंतर राम रमा की।
ए न चलाए चलै क्रम छोड़ि कठोर क्रिया औ तिया अधमा की॥ ६०॥

परिशिष्ट (क)

टिप्पणी

शिवराजभूषण

१—भव—पथ—संसाररूपी मार्ग, भवसागर। करन—कर्ण, कान। बिजना पंखा। कोकनद कमल। इह लोक—मृत्यु-लोक, संसार। द्विरद-मुख—गणेश जी।

२—जयंति—पार्वती जी। आदि-सकति—आदि शक्ति) परमेश्वरी। कपर्दिनि—महादेव जी की स्त्री। चमुंड—(चामुंडा) पार्वती का एक नाम। दुर्गा जी ने मधुकैटभ, महिषासुर, चंड, मुण्ड, भंडासुर, रक्तबीज, बिड़्डाल, निशुंभ, शुंभ आदि दैत्यों को मारा था, इससे उनकी स्तुति में इन दैत्यों के साथ विनाशिनि—वाचक शब्द लगाकर कहते हैं।

३—तरनि—सूर्य नाव। ओक—गृह, स्थान। कोक—चक्रवाक। कोकनद—कमल। आलोक—प्रकाश। कवि ने सूर्य की स्तुति करके तब उसके वंश का वर्णन आरंभ किया है।

४—दिनराज—सूर्य। अवतंस—भूषण, श्रेष्ठ। कंसमथन—श्रीकृष्ण। प्रभु-अंस—परब्रह्म के अवतार श्रीकृष्ण जो यदुवंशी थे, जो चंद्रवंश की एक शाखा हैं। इस कारण ज्ञात होता है कि कवि ने श्रीकृष्ण जी को परब्रह्म-स्वरूप माना है और उन्हीं का अंश लेकर इस सूर्यवंश में अनेक अवतार होने का उल्लेख किया है। इसलिए कंसमथन प्रभु शब्द का विशेषण हो कर आया, अर्थात् कंस को मारने वाले परब्रह्म परमेश्वर।

५—सीसौदिया—सोमोदे ग्राम के निवासी होने के कारण सीसौदिया कहलाए। कवि महाराज ने सीसौ—दिया अर्थ लगाया। एक भाट ने लिख म.रा है कि एक महाराणा को उनके अनजान में दवा रूप में वैद्य जी ने मदिरा दे दिया, जिसे जान कर उन्होंने गला हुआ सीसा पी लिया इससे सिसौदिया कहलाए।

६—बखत—बख्त) भाग्य किस्मत। बलंद—ऊँचा, अच्छा।

७—किरवान—कृपाण, तलवार। अबु—जल। निजामसाहि—अहमदनगर के निजामशाही सुलतान।

८—सरजा—(फा० सर+जाह) सर्दारेमतब:, बड़े रुतबे वाला, प्रतिष्ठित। रन+भू+सिला—युद्धस्थल में चट्टान-से दृढ़।

१०—बिरंचि की तिया—सरस्वती जी। छिया—तुच्छ। तकिया—आश्रय, सहारा।

१२—अहमेव—अहंता, गर्व।

१३—भुसिल-भू—शिवा जी भोंसला। करन-प्रवास—हाथियों की सेना।

१४—सहार—सहारा, आश्रय। सिव—शिवजी, शिवाजी।

१५—साहि—शाह जी। जपत—कहता है।

१६—उत्तंग—ऊँचा। मरकत—पन्ना, हरा रत्न। घन-समै—वर्षा ऋतु। पटल—परत तह। गलगाजहीं—गरजते हैं।

१७—ऊरध—ऊपर।

१८—पुहुपराग—पुष्पराग, पुखराज। फटिक—स्फटिक बिल्लौर।

२०—लवली—हरफारेवरी फल। यलानि—इलायची।

२१—करबार कनेर। दाख—द्राक्षा, मुनक्का। दाड़िम—अनार। तूत—शहतूत। जभोर—बड़ा निबुआ। कदंब—एक फल। समूह—गुच्छा। हिंताल—जंगली खजूर। ताल—ताड़, खजूर। तमाल—आबनूस। रसाल—आम, रस भरे।

२२—पुन्नाग—सुलतानी चंपा, सफेद कमल। बकुल - सुगंधित पुष्प। पाटल—कुंभी—फूल, यह लाल और सफेद दो प्रकार का होता है।

२३—लवनित—लावण्ययुत, सुन्दर। महरि—ग्वालिन नामक पक्षी। चटुल—चंचल, सुन्दर। मकरंद—पराग। घन—तीव्र।

२६—तरनि-तनूजा—सूर्य-तनया, यमुना।

२९—भूषननि—अलंकारों।

३३—सरवार—समानता, सादृश्य।

३४—चकत्ता—मुगल सम्राटों के वंश का एक नाम चगत्ताई भी था। कुमिस—झूठे बहाने। गैर मिसिल—जो बराबर के न थे। दाबदार—प्रतापी, रोबदार। दीह—दीर्घ, बड़ा। दल-राय—सेनापति। गड़दार—भाले वाले जो हाथियों को बिगड़ने पर उसे भाले दिखाकर आगे बढ़ाते हैं। अड़दार—अड़ने वाला, मस्त।

३५—बिगोय—नष्ट कर। छौनि—पृथ्वी, भूमि। भारथ—महाभारत युद्ध।

३७—अमीत—शत्रु। मुधा—व्यर्थ। बंदन—पूजा, प्रतिष्ठा।

३८—जापता—(अ० जाब्तः) नियम, अदब। मिनके—एकदम चुप रहे। तुजुक—(तु०) नियम, क़ानून।

३९—सकस—(फा० शख्स) आदमी, मनुष्य।

४१—प्रेम—प्रिय, प्यारा।

४२—करारी—तेज, अधिक। सौध—सफेद महल। बगारी—फैलाई।

४३—वर्ण्य—उपमेय।

४४—तूल—तुल्य, समान।

४५—अवर्ण्य—उपमान।

४८—नाग—सर्प, हाथी। अबस—(अ०) व्यर्थ। भोर ढहरात न—तुषार—कण, ओस जो सूर्य निकलते ही नष्ट हो जाती है। ढहरात—ढलकर नष्ट हो जाता है। टंक—तीन माशे को एक छोटी तौल।

५०—कैलासधर—महादेव जी।

५१—कहाऽब—कहा + अब।

५२—जोऽब—जो + अब। ध्रुव—निश्चय, अवश्य। ध्रू—ध्रुव नक्षत्र। सुर-रूख—कल्पवृक्ष। देव-गऊ—कामधेनु। दिगदंति—दिक्-पाल हाथी। कुंडलि—साँप, शेषनाग।

५४—निकट—समूह। दिनकर—चंद्रमा। आकर—घर, खान। रत्नाकर—समुद्र।

५६—जंभ—महिषासुर का पिता। बारिवाह—बादल। दंड—पंक्ति, समूह। बितुंड—हाथी।

५९—रेल—रेला, प्रवाह। जोन्ह—चाँदनी। कुहू—अमावास्या।

६१—उद्ध—ऊपर। उम्मि—ऊर्मि, तरंग। बादबान—(फ०) जहाज़ का पाल।

६२—नवरंगसाहि—औरंगजेब बादशाह। एदिल—बीजापुर का आदिलशाही सुलतान। कुतुब्ब—गोलकुंडे का कुतुबशाही सुलतान।

६३—थरि—स्थली, जगह। भठी—पैठना, घुसना। मद्गल—मस्त, मत्त। ता बिगिर—उसके बिना।

६५—बिगिर—बगैर, बिना। सहससीस—शेषनाग। सहसदृग—इंद्र। सहस्रकर—सूर्य, सहस्ररश्मि।

६६—फैल—बहुत, आधिक्य। ऐल—बाढ़, बहुतायत।

६८—दारिद-दौ—गरीबी की आग। करि-बारिद—हाथी रूपी बादल।

६९—घुग्घू—उल्लू। तापी—तपाया।

७१—नरसिंह—नृसिंह जी, नररूपी सिंह।

७२—करन—कर्ण। करन जीत—कर्ण को जीतने वाला, अर्जुन। कमनैत—धनुर्धर। धरेस—पर्वत। धराधर—पृथ्वी को धारण करने वाला। कहरी—(फा०—क़हरी) आफत ढाने वाला। बहरी—समुद्री। अहमदनगर के निजामशाही सुलतान बहरी कहलाते थे। बहरी निजाम के जितैया—औरङ्गजेब देव—(फ़ा० असुर।

७३—हमाल—(अ०—हम्माल) बोझ उठाने वाला। अमाल—(अ०—आमिल) अफसर, हाकिम। दंडक—शासक।

७५—इस पद में शिवाजी को भूषण का अवतार बतलाते हुए कहते हैं कि अन्य ब्राह्मणों पर वह सुदामा जी की तरह दया करते हैं, पर हमें देखकर भृगु की सुधि करते हैं अर्थात् क्रुद्ध होते हैं। भृगु ने विष्णु को लात मारा था।

७७—सोचै—शोक करके, दुख से।

७६—गुसुलखाने—(अ० गुस्लखानः) स्नानघर। त्योर—त्योरी, क्रुद्ध आँखें। रस खोट—अनरस, वैमनस्य। अगोट—रोक, आड़। रेवा—नर्मदा नदी।

८०—दुराय—छिपाकर। आरापिए—आरोपण कीजिए, कहिए।

८१—फिरंगैं—फिरंगी अर्थात् यूरोपीय शस्त्र। बैरख—झंडा, निशान। धुरवा—बादल, मेघ। दराज—(फा०) बड़ा, भारी। गज-घटनि-सनाह—हाथियों के झुण्ड के लोहे के झूल।

८३—भुज-भुजगेस-भुजंगिनी—हाथरूपी सर्प की नागिन है।

८४—करबाल—तलवार। चंड—शरीर, कबंध। बार—देर। भरतार—भर्ता, पति, स्वामी। भूतनाथ—महादेव जी जो मुंडमाला पहिरते हैं।

८४—गोय—छिपाकर। रोपि—आरोप कर।

८६—काल—मृत्यु, भोजन, खा जाना।

८७—दिगनाग—दिशाओं के रक्षक हाथी। अमल—अधिकार। धरातल—पृथ्वी।

८६—ओत—ओट, रक्षा। जच्छ—यक्ष, कुबेर के सैनिक।

६०—आलमगीर—औरंगजेब की एक पदवी। करौलनि—(फा० करावल) पीछे के सैनिकगण।

६०—छेक—अयथार्थ, झूठा। अवदात—अच्छा, विमल।

६२—तिमिर-बंस-हर—अंधकार हरण करने वाला, तैमूरवंश को हराने वाला। अरुन-कर—लाल किरणों वाला, सुर्खरू। सूरज-कुल-सिरमौर—सूर्यवंश क मुकुट, श्रेष्ठ सूर्य।

६३—दुरगहि—दुर्ग को दृढ़ता से पकड़ कर, दुर्गा जी के।

६४—चकत्ता—औरंगजेब।

६५—कैतव—बहाना, छल। सति—सत्य, सच्चा।

६६—धर—धड़, शरीर।

६६—भयारो—भयानक, डरावना। बीछू—एक प्रकार का छूरा। अरिंद—भारी शत्रु। मयंद—शेर।

१००—निसाँक—निश्शंक, निडर। राठिवर—राष्ट्रवर, राठौर।

१०१—दुरजन-दार—दुष्टों की स्त्री, शत्रु-स्त्री। नाहन—स्वामियों, पतियों। कलिंद—कलिंद पवत जो यमुना का उद्गम है।

१०२—अमाल—शासक। गढ़ोई—गढ़पति, किलेदार। रिसाल—(फा० रिसालः इर्साल) सेना, खिराज।

१०४—अचल—पवत। पाग—पगड़ी, पहाड़ों पर दुर्गरूपी पाग।

१०७—उदरत गिरती है। द्योस—दिन। निकेत—घर। मावली—जाति-विशेष।

११०—बासव—इन्द्र। मसनंद—राजाओं की गद्दी। कनकलता—सोने का कमल-दंड।

११२—जुमिला—(फा० जुमलः) और सब। कुही—छोटा पक्षी। ढुँढार—आमेर राज्य। झारखंड—उड़ीसा। बांधौधनो—रीवाँ के राजा। ताकत—देखते हैं। पनाह—(फा०) शरण। जैतवार—विजय करने वाला। न्यारी—निराली।

११३—अक्रम—क्रमहीन, बे सिलसिले।

११४—उद्धत—प्रचंड, तीव्र। पारावार—समुद्र। रँगरेजें—रँगे हुए रेज़े अर्थात् धूल कण। रज-पुञ्ज—धूल की ढेर। परन—शत्रु। अर्थात् सवारों के धावे से तथा शत्रु के भगाने से उठे धूल साथ ही उड़ रहे हैं। कसीसैं—(फा० कशिशें) खींचना।

११७—बिलायत—मुसलमानों का विलायत फारस, रूम आदि। दलित—कूटती पीटती हैं। चमू—सेना।

११६—मंगन—भीख माँगने वाला। डारि—फेंक कर। दीह—भारी।

१२०—रस—जल। सुफल—इच्छा पूर्ण होती है। फूल—प्रसन्नता।

१२३—बसुधा—भूमि। घमसान—युद्ध। जगती—भूमि। धृत—धैर्य धीरज। मीरन—मीरों अर्थात् सैयदों। पीर—पीड़ा, पितर।

१२५—चढ़त—सवार होना, बढ़ना, घुसना, मिलना, ऊपर जाना। जोट—झुंड। व्योमयान चढ़ना—विमान पर बैठ कर स्वर्ग जाना। बन्दरङ्ग—स्याही।

१२८—गुनन—गुणों, रस्सी। पाय—पैर, पकर। गहि—छूकर, पकड़ कर। रस—प्रसन्नता, स्नेह। रोस—क्रोध। दोहाई—दोहा ही, शरण आना।

१३०—जामिनी—यामिनि, रात्रि। दामिनि—बिजली। पावस—वर्षा ऋतु। सूरति—रूपरङ्ग। नलिनी—कमलिनी। पूषन—सूर्य।

१३३— चंका—अच्छी तरह । दरीन— गुफाएँ । नंका = नाँघ गए ।
साहि—शाह, शिवाजी के पिता शाह जी । धंका - धक्का ।

१३४—रैयति - प्रजा । पेस - भेंट । राना उदयपुर के महाराणा ।
बाना—हठ । हाड़ा, राठौर, कछवाहा तथा गौड़—राजपूतों की ये कई शाखाएँ हैं । क्रमशः बूँदी, जोधपुर और जयपुर में इन जातियों के राजा थे । गौड़ जाति को औरङ्गजेब के समय में बादशाही राज्य में जागीर मिली थी ।
चमाऊ—चवर । ऐंड़—अभिमान ।

१३६—मद-जल-धरन—मत्त होने से जिसे मद चू रहा हो ।
पुहुमि - पृथ्वी । खरग धरन····· समाजै—तलवार धारण करने की शोभा वहीं है जहाँ समाज के रक्षा की रुचि है । ऐंड धरन—अभिमान रखना ।

१३८—हत्थिमत्थ—हाथी का माथा । घालै—करै ।

१३९—जिस प्रकार निराकार को ज्ञानी और साकार को गुणी लोग चाहते हैं उसी प्रकार वीर शिवाजी निर्गुणी और गुणी दोनों ही पर दया करते हैं ।

१४०—तुरी—घोड़ा । करी—हाथी । निहाल— प्रसन्न संतुष्ट ।

१४२—कोल—बाराह । होबे—होने को ।

१४३—मारतंड—सूर्य । कीरति......जानी मैं—शिवाजी के यश के साथ उनका प्रताप वैसे ही जान पड़ता है जैसे सूर्य के तेज में चाँदनी चमकती है अर्थात् सूर्य के प्रखर तापरूपी प्रताप में कोमल चाँदनीरूपी कीर्ति भी मौजूद है । भाग फिरना—भाग्य का उदय या अवनति होना ।

१४५—ख्याल—साधारण काम । जंजाल—झंझट ।

१४७—इन्द्र से समता दिखलाते हुए शिवाजी को बढ़ाकर कहा गया है । वह—इंद्र । एक अरि—वृत्रासुर । यह—शिवाजी । बिहंडि- नष्ट कर । पानिप—जल, शोभा । यक्कई—एक ही ।

गयंद—ऐरावत हाथी। तुरंग—उच्चैःश्रवा घोड़ा। सरवरि—बराबरी।

१४८—दुर्योधन से दूना कुटिल औरङ्ग छल से संसार को फँसाए हुए है। धर्म—युधिष्ठिर, सत्यतः। पैज—पौरुष। लाख—लाक्षा, लक्ष।

१५०—हुलास—प्रसन्नता, खुशी। आमखास—बादशाही दरबार। हरम—जनाना महल। रुचि—इच्छा, रङ्ग।

१५२—अगड़—अकड़, अभिमान। गुमान—घमंड।

१५३—बिभूषन—भूषण, शोभा। सभाजित—सभा जीतने वाला।

१५४—विवेक—सत् असत् का ज्ञान। लाज के जहाज—शीलवान शिवाजी। अपजस काज—कुकीर्ति-युत काम। गरीब-नेवाज—दीनों को पालने वाले। ओज—उद्दंड प्रताप। घनी—भारी, अधिक।

१५५—करी—किया। धरबी—धरेगी। कुतुब—कुतुब—कुतुबशाह, ध्रुव नक्षत्र की ओर अर्थात् उत्तर बतलाने वाला यंत्र। धुर—अक्ष धुरा, प्रधान स्थान। सिंह—सिंहगढ़। साहिबी—आधिपत्य, बादशाही। दिलीसुर—दिल्लीश्वर। सलाह—मेल। मुरकी—बिगड़ी।

१५६—पील—(फा०) हाथी। यहाँ औरङ्गजेब से तात्पर्य है। थान—जगह। सरजा—सिंह, शिवाजी।

१५८—द्विजराज—चन्द्रमा, ब्राह्मण। कला—किरण, गुण। शिव—महादेव जी, शिवाजी। दोहे से चन्द्रमा का वर्णन ज्ञात होता है पर वह 'भूषण' कवि पर भी घटता है।

१५९—बिधनोल—बिदनोर। केली—क्रीड़ास्थल। विरुद—यश, कीर्ति। गोर—गौड़। अफग़ानिस्तान का ग़ोर अर्थ लेना अशुद्ध है, क्योंकि पूर्व में गौड़ और पश्चिम में गुजरात

तक कवि का तात्पर्य है। गौड़ के हाथी भी प्रसिद्ध हैं, गोर के नहीं। बसति—बस्ती, निवास-स्थान। रद—नष्ट।

१६०—साभिप्राय—अभिप्राय—युक्त, किसी अर्थ से।

१६१—समुहाने—सामना करने पर। अयाने मूर्ख। दिल आने—मान लो। बरजा—वर्जित, मना करना। ललन—पुत्र।

१६२—जाहिर-जहान—संसार-प्रसिद्ध। पासवान--पार्श्ववर्ती, मुसाहब। खलक़--दुनिया। राय--राजा, अमीर। अनङ्ग--अङ्ग भङ्ग, कामदेव। शिवजी तथा शिवाजी दोनों पर अथ घटता है।

१६३—सूर-वीर, सूर्य। कुल--वंश।

१६४—अंधक--एक असुर जिसे महादेव जी ने मारा था।

१६६—सीता--श्रीजानकी जी, (सी+ता) श्री अर्थात् लक्ष्मी+उसके। सुलच्छन--अच्छे गुण, सु+लक्षण। भरत—भरता है, फैलाता है। नाम—यश। भाई—पसन्द। कुल सूर—रामचन्द्र जी तथा शिवाजी दोनों ही सूर्यवंश के थे। दास-रथी—दशरथ जी के पुत्र, दास+रथी। लंक—कमर, लंका। तोर--तोड़ने वाला। बान रहैं—वानर हैं। सिन्धु रहैं—समुद्र रहते हैं, हाथी हैं। तेग--तलवार। राकस--राक्षस, दुष्ट। मरद---मनुष्य, मर्दन।

१६७—सिहात---सिहाता है, चाहता है। निधन---निर्धन, नष्ट। न फल को---नहीं फली, कष्ट ही दिया। बस करनी---बस में लाने वाली दारी—पुंश्चली स्त्री। गनिका---वेश्या। श्लेष से दक्षिण की सूबेदारी को गणिका बनाया है।

१७१—गढ़पाल---दुर्गाध्यक्ष। मौज---इच्छा। निहाल---प्रसन्न। दुनी---संसार।

१७३—हरम—जनाना महल । हबसी—अफ्रीका की एक काली जाति । बयरनि - शत्रु-स्त्रियों का । कर चिन्ह न—अर्थात् हाथों में चूड़ी पहिरने का अवसर ही नहीं पड़ा । जमनी—यवन स्त्री । मुसलमानों में सिंदूर देने की प्रथा नहीं है, पर कवि ने यह भाव प्रकट किया कि मानों वे आरम्भ ही में विधवा हो गई थीं, इसीलिए उनके मुख-चन्द पर सिन्दूर बिन्दु नहीं दिखलाता ।

१७५--हुन्नै - हून मुहर , सोने का छोटा सिक्का जो दक्षिण में प्रचलित था । सुबरन--सुन्दर अक्षर, पद, सोना । परखि—समझ कर, गुण-दोष की विवेचना कर । लाख—लाक्षा, लाह । रूखन—वृक्ष, रूखे । हाथी--गज्जी, मोटा कपड़ा । तुमहियौ —तुम भी

१७६—बन रत—बन में घूमते रहते हैं । राज—राजश्री, धूल । दरी—पहाड़ की गुफा । वेऊ—मारे गए शत्रु । अरिवर—मुख्य मुख्य शत्रु ।

१७७—सुमेध—अच्छी मेधा वाला, बुद्धिमान ।

१७८—भिरना—लड़ना, युद्ध करना । दरियाव—नदी । लघुता—लाघव, फुर्ती । सलाह—मेल ।

१८०—मुहीम--चढ़ाई, कठिन कार्य । उजुर—उज्र, विरोध । नेक—थोड़ा । उबरते—बच जाते । घने—बहुत ।

१८२—सेत—श्वेत, सफेद । अरुन—अरुण, लाल । कृसानु—आग । गरे—गल गए । पानिप—जल, मान । तिन—तृण, तिनका ।

१८४—दच्छिन—दक्षिण दिशा, कई स्त्रियों में समान रूप से अनुरक्त । भुव-भामिनी—पृथ्वीरूपिणी स्त्री । अनुकूल—एक पत्नीव्रत । दीन—गरीब, मत ।

१८६—गारो—गाल बजाना, गर्व । कुज्वाब—टेढ़ा व्यंग्यपूर्ण उत्तर ।
१८७—अनरीझे—प्रसन्न होने के पहिले ही ।
१८९—दाबि करि—दमन करके करवार—तलवार । भरैया—फैलाने वाला । गँजाय—नाश कर ।
१९०—अखिल—सब । खल खलक—दुनिया के दुष्ट जन । करखत हैं—क्रुद्ध होते हैं । अगार—घर । दार गन—स्त्रियाँ । बार परखन—देर करना छूटे—खुलता है, खुले हुए । कारे घन उमड़ि अंगारे—काले बादल रूपी धुएँ से अंगार रूपी गोली बरसते हैं ।
१९१—तोप—तोक ।
१९२—अग्नि से धुआँ निकलता है पर यहाँ धुएँ से अग्नि अर्थात् कार्य से हेतु होना दिखलाया गया है ।
१९३—पुनीत—शुद्ध, शुभ । जस काज—यश पाने योग्य कार्य । अचरज लपटा है—आश्चर्य होता है । कोकनद—कमल । इसमें हाथरूपी कमल से संकल्प-जल गिर कर नदी बनाता है अर्थात् कार्य से हेतु होता है ।
१९४—उदार—दानशील । खुमान—शिवाजी ।
१९७—जानै—जानता था ।
१९८—जसन—(फा० जशन) महफिल, दरबार । जुलूस—(अ०) बैठना, सिंहासन पर बैठना । ग़ाजी—(अ० ग़ाजी) काफ़िर को मारने वाला, अन्य धर्म वालों को मारने वाला । तुजुक—दरबार के नियम । लरजा—(फा० लर्जीदन—काँपना) काँपा । इलाम—(अ० एलाम या इलहाम) हाल कहना, जतलाना, आज्ञा । तरे—पास ।
१९९—अनत—दूसरे स्थान ।
२००—ग्रीवा—गर्दन । नै—झुकना । गनीम—(अ०) शत्रु ।

अतिबल—बलवान। खरी—अच्छी प्रकार। जराई—जलाना।
स्याही—बदनामी।

२०१—सगौर—अच्छी प्रकार मनन कर।

२०२—अहं—अहंता, घमंड। अभंग—कभी न टूटने वाला, सदा विजयी। पुरहूत—इंद्र। दंगली—दंगल मारने वाला, बहुतों के बीच विजय प्राप्त करने वाला। अगार घर। राखे जंतु जंगली—उजाड़ कर जंगली बना दिया।

२०४—प्रबीनो—प्रवीण लोग। भीनो—भरा हुआ, लीन। चकता—औरङ्गजेब। गुसुलखाना—स्नानगृह।

२०६—गाजा—गंजन किया, जीता। डौंड़ियै—नगाड़ा। दामनगीर—दामन पकड़ने वाला, समानता करने वाला।

२०७—लौं—तक। बिगूँचे—लूटा। कूँचे—नस।

२०९—पंज-हजारी—जिस मंसबदार को पाँच सहस्र सेना रखने का अधिकार हो। उजीर—वजीर, मंत्री। बेहिसाब—अधिक। इसलाम—मुसलमान होना, खुदा की राह पर जान देने को उद्यत रहना। भाव यह है कि औरंगजेब मंत्रियों पर यह कह कर बिगड़ रहा था कि शिवाजी को पाँच हजारियों के बीच में खड़े करने का भेद नहीं मालूम होता। उसके कमर की कटारी भी उसे नहीं दी गई थी और उसके हाथ में कोई हथियार भी नहीं आगया था, नहीं तो अवश्य वह अनर्थ करता। खुदा ने स्नानगृह को बचा दिया अर्थात् जहाँ मैं छिपा था वहाँ वह नहीं पहुँच सका।

२१२—कैयो—कई, कितने। बार—देर।

२१३—साईं—शाह। पंचतीस—पैंतीस।

२१५—बितान—चँदवा। क्षिति—पृथ्वी। प्रमान—प्रमाण, सबूत। हौंस—इच्छा। हेम—सोना।

२१७—दारहि—दारा शिकोह को। दारिम—मारकर । संगर—युद्ध।

२१८—रसरुद्र—युद्ध का बाना, लड़ाई करना। तिरे—पार किया।

२१९—प्रमेय—बहुत से।

२२०—बासी—बसने वाला, रहने वाला। त्रिभुवन आधार में भी हाथ में रहने वाला यश आधेय नहीं समाता।

२२१—सहज—स्वभावतः । सलील-सील—चंचल, खिलवाड़ी। पब्बय—पर्वत। पील—हाथी। जस-टंक—यश का थोड़ा ही अंश।

२२३—छिति—पृथ्वी पर। छाजना—शोभा पाना। सजै—करना, सजाना। गजै—दर्प दिखलाते हैं।

२२५—चंदावत—चंद्रावत, चूंड़ावत, मेवाड़ नरेश राणा लाखा के पुत्र चूँड़ा जो के वंशधर। रजवंत—श्रीमंत। रजतंत—धूलि की शरीर। शरीर रूपी आधार को छोड़कर आधेय का सुरलोक जाना वर्णित है।

२२६—कतलाम—(फा० क़त्ले-आम) बहुत मार-काट। फर—युद्ध-स्थल। उद्भट—भारी, वीर।

२२८—सँवारे—बनाया, किया। हरिवारे—विष्णु भगवान के। अवनी—पृथ्वी । यवनी—म्लेच्छ स्त्री। भतार—भर्ता, पति।

२२९—कसत—कस कर बाँधना या थामना। बलंद—ऊँचा। राज-मनि—राजाओं के मणि। फूल—ढाल पर जड़े हुए फूल। केते मान—कुछ नहीं। सोई हाल—वही बर्ताव। अर्थात् म्लेच्छों के काल की रक्षा करता है। ढाल का काय तलवार पर घटाया गया है।

२३०—पूरब—पहिले का। उत्तर—बाद का। गुम्फ—माला।

२३१—जहान—संसार।

२३४—रज—राज्यश्री।

२३६—महिमेवाने—(महिमावाने) महिमा-युक्त राजाओं ने। लेवा—लेने वाला। पातसाह—बादशाह सम्राट्। सेवा—शिवाजी।

२३७—जीव-जड़ो—जीवधारी और जगम, चराचर। पैज—पौरुष, पुरुषार्थ। राज—राजा।

२३९—जोई—जो। तेई—सो। दुवन—शत्रु। बड़े उर के—साहसी, उत्साही। धरैया धीर धुर के—धैर्य तथा दृढ़ता धारण करने वाले। खाँड़े—तलवार। डाँडे—दंड किया।

२४१—जीति—विजय। छत्रपति—राजाओं को। माँडि—मडित, शोभित।

२४२—हरकतु है—रोकता है या हकड़ता है। पेसकस—(फा० पेशकश) भेंट, नज़र। याकी—शिवाजी की। खरकना—काँटे सा चुभना।

२४३—अगर एक सुगंधित द्रव्य। धूप—जलाने से। बगूरे—बगोला, बवंडर। अमाप—नापने योग्य नहीं, भारी। कलावंत—गायक, गुणी। गाजत—गर्जते हैं। मतंग—हाथी। दाप—दर्पवान, भयंकर।

२४५—धरन—धारण करने वाला, स्वामी। धरमदुवार—धर्म अर्थात् पुण्य का आश्रय, शरण। सारु—तत्व, लोहा। हथियार, बड़ाई। हिंदुवानसिर—हिंदुओं को। हारु—मुंडमाला। हरगन—महादेव जी के गण पिशाचादि।

२४६—दुज ' रि—दिलदार, सहृदय।

२४७—दुरदै—हाथी। परकीति—प्रकृति, सहज स्वभाव। गुनप्रीति—गुण-ग्राहकता, प्रेम का रस्सी। कंप—डर। बारि-बुंद—आँसू, जलबिंदु। अदली—न्यायी, न्यायप्रिय।

२५०—दंत गहा तिन—तृण मुख में लेना, शरण जाना । महा सौं—भारी शपथ । जोट—समूह । राह—उपाय ।

२५२—बाह्यो—चलाया, मारा । कठैठो—तेज, कठोर । अठपाँव—दुष्टता । बीछू—बिछुआ, एक प्रकार का खंजर । धुक्योई—गिरा ही था । धराधर—राजा, शिवाजी ।

२५४—अजानन—अजान का बहुवचन, मूर्ख, (अर्ज+आनन) बकरा के समान डाढ़ी-युत मुख । फेन—झाग । भै—डर । भै भरकी···सेना—आदिलशाही फौज डर से भड़क गई, दुःखी हुई, दहल गई तथा उनका मन टूट गया ।

२५६—होत है आदर जामैं—जिनसे प्रतिष्ठा होती है । दान-कृपान—युद्धदान, युद्ध में किसी की ललकार न सहना । बर—बल, शक्ति ।

२५७—अमोर—अमाल ।

२५८—ह्यॉं—यहाँ, दक्षिण में । उहाँ—उत्तर में, वहाँ । मठ—मंदिर आदि । बिसात—चलती । बालम—स्वामी, पति । आलम—संसार में । आलमगीर—संसार विजय करने वाला, औरंगजेब की उपाधि ।

२५९—गरबीले—घमंडी । अरबीले—उद्दंड । कंगूरन—बुर्जों । गोलदाज गाली गोला चलाने वाले । अमान—अधिक, बहुत । करषते—(सं० कर्ष) लागडाँट करना, बढ़ावा देना, उत्तेजित होना । अराति—शत्रु । अमरस—अमर्ष, क्रोध ।

१६२—सयन—सोते समय । साहन—दक्षिण के सुलतानगण ।

२६३—साइत—अच्छा मुहूर्त । सर करना—परास्त करना, दमन करना । डावरे—लड़के । गज-छावरे—हाथी के बच्चे । गाढ़े—दुर्भेद्य । रावरे—आपके ।

२६५—चतुरंग—सेना के चारों अंग रथ, हाथी, घोड़ा, पैदल। पारथ—पार्थ, अर्जुन। अज्ञातवास के समय राजा विराट की गाय हरण करने वाले कौरवों को अकेले अर्जुन ने परास्त किया था। हथ्याय—हथिया कर, छीन कर।

२६६—करनी—कार्य, कर्म। फाकी भई—दब गई। नैसुक—थोड़ा।

२६८—घनसारऊ-कपूर भी। घरीक—एक घड़ी, थोड़े समय तक। सारद—शारदा, सरस्वती। सी—ऐसी। पुंडरीक—सफेद कमल। छक्यो—छक गया, हार माना। कैलास-ईस—महादेव जी, पहाड़ के राजा। रजनीस—चंद्र, रात्रि अर्थात् अंधकार के राजा। अवनीस—राजा। सरीक—(फा०) शरीर, समान, बराबर।

२७०—लोमस—एक ऋषि जिन्होंने बड़ी आयुष्य पाया था। करनवारो—कर्ण वाला, सूर्य का दिया हुआ अभेद्य कवच। इलाज—(अ०) उपाय। बे—(फा०, बिना।

२७२—शिवा जी के पैर रण में उसी तरह नहीं जमते हैं, जिस तरह रावण की सभा में अंगद के नहीं जमे थे, अर्थात् दोनों ही के पैर समान रूप चल हैं और शिवाजी की प्रतिज्ञा भी ध्रुव नक्षत्र, पृथ्वी तथा मेरु पर्वत के समान चल हैं। भाव यह कि शिवाजी रण में दृढ़ और वचन के पक्के हैं।

२७३—छोटापन—छुटाई, लघुता। जाहिको—जिसका। सीरो—ठंढा। कित्ति—कीर्ति। कुलिश—वज्र। भुव—पृथ्वी। काव्य-परंपरा में पृथ्वी अचल है। उलटी उपमा देते हुए भी भाव यही है कि शिवाजी मेरु से महान, समुद्र से ऊँचे हृदय वाले, कुबेर से धनी आदि हैं।

२७४—मतिपोस—पुष्ट बुद्धि वाले।

२७५—ऊटै—विचार रखता है। जूटै—तैयार रहता है। टूटै—चढ़ाई करता है। अलोक—आलोक चाँदनी। कोक—चकवा।

२७६—दहपट्ट—चौपट, नष्ट। गढ़ोई—गढ़पति, दुर्गाध्यक्ष। तोरा-दारा—जो तुर्रः नामक पगड़ी के एक आभूषण को पहिर सकते हैं अर्थात् भारी या बंदूकधारी। डांडे—दंड लिया। जंग दै—युद्ध करके। मिजाज के—अभिमानी। डाबरे—बच्चा।

२७९—बिरद—यश, बड़ाई। अभंग—अभेद्य, दृढ़। बेइलाज—बेचारे, बेबस। गैर—शत्रुता। नैर—नगर। नहक—व्यर्थ।

२८१—चहा—इच्छित वांछित। हा—दुःख। दुनी—संसार।

२८२—रौस—रविश, चाल।

२८३—जाहिर-जहान—संसार-प्रसिद्ध। जलूस—दृश्य। जर-बाफ—जरबफ्त, एक कीमती कपड़ा।

२८५—ऐंड—हठ। पैंड़—रास्ता।

२८८—पंपा—किष्किंधा का एक भारी तालाब। अगन—अगणित, बहुत। परन—परकोटे। चक चाहि कै—आश्चर्य से देख कर। कलिकानि—कष्ट, दुःख। इंदु—चन्द्रमा। उदथ—(सं० उदर्थि) सूर्य। उतग—ऊँचा। चकहा—पहिए।

२९०—आनन—मुख। मानी—सम्मानित हुई। सोहानो—शोभित हुई।

२९१—छहरावत—फेंकते हैं, डालते हैं। छार—धूलि। भूधरऊ—पृथ्वी भी। बलरूरे—बलवान। पूरे—भर दिया।

२९२—जूझ—युद्ध। घाले—नष्ट किया। अरुनै—लाल।

२९३—सैली—शैली, चाल। बारिधि की गति पैली—अपनी मर्यादा छोड़ कर।

२६५—जे...महीके—पृथ्वी को म्लेच्छ असुर से रहित करने वाले। भूधर उद्धरिबो—पर्वत उठाना, गोवर्धन-धारण, दुर्ग बनाकर पहाड़ों का सुरक्षित करना।

२६६—मानस—मन। कुरुख—क्रोध। उछाह—उत्साह, हर्ष। दिपत—दीप्तिमान, सुप्रसिद्ध। परताप, आतंक। फेटो रहो—लगा रहे, चिपका रहे। बरतन ....अथाह ते—वीरों के पानी अर्थात् मान के लिए थाह-रहित पात्र है अर्थात् बड़े बड़े वीरों की ऐंठ मिटा दी, पर अभी भी तृप्त नहीं हुई। रातो—रात्रि, लाल।

२९७—नौल—नवल, नई। धौल—सफेद।

२९९—गनीम—(अ० ग़नीम) शत्रु। दौर-दौड़, इच्छा। यवनी—मुसलमान स्त्रियाँ। परोई—सर्वदा पड़ा ही रहता है। कलित—शोभायमान।

३०१—गज-इंद्र—गजेंद्र, ऐरावत। इंद्र के अनुज—उपेंद्र, विष्णु भगवान। दुगधनदीस—(दुग्धनदीश) क्षीरसागर। सुर-सरिता—देव-नदी, गंगा। निज गिरि—अपने कैलाश पर्वत को, जो हिम के कारण श्वेत है। भाव यह कि शिवाजी के सुयश के, जो श्वेत माना जाता है, छा जाने से उसमें अन्य श्वेत वस्तुएँ ऐसी मिल गईं कि ढूँढ़ने पर नहीं मिलतीं।

३०३—तूल—तुल्य, समान। बास—सुगंध।

३०५—गमके ते—उत्साहित होने से। झमके ते—टूट पड़ने से। धमके ते—गिरने से। अवसान—होश-हवास। धोप—सीधी तलवार।

३०७—पखरैत—लोहे की पाखर अर्थात् जाली ओढ़े हुए घोड़े-हाथी। बखरवारे—कवचधारी। एते मान—ऐसा। सम

वेस—एक प्रकार के वस्त्र धारण किए हुए। हाँके देत—ललकारते हुए। जाने चलते—भागने से जाने गए।

३०९—अंतरजामी—मन की बात जानने वाला अर्थात् औरंगजेब के मन में अपनी ओर से शत्रुता रहना समझ कर।

३१०—औरंगजेब की आँखों से हर्ष प्रकट हो रहा था कि शत्रु आपसे आकर मिला है। शिवाजी ने मूँछों पर ताव देकर जतलाया कि हम तुम से अभी दबकर नहीं हैं।

३१२—सिख देहौ—सम्मति दोगे। सलाह—राय। करोऽब—करो अब।

३१४—जेय—विजेता, जीतने वाला। सिसौदिया—यहाँ शिवाजी से तात्पर्य है। ठए हैं—किया है।

३१६—बदन—मुख। साहि—बादशाही, राज्यभार, क्योंकि औरङ्गजेब औलिया बनने का ढोंग रचता था।

३२०—कप्पर—कपड़ा। मुहीम (फा०—मुहिम) कठिन काम, चढ़ाई। छाग—बकरी। झप्पट—झपेट, धक्का। साहब—बड़ा आदमी। भुवप्पर—पृथ्वी पर। यहाँ राठौर मीर महाराज यशवन्त सिंह से तात्पर्य है, जिनसे औरंगजेब भी डरता था और शिवाजी भी जिससे मिलने गए थे। ये सातहजारी मंसबदार थे तथा शायस्ताखाँ के साथ थे। सुबहु—सूबा, सूबेदार। कलींद—तरबूज।

३२२—तचि रहे हौ—दुःखित हो रहे हो। उकचिहौ—उठ भागोगे। रचि—बनाकर। त्रिपुरारि—महादेव जी।

३२३—भेजै उत औरै—जब तक दूसरे को भेजे। महाकाज—भारी काम।

३२४—कार आए—कर आने पर। हजरत—औरंगजेब। ऐहैं—आवेंगे।

३२६—मेरु—मेरु पर्वत सुवर्ण का बना कहा जाता है। कथान—कथा, आख्यान। बलकत—उत्साह उमड़ता है, उत्तेजित होता है। छलकना—भर कर उमड़ना।

३२७—वहना—देखना। जहत हैं—भरते हैं, खींचते हैं।

३२८—रूरे मन के—दृढ़ चित्त के। कुंडन—लोहे की टोपी, शिरस्त्राण। जीरन—ज़िरह, कवच।

३२९—तरुन—वृक्षगण। तरायल—टूट कर। अमोद—आमोद, खेल। प्रकसै—भर उठा है। अड़दार—मस्त। गड़दार—हाथियों के साथ के भाले वाले। गैर—गैल, मार्ग। तुंडनाय—नरसिंहा।

३३०—भयो—भूतकाल। होनहार—भविष्य। परतच्छ—वर्तमान।

३३१—कराह—आर्तस्वर, कष्ट से आह करना। रुहेला—रुह को रहने वाली एक अफ़गान जाति।

३३२—घटा—समूह। बेला—(सं० वेला) किनारा। उछलत—उमड़ता है। तरनि—सूर्य।

३३४—जमाति—समूह। तेरियै फौज दरेरी—तुम्हारी ही सेना द्वारा घेरी हुई। सूरति—स्वरूप, सूरत शहर।

३३६—दीसैं—दिखलाई पड़ते हैं। हीसैं—हिनहिनाते हैं। बारन—बार बार। जसरत—यश गाने में मग्न हैं। सम्याने—शामियाने। लाल—माणिक। नीलमणि—नीलम।

३३७—खता—धोखा। डार्यौ बिन मानकै—बेइज्जत कर डाला। विराटपुर—राजा विराट की राजधानी जहाँ पांडवगण ने अज्ञातवास किया था। कीचक—राजा विराट का साला जिसने द्रौपदी पर कुदृष्टि डाली थी।

३४०—जकरे—जकड़े हुए। बेआब—बेपानी, तेजहीन। गड़काब—(फा० ग़र्क+आब) डूब जाना।

३४१—जगदेव—पँवार जाति का एक प्रसिद्ध वीर। जनक—सीता जी के पिता। जजाति—राजा ययाति जिन्होंने अपने पुत्र पुरु का यौवन उधार लिया था। अंबरीष—एक वैष्णव राजा जिन्हें दुर्वासा ऋषि कष्ट देना चाहते थे, पर विष्णु भगवान ने रक्षा की थी। खरिक—खरका, तृण। किंजल्क—फूलों के बीच का अंश। उडुवृंद--तारागण। मकरन्द—शहद। कन्द—जड़। नाक-गंग—स्वर्ग की गंगा। चंचरीक—भौंरा। भाव यह है कि सब दानियों से बढ़कर शिवाजी हैं और उनके दानरूपी समुद्र से यशरूपी कमल उत्पन्न हुआ है।

३४४—दारिद-द्विरद—दरिद्रतारूपी हाथी। अमान—बहुत।

३४५—मदन—कामदेव। हरयो...को—कामदेव से सुन्दर।

३४६—सरनागत—शरण आए हुए। अभैदान—निडरता देना, निर्भय करना। गम्भीर—गहरा। दरियाव—बड़ी नदी, समुद्र। बहिरात—निकलता है अर्थात् सारे संसार के पानी का स्रोत तुम्हीं में है।

३४८—दारुन—दारुण, भयङ्कर। दइत—असुर। बिकरार—डरावना। विधंसिबे—नष्ट करने। पुरहूत—इंद्र।

३५०—अनचैन—घबड़ाया हुआ, बेचैन। काहि ने—क्यों नहीं। संक—डर।

३५१—अंभा—(सं० अंजन) रात्रि, रात। संभा सी—अंधियारी। रोर—शोर। अंदेस—अंदेशा, डर। बड़वा—बवंडर या बड़वाग्नि। जितवार—जीतने वाला।

३५४—निरंसक—निश्शंक, निडर। डंक—डंका। बंकक्करि—बजाकर। संकक्करि—डराकर। सोचच्चकित—सोचत+चकित। भरोचच्चलिय—भड़ोच भागो। तट्ठट्ठइमन—तत्+ठइ+मन, मन में यही ठान कर। कट्ठट्ठिक—कष्ट से

ठोक कर । रट्ठट्ठिल्लिय—आगे ठेल कर । सद्दिसि दिसि—सब तरफ से । भद्दद्दवि—दबने से भद्द हुई । रद्दद्दिल्लिय—दिल्ली रद्द हुई ।

३५५—गतबल—शक्तिहीन । मुद्ध—व्यर्थ । कुद्धद्धरि—क्रोध करके । युद्धद्धरि—युद्ध में धर कर । अद्धद्धरि—आधा धड़ । मुंडड्डरि—मुण्ड के कट कर गिर जाने पर । रुण्ड—कबन्ध, धड़ । डुंड्डुडग भरि—डुंडत (सं० डम्) भागते हैं+डग भरि कूदते हुए । खेदि-भगाकर । दर बर—घर-दुआर । छेदिद्दय करि—छेद+द्दय+करि, छेद कर । भेदद्दधि—दही सा काट डाला । जंगग्गति..बल—युद्ध का हाल सुन कर औरंगजेब का रङ्ग बिगड़ गया और वह निर्बल हो गया ।

३५६—नृप+कुम्भ—राजाओं का शिर, श्रेष्ठ राजा । भूम्मिम्मधि—पृथ्वी में । धूमम्मडि—धूमधाम से । रिपु जुम्मम्मलिकरि—शत्रुओं के जमा अर्थात् समूह को मल कर । उतंग्गरब—ऊँचाई से गर्बीले । दक्खक्खलनि—दक्ष दुष्टों को । अलक्खक्खिति—अलक्ष्य हुई क्षिति को, पृथ्वी पटकर न दिखलाने लगी । मोलल्लहि—मोल लेकर । जस नोलल्लरि—नवल यश लड़ कर ।

३५७—दुंदद्दबि—युद्ध में दबने से । दंदद्दलनि—सेनाओं को दुख हुआ । बुलंदद्दहसति—भारी डर । लच्छ···छिति—लाखों म्लेच्छों को नष्ट कर पृथ्वी की शोभा बढ़ाई । हल्ल...जीति—हल्ला अर्थात् धावा कर, राजा से लड़ कर परनाला जीत लिया ।

३५८—नटत—नाचता है । घन—बहुत । रसत—आस्वादन करते हैं । बूत—बूता, शक्ति । सुर-दूत—यमदूत । डुंडि—(सं० डम्—चीत्कार करना) । शोर ।

३५९—रुद्ध—लड़ते हुए। बग्ग—बाग। दुक्कि—छिपे हुए। कुक्कि—कूक, शब्द। रङ्क रकत—खून के प्यासे। हर-सङ्ग—महादेव जी के गण, भूत-प्रेत।

३६०—बरार—बरियार, बलवान। वैहर—भयानक। बिग—(सं० वृक) भेड़िया। बगरे—फैले। जोम—समूह। लोम—पुच्छ, दुम। गोहन—छिपकली जाति का गोह जन्तु। गोम—भूमि। खेरन—छोटे गाँवों में। खबीस—भूत-प्रेत। खोम—(फा० क़ौम) जाति।

३६१—तुरमती—एक शिकारी चिड़िया। सिलहखानः—शस्त्रागार। कूकर—कुत्ता। करोस—गोशाला। हरमखाने—जनाना महल। स्याही—एक जानवर जिसके शरीर पर लम्बे लम्बे काँटे होते हैं। सुतुरखाना—ऊँटघर। पाढ़े—एक प्रकार का हरिण। पीलशाला—हाथीशाला। करंजखाना—वह गृह जहाँ आतिशबाजी बनती है। खेरा—छोटा गाँव। खीस—नष्ट। खड़गी—(सं० खड्गी) गैंडा। खिलवतखाना—एकांत स्थान। खसखाना—ठंढा घर, जहाँ खस की टट्टियाँ लगी रहती हैं।

३६४—पूनावारी गति—पूना में शायस्ताखाँ की जो दुर्दशा हुई उसका हाल। समीरन की गति—हवा की सी चाल। जसवंत—महाराज यशवंतसिंह, यशस्वी। रजपूत—राजपूत, (रज+पूत) पवित्र राज्यश्री। सिव—महादेव जी। बरकति—वृद्धि, बढ़ती। नवखंड—भरतखंड, इलावर्त, किंपुरुष, केतुमाल, कुरु, हिरण्य, हरि, राम्य, भद्रा। दीप—टापू, दीपक। आजु समै के—इस काल के। सिदति है—कष्ट देता है।

३६६—सैन—(शयन) सोना, सेना। संग रमैं—साथ पड़े हैं। समुहाने—सामना करने पर। सूर—वीर, सूर्य।

कलानिधि—चंद्रमा । जगत—(सं० गम्) फैलता है, संसार ।

३६८—ध्रुव—ध्रुव नक्षत्र । गिरजा-पिव—महादेव जी । तरु—कल्पवृक्ष । सिरजा—पैदा किया, उत्पन्न किया । छिव—(सं० क्षा) पृथिवी । भुव भरता—संसार को पालन करता । बर—दान देने का वचन, इच्छानुसार याचना । निव—(सं० नि=सर्वदा+वह=पाना) अवश्य, ध्रुव, सत्य ।

३७०—बाज—शिकारी चिड़िया । आमल—संसार के लोग । जिन—जिन घोड़ों पर । तीर एक मारे—जितनी दूर चलाने पर एक तीर जाता है ।

३७१-९—इन नौ गीतिकाओं में १०५ अलंकारों के नाम हैं ।

३८०—सुचि—(सं० शुचि) ज्येष्ठ तथा आषाढ़ मास दोनों को कहते हैं ।

३८१—एक प्रभुता को धाम—विष्णु भगवान । सजे काम—ब्रह्मा जी । पंच-आनन—महादेव जी । षड़ानन—स्वामि-कार्तिक । बार—दिन । याम—पहर । नव अवतार—नया अवतार अर्थात् शिवाजी । थिर राजै—सदा शोभायमान रहैं । कृपन हरि-गदा—भगवान की गदा की कृपा से । त्रिदस—अमर, देवता । दासरथि-राज—राम-राज्य ।

शिवाबावनी

१—राज-लाज—राज्यत्व की मर्यादा । मकरंद—माल मकरंद के वंशज ।

२—रंग—उत्साह उल्लास । बिहद—बेहद, असीम । गैब रन—हाथियों । ऐल—बाढ़, वहिया । खैलभैल—गड़बड़, अशांति ।

खलक—संसार । गैल—गली । उसलत—उखड़ जाता है । तरनि—सूर्य । थारा—थाली । पारावार—समुद्र ।

३—आने—झंडे । नग—पहाड़ । ग्राम नगर—तात्पर्य वहाँ के रहने वालों से है । उकसाने—स्थान से आगे हट आए । अलि—भौंरा । दरारे—रगड़, चाँप । करारा—कड़ा, कठोर ।

४—अरु—और । भूधर—पहाड़ । जुत्थ—झुण्ड । जमाति—समूह । दिगंबर—महादेव जी । शिवा—पार्वती जी ।

५—हकारी—अहंकारी, दर्पमान । दामिनी—बिजली । दमक—चमक । तीजा असवारी—मुसलमानों में किसी की मृत्यु के तीसरे दिन का कृत्य तीजा कहलाता है और उसमें लोग साथ निकलते हैं तथा गरीबों को रोटियाँ बाँटते हैं । बीर सिर ···· असवारी के—शिवाजी के सैनिकों के सिर पर छाप लगी हुई है कि मुसलमानों को तीजा सवारी निकालनी पड़ेगी । हरम—बेगम । बयारी—हवा । मति-भूली—पगली ।

६—दिलगीर—दुखी । तनिया—चोली । तिलक—लम्बा कुर्ता । सुथनिया—पायजामा । पगनिया—जूता । पति बाँह बहियाँ न—जिन्होंने पति का हाथ कभी न छोड़ा था । छहियाँ रुखन की—वृक्षों की छाया । बालियाँ—बाल । आलियाँ—भ्रमर । नलिन—कमल ।

७—कत्ता—'नीमचा तु कृपाणः स्यात् कत्ती तु करवालिका' (राजव्यवहारकोश) एक प्रकार की छोटी तलवार । अकह—अकथ, अवर्णनीय । बिलायती—मुग़ल साम्राज्य के समय अरब, फारस आदि बिलायत कहलाते थे । बिललाना—घबड़ाना । अगारन—घरों । कगारन—दीवालों का ऊपरी

भाग। कीबी— करने योग्य। गरीबी - दीनता। नीबी—कमर के पास की धोती की गाँठ।

८—मंदर—मंदिर, घर, मंदर पहाड़। अंदर—भीतर। कंदमूल—मिश्री मिला हुआ फल, मुरब्बा, गाजर आदि जड़। बेर—वार, मर्तबा, एक फल। भूषन—आभूषण, गहना। भूखन—भूख से। बिजन— पंखा, निर्जन। नगन—नगों को, नग्न, नंगी। जड़ातीं—रत्न बैठवाती थीं, जाड़ा खाती थीं।

९—सगबग—सकपकाती हुई। घाती—आत्महत्या।

१०—उघारे पाँव—नंगे पैर। सम्हारती न हैं—घबड़ाहट के मारे यह भी ध्यान नहीं रहता कि उनके शरीर के कपड़े खुल गए हैं। हयादारी—लज्जा। नरम परी—दीन हो जाना, तपाक का ठंढा होना। बनासपाती—पत्ती, वनस्पति।

११—चोवा—सुगन्धि। घनसार—कपूर। सुरति—याद। दारा—स्त्री

१२—सोंधा—सुगंधि, वह द्रव्य जिसे मलकर स्त्रियाँ बाल सुगंधित करती हैं। चारि······लंक—चार संख्या के मध्य भाग सा कथग। पिछौरा—चादर, उसका पिछला हिस्सा जिसकी झालर में मोतियाँ टँकी रहती हैं।

१३—साहि सिरताज---बादशाहों का शिरोमणि। अचल—दृढ़। अथह—थाहरहित, गहरा। उमराव—(फा० उमरा) सरदारगण। बाँदी—दासी। डोंगा---लंबी नाव। दरियाव—नदी।

१४—कैकय—कई। गुर्जबर्दार—(फा०) गदा की चाल का एक अस्त्र धारण करने वाले। हुस्यार—होशियार, सतर्क। नीति पकरि—कायदे से। नीरे—पास। फड़—क़तार।

१५—जारिन—हजारों सरदारगण। नियरे—पास। गैर मिसिल—नियम-विरुद्ध। सियरे—ठंढे। बलकन लाग्यो—क्रोध उमड़ने लगा, क्रोधित होने लगा। जियरे—कलेजा, जीवट। तमक—क्रोध।

१६—कुंद—छोटा फूल। षट्पद—भौंरा। भ्रमर सभी पुष्पों का रस लेता है, पर कटहरी चंपा के पास नहीं जाता, क्योंकि उसका गंध बड़ी तीव्र होती है। इसके आगे के कवित्त में अलग अलग एक एक राजा को एक एक पुष्प बनाया है। इससे यह ऐतिहासिक ध्वनि भी निकलती है कि औरंगजेब राजपूताने आदि में स्वयं लड़ने गया, पर शिवाजी से युद्ध करने को उनके जीवित काल में स्वयं कभी दक्षिण नहीं गया।

१७—कूरम—कूर्मवंशीय जयपुर नरेश। कमधुज—जोधपुर-नरेश। गौर—गौड़ क्षत्रिय। पँवार—प्रमार क्षत्रिय। पाँडरि—एक फूल। चंद्रावत—चूँड़ा जी के वंशधर चूँड़ावत राजपूत। बड़गूजर—क्षत्रियों की एक जाति।

१८—देवल—मंदिर। निसान—झंडा। अली—मुसलमानी मत-प्रवर्तक मुहम्मद पैग़ंबर के दामाद। लबकी—लपक, भाग। पीर—मुसलमान साधु। पयगंबर—ख़ुदा का संदेश लाने वाला। दिगंबर—नंगा, एक प्रकार का फकीर, जैसे सरमद नाम का एक फ़क़ीर था जो इसी प्रकार नंगा रहता था और जिसे औरंगजेब ने मरवा डाला था। रब—खुदा। मसीद—मसजिद। सुनति—सुन्नत, ख़तना, मुसलमानी धर्म का बपतिस्मा।

१९—हुती—थी। साखि—साक्षी, गवाही। तब्बर—(पं०—टब्बर) पुत्र। दो में ढब की—कुरान तथा वेद की प्रथाओं को एक नहीं किया। अर्थात् अत्याचार कर मुसलमान नहीं बनाया।

२०—तबकी पहले की, अपने अपने धर्म । भव – महादेव जी । कलमा—यह इसलाम धर्म का मुख्य मंत्र, 'लाय लाय लिल्लाह मुहम्मद रसूलिल्लाह' है । अर्थ हुआ कि ईश्वर एक है और मुहम्मद उसका दूत है । निवाज – (फा० नमाज) ईश्वर की प्रार्थना ।

२१—दावा—बराबरी करना । जोर – दमन, हराना । हद्द – सीमा । दरबारे—मुग़ल दरबार, साम्राज्य । मवास—घर । बनजारा—देश देश घूम कर व्यापार करने वाला । आमिष अहारी—कच्चा मांस खाने वाला, पिशाच । खाँड़ा—चौड़ी तलवार । किरचैं—सीधी लम्बी पतली तलवार । मतवार – मस्त, घमंडी ।

२२—कमान—तोप । जोट—समूह । किम्मति—कौशल, चतुराई । झोट—युद्ध । ताव देना—मरोड़ कर मूँछों को ऊपर उठाना ।

२३—ठट्ट—झुंड कतार । सिंहराज—वीर सैनिक से अर्थ है । बिदारे—फाड़ डाला । कुम्भ—गडस्थल, खोपड़ा । चिक्करत—चिंघाड़ते हैं । मीर—सैयदों की पदवी । हद्द—मर्यादा, प्रतिष्ठा । बिहद्द—बेहद, असीम । गुमान—घमंड । झारि डारे हैं—घमंड उतार दिया है तोड़ डाला है ।

२४—असुरन—मुसलमान । सीना—छाती । धरकत—काँपता है, धड़कता है । खरग] दाँत—तलवार का टुकड़ा । खरकत हैं—कसकता है, टीसता है । कंटक कटक – शत्रु की या काँटे सी सेना को । मोरे – छिपाये हुए । सरकत है—खिसक जाते हैं, भागते हैं । फरलेटे—ढर हुए से । पठनेटे – पठान के बच्चे । फरकत हैं – तड़प रहे हैं ।

२५—चंगुल चाँपि के चाख्यों – पूरा अधिकार कर लिया । रूप गुमान—घमंड । सूरत—एक नगर । नाख्यो—फेंक

दिया । पंजन—बघनहा, जिसे हाथ की उँगलियों में लगा कर चोट किया जाता है । सोरँग है—उसकी ऐसी धाक है ।

२६—सूबा—सूबेदार । निरानन्द—आनन्द-रहित, दुखी । ब्योंत—उपाय । सिगरे—सब । हुतो—था । साइत खान—शायस्तः खाँ । थान—पड़ाव, कंप । गीदड़बना—कादरोचित कार्य ।

२७—जोरि—वेग से । जुमला—इस नाम का कोई देश नहीं ज्ञात हुआ, पर फारसी में इस शब्द के माने सब के होते हैं अर्थात् सभी देश के । तरि—पार कर । कूरताई—मूढ़ता । मनसब—पद, ओहदा । सजरत—हुजूर, मान्यवर ।

२८—जपत—(अ० ज़ब्त) छीन लेना । तुरकान दलथंभ—म्लेच्छ सेना के स्तम्भ, सेनापति । तबल—(अ०) डंका । बेदिल—घबड़ाई हुई, निराश । सोवो सुख—सुख की निद्रा सेना, आराम से सेना । रिसालैं—सेनाएँ । करनाल—तोप ।

२९—चमू—सेना । सोवत-जगावो—आपसे छेड़खानी करना । जंग जुरो—युद्ध करो । बैरिबधू—शत्रु की स्त्री । सलाह—संधि, मेल । दिवाल की राह—बेराह, कुराह, दिवाल में से जाने का प्रयत्न कर सिर फोड़ना ।

३०—सधहिं—चढ़ाते हैं लगाते हैं । मल्लारि—मलाबार की । धम्मि-ल्ल—बाल । गब्भ—गभ । कोटै गरब्भ—कोट का गर्भ, दुर्ग में । चिंजी चिंजाउर—स्थानों का नाम । चाल कुंड—चौल बंदर । मधुराधरेश—दक्षिण के मधुरा स्थान का राजा । धकधकत—घबड़ाया है । निविड़—अधिक ।

३१—मयदान मारा—युद्धभूमि में मार डाला । फरासीस—फ्रान्स देशीय । फिरंगी—अन्य युरोपीय मनुष्य । खाक किया—धूल में मिला दिया । सालति—कष्ट देती है । चहुँघा—चारों ओर ।

३२—फिरँगाने—फिरंगियों का देश । हदसनि—डर । हबसाने—अफ्रीका का एबीसीनिया प्रान्त, हबश देश । बिडरि—छितिर बितिर होकर । दरगाह—दरबार, फ़कीरों का मठ । खरभरी—घबड़ाहट । परी पुकार—घबड़ाने लगे ।

३३—दावा—हक, स्वत्व । नाग—साँप, हाथी । जूह—झुंड । पुरहुत—इंद्र । बाज—शिकारी चिड़िया । तम—अंधेरा ।

३४—दौर—पीछा करना । रारि—लड़ाई । देहरा—चौरा । कतलान—मार-काट । हासिल साल को—वार्षिक कर जैसे चौथ, सरदेशमुखी आदि ।

३५—गंजाय—ढेर कर, गिरा कर । गढ़धरन—दुर्ग के रक्षक । धरम दुवार दै—शरण में आने के कारण । गढ़धारी—दुर्गाध्यक्ष । हजारी—साहस्रिक मंसब वाला । रैयत—प्रजा । बजारी—साधारण । महता—गाँव का चौधरी ।

३६—सक्र—इन्द्र । शैल—पर्वत । अर्क—सूर्य । तम फैल—अंधकार के विस्तार । रैल—ढेर, समूह । लंबोदर—गणेश जी । कुंभज—अगस्त्य ऋषि । हर—महादेव जी । अनंग कामदेव । पारथ—अर्जुन ।

३७—कुम्भभव—अगस्त्य । घन—गुंजान । तरुन—घना, घोर । कंटकाल—काँटों का घर । कैटभ—मधुकैटभ राक्षस, जिसे काली जी ने मारा था । ज़ालिम—अत्याचारी, असुर । पन्नग—साँप । कार्तबीज—कार्तवीर्य, सहस्रार्जुन ।

३८—दरबर—वेग से । दुर्जन दरब की—दुर्जनों के दर्प की । जाहिर—प्रसिद्ध । जहान—संसार । जंग जालिम—युद्ध में भयङ्कर । जोरावह—शक्तिमान, बलवान । रब—राव । दहलि जात—बिगड़ जाती है, डर जाते हैं । करब की—(अ० अक़रब) बिच्छू की, बिछुआ मुहम्मद साहब के चाचा अमीर हम्ज़ः नाम के एक

मुसलमान वीर की तलवार का यह नाम था। पाठां० गरब की है अर्थात् घमंड की।

३६—खुमान—बादशाह। महिदेव—ब्राह्मण। अरजा—अर्ज किया, कहा। रन छोरो—रणभूमि त्याग देते हो, भागते हो। रावरे—आप के। करि परजा—अपनी प्रजा बना कर। तिहारो—तुम्हारी शक्ति। निबेरो—निर्णय, तै पाना॥ कायर सों कायर—डरपोंक से डरपोंक ही होते हैं।

४०—बाहियत है—चलाता है। बौरी—घबड़ाई हुई। दौरनि—चढ़ाई, आक्रमण। निबाहियतु है—पार पाते हैं। बैरवारे—शत्रु के। नैनवारे.......चाहियतु हैं—आँखों से जो आँसू की नदी उमड़ती आ रही है उसे रोकना चाहते हैं अर्थात् रोते हैं।

४१—दहसति—डरती है। चाह—इच्छा, उत्सुकता। बिलखि—रोकर। नारी—नाड़ी। हहरि—डर कर। भीर—सेना। धाक—शब्द। दरकति है—फटती है।

४२—नव कोटि—मारवाड़। धुंधजोत है—तेज मलीन हो गया है। रोत—रोते। हे—थे।

४३—दुग्ग—दुर्ग, गढ़। ग़ाज़ी—अन्य धर्म वाले को मारने वाला। जीति—विजय। करनाटी—कर्णाटक के। सिंहल—सीलोन, लंका। पनारे वारे—परनाले वाले। उद्भट—प्रचंड, भारी। तारे फिरने लगे—सौभाग्य के ग्रह आने लगे। सितार गढ़धर—शिवाजी। दाड़िम—अनार। दरके फट गए।

४४—ऐन—(अ०) ठीक। परावने—भगदड़, भागना। रुहिलन—रुह के रहने वाले पठान जो रुहेलखंड में अधिक बस गए थे, रुहेले। बाजे बाजे—किसी किसी, कभी कभी। उघरत हैं—खुलते हैं।

४५—खाकसाही—(फा० खाक—स्याह) धूल में मिला देना। खिस गई—नष्ट होगई । फिस गई—भूल गई। हिस गई—मिट गई। दमामा—बड़ा नगाड़ा । धौंसा—डंका । भारे—भारी आदमी ।

४६—डाढ़ी—जली हुई। रैयति—प्रजा, यहाँ हिन्दुओं से तात्पर्य है। बिनु चोटी के सीस—मुसलमानों के सिर।

४७—फुतकार—फुफकार । बिदलिगो—मसल गया । झारन—तीव्र गंध । चिकारि—चिंघाड़ मार कर । कोवल—कछुआ। खग्ग—तलवार। भुजंग—सर्प। अखिल—सब।

४८—अस्मृति -स्मृति, धर्म-शास्त्र । समसेर—(फा० शम्शेर) तलवार। दिवाल—सीमा, मर्यादा। दुनी—संसार।

४९—बाही—उठाई, चलाई । पारावार—आर-पार । नाँदिया—नंदी बैल। कपाली—महादेव जी।

५०—सो—वह । वेस—(फा० बेश) अधिक । बहलोलिया—बहलोल खाँ की ओर वाले । कौल—प्रतिज्ञा । रसना—जिह्वा। भोलिया—भोला; सीधा। औलिया—फ़क़ीर।

५१—मीड़ि—मल डाला। देवल—मंदिर। तेग़—तलवार।

५२—सपत—सप्त, सात । नगेश—पहाड़ । ककुभ+गजेश—दिशाओं के हाथी । कोल—शूकर । दिनेस—सूर्य। घाले—नष्ट किया । जग काजवरे—रोज़गारी, नित्य कमाकर खाने वाले। निहचिंत—चिंता-रहित।

छत्रसाल-दशक

१—हाड़ा—राजपूतों की एक शाखा। बूंदी-धनी—बूंदी के राजा। मरद—वीर पुरुष। सालत—कष्ट देता है। छतसाल—क्षत अर्थात् घाव जो कष्टकर है।

२—वै—बूंदी-नरेश। दिल्ली की ढाल—दिल्ली के रक्षक।

३—भुज-भुजगेस—बाहु रूपी सर्प। वै—बरछी। खेदि—दौड़ा कर। दलन—सेनाएँ। बख़तर—कवच। पाखरिन—हाथियों का लोहे का कवच। मीन—मछली। परवाह—धारा। रैया—पुत्र। पर छीने—जिनके पर कट गए हैं। पर—शत्रु। छीने—क्षीण हो कर, चोट खाने पर। बर—बल, शक्ति।

४—जोम—उत्साह से। जमकैं—चमक रही हैं। सेला—बरछा। दामिनी—बिजली। आन—दोहाई। घन—बड़ा हथौड़ा। बैहर—भयानक, डरावना। बगारन—घाटियाँ। अगारन—घरों। पगारन—चहार दीवारी।

५—अस्त्र—हथियार। खीझौ—क्रुद्ध हुआ। गबड़ी—कबड्डी का खेल। चपटें—चोट-चपेट। हुलसीं—प्रसन्न हुई। ईस की जमाति—भूत प्रेतगण। समद—समुद्र, अब्दुस्समद ख़ाँ। बाड़व—बड़वानल।

६—हैबर—हय+वर, अच्छा घोड़ा। हरट्ट—मोटा-ताजा। गैबर—गज+वर, भारी हाथी। रंजक—बारूद। तराप—तड़प, छूटने की आवाज।

७—चाकचक—सतर्क, सुरक्षित। चमू—सेना। अचाकचक—एकाएक, अचानक। चाक—चक्र। करेरी—सामना किया, बर्दाश्त किया। थप्पन—स्थापित करना, रक्षा करना। उथप्पन—उखाड़ डालना। दाम देवा—करद, धन देकर।

८—कीबे को समान—उपमा देने को। पंचम—बुँदेलों के पूर्व पुरुष का नाम पंचम था, इसीसे बुँदेले राजे प्रायः यह नाम पदवी रूप में धारण करते हैं। लौं—से, समान।

९—साँग—चौड़े फल का भाला। पेलि—भोंक कर। मिया—मुसलमान। उदंगल—प्रचंड। मत्ता—मत्त, मस्त। कत्ता—तलवार।

१०—दहबट्टि—नष्ट कर। मेंडे—सीमा पर। बरगी—(फा० बारगीर) घुड़सवार। बहरि—फैल कर। बिहाल—बेहाल, घबड़ाया हुआ। रेवा—नर्मदा नदी।

११—औड़ो गंभीर, भारी। मेड बेड़ी—हद्द बाँधा, रोका। चक्कवै—चक्रवर्ती। सौंहैं—सामने। भक—एकाएक। रुंड—कबंध। रुंडमुंड—लुंडमुंड, गिरे पड़े। भुसुंड—एक अस्त्र। तुंड—तलवार का अग्र भाग। कीन्हों जस-पाठ—प्रशंसा करने लगे। काठ लौं—निश्चल, निस्तब्ध।

१२—आफताप—(आफताब) सूर्य। तुरी—घोड़ा।

फुटकर

१—जुरे—सामना किया, युद्ध किया। रहँट—जल निकालने का एक यंत्र जिसमें लोहे की जंजीर में घड़े लगे रहते हैं। ये घड़े कुएँ में नीचे जाकर जल ले आते हैं और ऊपर आकर पानी गिरा देते हैं। घड़ी—घटी, छोटा घड़ा। पानिप—जल, प्रतिष्ठा।

२—बरदार—ढोने वाला। निखिल—सब। नकीब—प्रशंसा करते हुए आगे आगे चलने वाला भाट। जोम—ताव, उत्साह। पजारयो—जला दिया।

३—तरनि—सूर्य। बिड़ाल—बिल्ली। कैटभ—राक्षस विशेष। पन्नग—नाग।

४—किरवान—कृपाण, तलवार।

५—बिलंदे—बड़े आदमी। बारिधि बिहरनौ—समुद्र-यात्रा।

६—दरबारे—राज्य। दुवन—शत्रु। चौंसठ—चौंसठ योगिनी। पसुपाल—पशुपति महादेव जी।

७—खूँट—ओर।

८—ब्रामी—बिल । जास्ती—अधिक, बढ़कर । तरासती—(फा० तराशीदन=काटना) काटती है ।

९—पंजर—हड्डियाँ । अंबिका—काली जी । अचकिगे—खा गई । कचकिगे—कुचल उठे ।

११—सुरसाल—असुर, म्लेच्छ । गंजन—नाशकारक, नष्ट करने वाला । गनीम—(अ०) शत्रु । पार—एक ग्राम । स्रोन—लाल ।

१२—कत्ता—तलवार । चकत्ता—यहाँ सुल्तान से तात्पर्य है, म्लेच्छ-राज ।

१४—बंद कीने—अधिकार कर लिया । उपखान—कहानी । जेर—हार, पराजय ।

१५—दलमनी—दलमणि, सेनापति । विश्वधनी—विष्णु भगवान । बल्लम—भाला । अनी—नोक ।

१६—इसमें अकबर के यौवनावस्था के समय के नौ रोज की मीना बाजार पर आक्षेप किया गया है । यह बाजार दुर्ग ही में लगता था और राजाओं तथा मंसबदारों की बहू-बेटियाँ दूकानें खोल कर बैठती थीं । बादशाह की बेगमें खरीदने आती थीं । इन्हीं में कभी कभी बादशाह भी स्त्री-वेष धारण कर घूमते थे । दावादार—जिनकी दावा है, स्वत्वाधिकारी । घात कीनी—मार डाला । नदानी—मूर्खता । बंस छत्तिस—राजपूतों के छत्तीस वंश प्रसिद्ध हैं ।

१७—देह—(फा० देह-दम) दम, बारबार, शरीर । धराई पृथ्वी पर । गगन के गौन—मृत्यु-समय । नग—मणि, माणिक । नगन—नंगा ।

१८—हुन्नर—कौशल, गुण । महादरी—(महा+आदरणीय) प्रतिष्ठा योग्य । अमान—बहुत । कादरी—डरपोकपन ।

१९—बज्रधर—इंद्र ।

२०—सहज—साधारण। धाराधर—बादल। दिग्ग मैगल—दिशाओं के हाथी, दिग्पाल।

२१—अदल—(अ०) न्याय।

२२—बिसोध—विशुद्ध, पवित्र।

२३—मिनारे—खेल की सीमा, गोल। चहुगान—चौगान, पोलो। बटा—गेंद।

२४—धरापति—राजा। छतधारी—छत्रधारी। उजारी—प्रकाश किया। ताजिए—तुर्की ताजी, मुसलमान।

२६—ऐंड़—हठ, मान। काहिनै—किसको।

२७—जंगी—युद्धप्रिय। खलक—संसार।

२८—कारवानक—गौरैया पत्ती। कुलंग—कौआ। दुवन—शत्रु। बाजी—घोड़े। चंग—चंगुल।

२९—साहिबी—प्रभुत्व, धाक। तारे—ताला। आमिल—हाकिम।

३०—सार—तत्व, धैर्य। खादर—कछार। छार—भस्म, राख।

३२—बाजी बम्ब—बम बम महादेव पुकारने लगे। कलाँ—भारी। राजी—समूह, सेना। मंडी—भर गई। तेजताई—तेज, प्रताप। दंडी—दंड लिया था। औनि—भूमि। मंदीभूत—तेज धीमा हो गया। रंकीभूत—दरिद्र हो गए। करंकीभूत—कलंकी अर्थात् स्याह हो गए। सुलकी—क्षत्रियों का एक वंश, भूषण के एक आश्रयदाता 'हृदयराम सुत रुद्र' सोलंकी थे।

३३—अछक—छकी हुई, तृप्त। धक—इच्छा। नाँगी—नग्न, कुटिल। आसौ—मदिरा। सुकल—सफ़ेद। गजक—चाट, मदिरा-पान के बाद का नमकीन खाद्य।

३४—दारियतु है—डाँट कर दमन कर देते हैं। धाराधर—बादल। कहर—आफ़त, प्रलय सा कष्ट। तगा—तागा, डोरा।

३५—मेचक—स्याह, काला। बयारी बाजि—हवारूपी घोड़ा। कदन—तोड़ने। बलाका—बगुला, बक। धुरवान—हवा।

३६—उलदत—निकालते रहते हैं। भीम—भयंकर, भारी। कद—डील-डौल। श्राह के—वश के। गंड—मस्तक। बिलद—ऊँचे। झंपति—लटक रही है। मजेजदार—शानदार। कुंजर—हाथी।

३७—किबलः—बड़ा, पूज्य। मेह—दया. मुहब्बत। दारा आदि चारों सहोदर भाई थे, जिनकी माता अर्जुमंदबानू थी। यही मुमताजमहल कहलाती थी जिसकी कब्र पर आगरे का ताजमहल बना हुआ है। बादि—व्यर्थ।

३८—तसबीह—माला। बंदगी—ईश्वर-प्रार्थना। छत्र ....बय के—ऐसा छत्र छीन लिया मानो बूढ़ा बाप मर गया हो। पील पै तोराया—हाथी से मरवा डाला। छरछंदी—छल करने वाला।

३९—जसत—यश फैलाता है। लंक लौं—लंका तक। छारे—राख से, जलते हुए। तरारे—सिर घूमना।

४०—भगवंत के तनै—राजा भगवंतदास के पुत्र मानसिंह। जग जाने—संसार-प्रसिद्ध। कूरम—कछवाहा। माने—मानने अर्थात् प्रतिष्ठा करने।

४१—डंबर—बादल। उडमंडल—तारामंडल, आकाश।

४२—भासमान—प्रकाशमान, तेजयुक्त। भोगीराज—सर्प। भावता—प्रिय।

४३—बानीजू को बाहन—हंस। मेंडू—स्थान विशेष।

४४—कोकनद—कमल। अनंगज्योति सोकी सी—कामदेव अर्थात् रति-केलि के चिन्हों से सिक्त, तात्पर्य यह है कि रति के चिन्ह उसके शरीर पर पूरी तरह लक्षित हो रहे थे। सकल—सब शृङ्गार। कांति रवि रोकी सो—अरुण सूर्य

की लाल किरणें। सुबह ही के सूर्य लाल होते हैं और ज्यों ज्यों ऊपर उठते हैं, श्वेत होते जाते हैं। इसलिए कवि कहता है कि यह लाल बिंदु ऐसा ज्ञात होता है कि प्रातः-सूर्य रोक दिए गए हैं और स्थिर होकर लाल ही दिखला रहे हैं।

४५—जीवनद—(जीवन+द) जीवन और जल देने वाला।

४६—जम की दिशा—दक्षिण। द्विजेस—चंद्रमा।

४७—झौर—गौध गुच्छा। विषम—प्रेम ताप।

४८—मैन—कामदेव। निसाकर—चद्रमा, निसा अर्थात् सांत्वना करने वाला।

४९—काग—कौआ के उड़ने या न उड़ने से प्रिय के आगमन का शकुन प्राप्त करना।

५१—उरोज—स्तन। घाव—नखक्षत से तात्पर्य है। बारन—बाल, हाथी।

५२—हूजै—होइए। अनखाती—क्रुद्ध, अप्रसन्न। भिदी—छेदी, विद्ध।

५३—आ घरी—आज तक। सगरी—सब। चहूँथ—मराठों का चौथ कर। सूरत—शक्ल, स्वरूप, नगर विशेष।

५४—अलका—कुबेर की राजधानी।

५५—पक्खर—पखरैत, कवचधारी। मूल—नेह, नींव। आलमपनाह—संसार के रक्षक। आलम—लोक। फना—नष्ट।

५६—हरौल—(फा॰ हरावल) आगे की सेना, वैनगार्ड। धुर—ध्रुव, यहाँ गोलकुंडा के बादशाह से तात्पर्य है।

५७—चौकी—थाना। मोडें—मलती रहो। परेवा—पक्षी विशेष।

५८—नजर—दया-दृष्टि। मत्त—मतवाली। नालबंदी—कर, चौथ। सलाह—संधि। रामद्वार—धर्मार्थ। आमिल—शासक।

५९—कुलिश—वज्र।

६०—अमा—अमावास्या। अधमा—दुष्टा, नीच।

परिशिष्ट (ख)

पदों की अनुक्रमणिका

अ

पद-संख्या

१६

पद-संख्या

पद-संख्या

परिशिष्ट (ग)

व्याख्या-युक्त अलंकारों का अनुक्रम

*संख्याएँ शिवराजभूषण के पदों की संख्याएँ हैं।

याचना करने के पहिले ही कार्य हो जाता है और माँगते समय वह दरिद्र नहीं रह जाता। ११८—२०

अत्युक्ति Exaggeration—जहाँ कोई वर्णन बहुत बढ़ाकर किया जाय, अर्थात् अद्भुत और अतथ्य पूर्ण हो जाय। जैसे, हाथियों के मद में पहाड़ डूब जाते हैं १३९—४२

अधिक Exceeding—जहाँ आधेय का भारी आधार से भी बढ़कर होना कहा जाय। जैसे शिवाजी के हाथ में रहने वाला यश तीन लोक में भी नहीं समाता। २१९—२१

अनन्वय Comparison Absolute—जहाँ उपमेय ही उपमान हो अर्थात् एक ही वस्तु दोनों रूप में कही जाय। जैसे, हे शिवाजी आपके समान आप ही हैं। यहाँ शिवाजी ही उपमान और उपमेय दोनों हैं। ३९—४०

अनुगुण Enhancer—जहाँ साथ होने से गुण का आधिक्य ही दिखलाया जाय। जैसे, काजल-युक्त आँसू के मिलने से यमुना का सहज श्याम रंग और भी श्याम होता है। २९८—९

अनुज्ञा Acceptance—जहाँ दोष में भी अच्छा गुण देख कर उसकी चाह की जाय। जैसे, महाराज शिवराज का हमें भिखारी कीजिए। यहाँ याचक होना यद्यपि दोष है, पर उस याचना से बहुत अधिक धन मिलने के कारण भूषण जी इस दोष की भी वांछा कर रहे हैं। २८२—३

अनुमान Inference—जहाँ कार्य देख कर कारण का या कारण से कार्य का अटकल लगाया जाय। जैसे, पति की घबड़ाहट देख कर उसके दक्षिण के सूबेदार नियुक्त होने का अनुमान करना। ३४९—५१

अन्योन्य Reciprocal—जहाँ दो वस्तुओं के गुण का एक दूसरे के द्वारा उत्पन्न होना दिखलाया जाय। जैसे, दान से हाथ की शोभा और हाथ से दान की शोभा है। २२२–३

अपह्नुति Concealment—जहाँ उपमेय का निषेध करके उपमान का स्थापन किया जाय। इसके शुद्ध, हेतु, पर्यस्त, भ्रान्त, कैतव और छेक छः भेद हैं। ८०—६७

अप्रस्तुत प्रशंसा Indirect Description—जहाँ अप्रस्तुत वस्तु का वर्णन करते हुए प्रस्तुत का बोध कराया जाय। इसके पाँच भेद सारूप्य-निबंधना, सामान्य-निबंधना, विशेष-निबंधना, हेतु-निबंधना तथा कार्य-निबंधना हैं। भूषण ने केवल अंतिम दो के उदाहरण दिए हैं। इसमें इष्ट कारण का वर्णन कार्य के कथन द्वारा किया जाता है। शिवाजी के बैर करने का क्या फल हुआ यह कहकर उनके प्रभुत्व की वर्णना की गई है। तीसरे में शिवाजी की गुणग्राहकता का बोध कराया गया है। १६८—७१

अर्थान्तरन्यास Transition—जहाँ एक कथन का दूसरे कथन द्वारा समर्थन किया जाय। इसमें सामान्य बात का विशेष बात से और विशेष का सामान्य से, साधर्म्य या वैधर्म्य द्वारा समर्थित होने से चार भेद होते हैं। २६५ में सामान्य बात 'वीरों के हिम्मति हथ्यार होत आई है' का समर्थन श्रीरामचन्द्र, अर्जुन तथा शिवाजी के कृत्यों से किया गया है। दूसरे में विशेष बातों का वर्णन कर उसका समर्थन इस साधारण बात से किया गया है कि

'यह तो शिवाजी की सदा ही की रीति है।' ये दोनों उदाहरण साधर्म्य द्वारा समर्थित हुए हैं। २६४—६

अवज्ञा Indifference—जहाँ किसी के साथ होने से उसके गुण या दोष का असर न हो। जैसे, दूसरों के दरबार में जाने या न जाने से कोई फल नहीं है। १८०—१

असंगति Disconnection—असंगति तीन प्रकार की होती है। प्रथम—जहाँ कारण एक स्थान पर और कार्य दूसरे स्थान पर होता दिखलाया जाय। जैसे, शिवाजी के घोड़े पर सवार होने से शत्रु की गरदन झुक जाती है। यहाँ बोझ घोड़े पर पड़ा पर गर्दन शत्रु की दबी। द्वितीय—जहाँ कार्य का होना उचित है वहाँ न कर दूसरे स्थान पर हो। जैसे, शिवाजी की तलवार से शत्रु-स्त्रियाँ डर गईं। शत्रु पुरुषों का डरना उचित है, पर स्त्रियों का डरना दिखलाया गया है। तृतीय—जहाँ कुछ कार्य करते हुए कोई दूसरा कार्य हो जाय। जैसे, शिवाजी औरंगजेब को सुख देने दिल्ली गए, पर उसे दुख ही दिया। १९९—२०४

असम्भव Unlikely—यदि कोई अनहोनी बात हुई सी मालूम हो तो वह असंभव अलंकार माना जाता है। जैसे शिवाजी के एक ही रात्रि में सब दुर्ग ले लेने का समाचार सुनकर औरंगजेब पश्चात्ताप कर रहा है। १९३—८

आक्षेप Hint—भूषण ने आक्षेप की दो परिभाषाएँ की हैं। पहिला यह है कि जहाँ कुछ कहकर उसका बाद को निषेध किया जाय। जैसे, लड़ना हो तो

लड़ो, पर लड़ने पर बचोगे नहीं। दूसरा लक्षण यों दिया है कि जहाँ निषेध का आभास मात्र हो, प्रत्यक्ष में न कहा गया हो। जैसे, शिवाजी को दमन करने पर नियुक्त होकर मुगल-सेनानी स्पष्टतः जाने का निषेध न करता हुआ केवल उसका आभास मात्र देता है कि यदि कुछ दिन बाद शिवाजी पर भेजे जायँ तो बीच में बहुत कुछ बादशाह का कार्य करेंगे। १७७—८०

उत्प्रेक्षा Poetical fancy—जहाँ विभिन्नता का ज्ञान दिखलाते हुए एक बात की दूसरी में संभावना की जाय। भूषण ने उत्प्रेक्षा के चार भेदों के केवल उदाहरण दिए हैं—वस्तु, हेतु, फल तथा गम्य। इसके अतिरिक्त सापह्नवोत्प्रेक्षा भी होती है। जिसमें एक वस्तु दूसरी वस्तु के समान दिखलाई जाय वह वस्तूत्प्रेक्षा है। इसके उक्तविषया तथा अनुक्तविषया दो भेद हैं। भूषण जी ने केवल प्रथम ही का उदाहरण दिया है। जैसे शिवाजी ने शत्रु को ऐसा पछाड़ा जैसे सिंह गजराज को। कारण न होते हुए भी उसे उस कार्य का हेतु मानना हेतूत्प्रेक्षा है। इसके तथा फलोत्प्रेक्षा के सिद्ध-विषया तथा असिद्ध-विषया दो दो भेद हैं। जैसे, शिवाजी दिल्ली से आई सेना को लूट लेते हैं मानो औरंगजेब करस्वरूप घोड़े, हाथी, सेनापतियों के साथ कर भेजता रहता है। जिस कारण का जो वास्तविक फल नहीं है उसे उसका फल माना जाय तो फलोत्प्रेक्षा हुई। जैसे, शत्रु आठों पहर शिवाजी का नाम डर से लेते रहते हैं मानो मुक्ति के लिए

म्लेच्छ भी महादेवजी का नाम-जप कर रहे हैं। शिवाजी का नाम लेना सिद्ध विषय है, पर फल मुक्ति की याचना ठीक नहीं है। उत्प्रेक्षा-वाचक मानो आदि शब्द जहाँ न हों वह गम्योत्प्रेक्षा है। जैसे, छोटे छोटे किलेदार नदी हैं, शिवाजी भारी दुर्गाध्यक्ष समुद्र हैं, जिसमें सब आकर मिल जाते हैं। ९८—१०८

उदात्त Exalted—जहाँ संभाव्य ऐश्वर्य का बढ़ा-चढ़ा वर्णन हो या किसी के चरित्र का विशेष महत्व दिखलाया जाय। जैसे, शिवाजी के कवि राजाओं की तरह रहते हैं अथवा पूना में मत टिकना, वहीं शायस्ता खाँ की शिवाजी ने दुर्दशा की थी। ३३५—८

उन्मीलित Discovered—सादृश्य होते हुए किसी कारण के उल्लेख से भिन्नता प्रकट हो। जैसे, शिवाजी के यश में हंस और चमेली बिलकुल मिल-से गए हैं, पर बोली तथा गंध ही से उनका पता चलता है। ३०२—३

उपमा Simile—दो वस्तुओं में जहाँ समानता दिखलाई जाय वहाँ उपमालंकार होता है। इसके चार अंग होते हैं। ३२—५

(१) उपमेय Subject compared—वर्ण्य, उपमा योग्य, जिसको उपमा दी जाय। ३३

(२) उपमान Object with which comparison is made—जिस वस्तु से उपमा दी जाय। जैसे, कमल-से नेत्र में कमल उपमान और नेत्र उपमेय है।

उसे कल्पद्रुम, सौंदर्य के कारण दूसरा उसे कामदेव और तीसरा उसे युद्ध में नृसिंह बतलाता है। ७१

(२) जब एक ही व्यक्ति को अनेक जन अनेक रूप में देखें। जैसे, शिवाजी को कवि कर्ण, धनुर्धर अर्जुन तथा एदिल कहरी कहता है। ७२—३

एकावली Necklace—जहाँ पूर्वकथित के प्रति उत्तरोत्तर वस्तुओं का विशेषण भाव से वर्णन इस प्रकार किया जाय कि अर्थ की पंक्ति-सी हो जाय। इस प्रकार के वर्णन के स्थापन तथा निषेध से इस अलंकार के दो भेद होते हैं। भूषण ने केवल प्रथम भेद दिया है। उदा०, तीनों लोक में नरलोक, नरलोक में तीर्थ. तीर्थों की समाज में महिमा, महिमा में राज्यश्री और राज्यश्री शिवाजी में शोभित है। २३३—४

कारणमाला Garland of Causes—जहाँ किसी कारण से उत्पन्न कार्य अन्य कार्य का कारण बतलाया जाय और इसी प्रकार क्रमशः कई कारण कार्य कथित हों। इसे गुम्फ भी कहते हैं। जैसे, शंकर की कृपा से सुबुद्धि, सुबुद्धि से दान, दान से पुण्य और पुण्य से शिवाजी का उत्कर्ष हुआ। २३०—२

काव्यार्थापत्ति Necessary conclusion—जब वैसा हो गया तब ऐसा क्यों न होगा, कह कर जहाँ वर्णन हो। जैसे, जब शिवाजी ने दिल्ली के सम्राट् को परास्त कर दिया तब तुम्हारी उसके आगे क्या चलेगी ? २६०—१

काव्यलिंग poetic reason—जहाँ युक्ति के साथ किसी बात का समर्थन किया जाय। जैसे, उत्तर, पूर्व तथा

पश्चिम के राज्यों को विजय कीजिए, पर दक्षिण के नाथ शिवाजी से युद्ध कर बावरे न कहलाइए। २६२—३

कैतवापह्नुति Concealment dependnt on deception—जहाँ एक के बहाने दूसरे का कार्य दिखलाया जाय। मुगल लोग वास्तव में शिवाजी से डर कर युद्ध में जाना नहीं चाहते थे इसलिए मक्का जाने के बहाने नर्मदा नदी उतरते थे। ९५—९६

गम्योत्प्रेक्षा Incomplete Poetical Fancy - जहाँ उत्प्रेक्षा-वाचक मानो आदि शब्द न दिए गए हों। जैसे, गढ़पति शिवाजी समुद्र हैं और छोटे छोटे गढ़पाल नदी-नाले हैं, जो उसमें आ मिलते हैं। १०६—८

चंचलातिशयोक्ति Hyperbole depending on effect following the cause immediately-कारण की बात निकालते ही कार्य हो जाय। जैसे, शिवाजी का आना सुनते ही शत्रु-नारियों के अश्रुप्रवाह से गाँव ही डूबा जाता है। ११५—७

चित्र Manifold जिसके लिखने या सुनने में किसी प्रकार की विचित्रता हो। शिवराज-भूषण में जो उदाहरण दिया गया है उसमें यही विचित्रता है कि उसे जहाँ से पढ़िए एक सवैया पूरा बनता जायगा। ३६७—८

छेकानुप्रास Single Alliteration स्वर के साथ अक्षरों की दो बार आवृत्ति हो। जैसे, दिल्लिय दलन, सूरति सहर। ३५३—४

छेकापह्नुति Concealment dependant on artfulness—जहाँ सत्य बात छिपाकर दूसरे बात की शंका की जाय। जैसे, तिमिर (अंधकार और

तैमूरलंग) वंश को नष्ट करने वाला आया है। एक के शिवाजी कहने पर दूसरी उसे चुप कराती हुई कहती है कि नहीं सूर्य। ९२—४

छेकोक्ति Ambiguous Speech—जहाँ प्रचलित उक्ति से समर्थन करते हुए कोई कहावत कही जाय। जैसे, शिवाजी के पसंद ही की कविता उसी प्रकार रसमय है जिस प्रकार ईश्वर पर चढ़ाए गए फूल ही उत्तम हैं। ३१७—२०

तद्गुण Borrower—जहाँ अपना गुण त्याग कर दूसरे का ग्रहण किया जाय। जैसे, सूर्य-रथ के पहिए मणियों की ज्योति से अनेक रंग बदलते रहते हैं। २८७—८

तुल्ययोगिता Equal Pairing—जहाँ उपमेयों या उपमानों का एक ही धर्म कहा जाय। यह तीन प्रकार का होता है।

(१) जब एक ही धर्म कई वर्ण्यों में कहा जाय। जैसे, शिवाजी का प्रताप, मरहट्ठों के चित्त में चाव तथा तुर्क लोग आकाश-विमान में चढ़ते हैं।

(२) जब उपमानों के गुण एक ही में कहे जायँ। जैसे, शिवाजी की भारी भुजाओं ने पृथ्वी का भार धारण कर लिया जिससे शेषनाग तथा दिग्पालगण निश्चिंत होगए।

(३)जहाँ हित और अहित की बात एक ही धर्म कहे जाने पर निकले। जैसे, शिवाजी अपने गुणों से मित्रों तथा शत्रुओं को बाँध रखते हैं। १२४—८

दीपक Illuminator—जहाँ उपमेय तथा उपमान का एक ही धर्म कहा जाय। जैसे, रात्रि की चन्द्रमा से और हिन्दुओं की शिवाजी से शोभा है। १२९—३०

दीपकावृत्ति Illuminator with repetition— जहाँ एक अर्थ वाले पद की कई बार आवृत्ति हो। जैसे, शिवाजी के दान-जल से नदियाँ बढ़ती हैं और गज के दान (मद) से नद उमड़ते हैं। अर्थ की आवृत्ति से तथा पद और अर्थ की आवृत्ति से इसके दो और भेद होते मैं हैं।

दृष्टांत Exemplification—जहाँ उपमेय तथा उपमान साधारण धर्मों का बिंब प्रतिबिंबभाव से वर्णन किया जाय। जैसे, शिवाजी ही औरंगजेब को जीत सकते हैं, जिस प्रकार सिंह ही हाथी पर चोट कर सकते हैं। १३८—४०

निदर्शना Illustration—भूषण ने यह परिभाषा चंद्रालोक के अनुसार लिखी है। दो समान वाक्यों में अर्थ का ऐक्य आरोपित करना। जैसे, जिस प्रकार परशुराम या बलराम जी पहिले पृथ्वी के रक्षक हुए हैं उसी प्रकार आजकल शिवाजी हैं।

इसके तीन भेद किए गये हैं:—

(१) प्रथम निदर्शना— जब उपमान का गुण उपमेय में स्थापित किया जाय। जैसा पूर्वोक्त उदाहरण है।

(२) द्वितीय निदर्शना—जब दो वाक्यों का एक ही अर्थ हो। जैसे, शिवाजी का जो कीर्ति-युक्त प्रताप है उसे हम सूर्य-तेज के बीच चाँदनी समझते हैं।

(३) तृतीय निदर्शना—कार्य देखकर फल कहना। बादशाहों से लड़ना तथा कवियों को प्रसन्न करना शिवाजी के लिए सहज विचार मात्र है चाहे वह औरों के लिए जंजाल ही क्यों न हो। १४१—५

निरुक्त Derivative meaning—जहाँ शब्दों का युक्ति-युक्त पर मनमाना अर्थ किया जाय। जैसे, शिवाजी ने कवियों के दारिद्र्यरूपी हाथी को मार डाला, इसलिए सरजा (सिंह) कहलाए। ३४३—६

परिकर Insinuator—जहाँ विशेषण किसी खास मतलब से प्रयुक्त हो। जैसे, सूर्यवंशी शिवाजी को म्लेच्छ-कुल-चंद्र कैसे जीतेगा ? १६०—३

परिकरांकुर Passing Insinuation—जहाँ विशेष्य का प्रयोग किसी खास मतलब से किया जाय। जैसे, अब अंधकासुररूपी औरंगजेब शिवाजी को कैसे जीतेगा ? शिवाजी ने अंधक दैत्य को मारा था, इसलिए शिवाजी विशेष्य शब्द साभिप्राय है। १६०, १६४

परिवृत्ति Exchange—जहाँ कुछ लेकर देना दिखलाया जाय। जैसे, शिवाजी महादेव जी को मुंडमाल देकर यश का पहाड़ लेते हैं। २४४—५

परिणाम Commutation—जहाँ उपमेय का कार्य उपमान द्वारा किया जाना अथवा दोनों का एक रूप होकर करना दिखलाया जाय। रूपक से इसमें यही भेद है कि उपमान द्वारा कार्य होता दिखलाकर विशेष चमत्कार उत्पन्न किया जाता है। जैसे, शिवाजी के यशरूपी चंद्र ने चंद्रमा की कांति हर ली। ६७—६

परिसंख्या Special Mention—जहाँ एक बात का किसी स्थान पर निषेध कर उसका दूसरे स्थान पर होना दिखलाया जाय। जैसे, शिवाजी के राज्य में चोरी नहीं रह गई और रह भी गई तो गुणियों में जो अपने गुणों से दूसरों का चित्त चुरा लेते हैं। २४६—७

पर्यस्तापह्नुति Concealment by Transposition—
जहाँ एक वस्तु का धर्म उसमें न बतला कर दूसरे
में दिखलाया जाय। जैसे, कलियुग में तुर्कों को
मृत्यु नहीं खाती प्रत्युत् शिवाजी की तलवार। ८५—८७

पर्याय Sequence—(१) जहाँ एक में अनेक वस्तु का
आश्रित होना अथवा (२) एक वस्तु का अनेक में
क्रमशः आश्रय लेना दिखलाया जाय। इस प्रकार
पर्याय के दो भेद हुए। उदा० (१) जिन महलों
में पहिले मृदंग बजते थ वहाँ अब हाथी, सिंह
गर्जते हैं। (२) विजयश्री सब को छोड़कर
औरंगजेब में आ रही थी, पर उसे भी अब छोड़कर
शिवाजी के पास चली आई। २४०—३

पर्यायोक्ति Periphrasis—वचन-चातुरी से जहाँ वर्णनीय
वस्तु घुमा-फिरा कर कही जाय। जैसे, शिवाजी के
क्रोध के डर से आगरे की मुसलमानिनों के मस्तक
में सिंदूर दिखलाई पड़ता है। यहाँ शिवाजी का
आतंक वर्णनीय है; जिसे यह कह कर दिखलाया
गया है कि दूर देश की यवनी भी हिंदू-स्त्री के
सौभाग्य का चिन्ह धारण करने लगीं। १७२—३

पिहित Concealed—जहाँ दूसरे का रहस्य जान कर
उसे किसी क्रिया द्वारा उस पर प्रकट कर दिया
जाय। जैसे, नियम-विरुद्ध खड़ा करने से औरंगजेब
की नीति की बात जान कर शिवाजी ने सलाम न
करके उस पर अपना क्रोध प्रकट किया। ३०८—१०

पुनरुक्तिवदाभास Apparent Tautology—जहाँ
पुनरुक्ति दोष का आभास मिले, पर वास्तव में वह

दोष न हो। जैसे. उदाहरण में दल सैन, रवि सूर्य पुनरुक्ति ज्ञात होती है पर है नहीं। ३६५—६

पूर्वरूप Reversion—जहाँ एक का गुण लेकर फिर उसे छोड़ अपना पूर्व रूप धारण कर लेना वर्णन किया जाय। जैसे, पवित्र ब्रह्म-वाणी कलि के कविराजों के कारण भ्रष्ट हो चली थी, पर शिवाजी के चरित्ररूपी तालाब में अवगाहन कर पुनः पवित्र हो गई। इसका एक भेद यह और होता है कि जिस समीपवर्ती का गुण लेना कहा गया हो उसके दूर करने पर भी वह गुण दूसरे के कारण विद्यमान रहे। जैसे, दीपक बुझा देने पर भी मणियों के कारण उजाला बना रहा। २८६—६३

प्रतिवस्तूपमा Typical Comparison—जहाँ उपमेय तथा उपमान का साधारण धर्म अलग अलग समान वाक्यों में कहा जाय। उदा०, जैसे ग्रीष्म के सूर्य में तेज विद्यमान है वैसे ही शिवाजी में दिल्ली-दलन का हठ मौजूद है। १३५—६

प्रतीप Converse—इस शब्द का अर्थ उलटा है अर्थात् जहाँ उपमेय को उपमान के समान न कहकर उलटे उपमान को उपमेय के सदृश कहा जाय। उपमेय तथा उपमान की समानता में आधिक्य या कमी के अनुसार पाँच भेद होते हैं। ४१—४२

(१) जहाँ उपमान उपमेय के समान कहा जाय। यथा, जिस प्रकार शिवाजी ने अपनी कीर्ति फैलाई थी, उसी प्रकार चन्द्र ने अपनी चाँदनी फैलाई। ४१—४२

(२) जहाँ उपमान की समानता न कर सकने पर उपमेय तिरस्कृत हो। यथा, हे शिवाजी! सूर्य के समान

तुम्हारा प्रताप शत्रु का पानी सोख लेने वाला है, पर गर्व क्यों करता है ? बड़वानल तेरे समान है। ४३—४४

(३) जहाँ उपमान ही उपमेय की समानता न कर सकने पर तिरस्कृत हो। जैसे, चाँदनी क्या गर्व करती है जब शिवाजी की कीर्ति इतनी चारों ओर फैली हुई है ? ४५—४६

(४) जहाँ उपमान उपमेय के बराबर न हो। जैसे, शिवाजी के यश को शेषनाग के समान कैसे कहें ? ४७—४८

(५) जहाँ उपमेय उपमान के सामने व्यर्थ मालूम हो। जैसे, शिवाजी के सुयश के आगे शेषनाग कुछ नहीं हैं। ४९—५०

प्रत्यनीक Rivalry—बलवान शत्रु पर जोर न चलने से उस के साथ वालों पर चोट करना जहाँ दिखलाया जाय। यथा, हिन्दू-पति शिवाजी से जब कुछ वश न चला तब औरंगजेब गरीब हिन्दुओं को कष्ट देने लगा। २५७—८

प्रहर्षण Successful—मनचाहे अर्थ से जहाँ अधिक प्राप्ति दिखलाई जाय। जैसे, चाँदी माँगने पर सोना और घोड़ा माँगने पर हाथी पाते हैं। २१४—५

प्रौढ़ोक्ति Bold assertion—उत्कर्ष का कारण न रहने पर भी उसकी उसमें कल्पना कर ली जाय। यथा, मानसरोवर में रहने ही के कारण वहाँ का हंस-वंश शिवाजी के यश की समता नहीं कर सकता। २६७—८

प्रश्नोत्तर Question and Answer—जहाँ किसी एक के प्रश्न तथा दूसरे के उत्तर में कुछ वर्णन किया जाय। यथा, कौन दाता है और कौन संसार का पालन करने वाला है ? भूषण उत्तर देता है कि कृष्ण भगवान के अवतार महाराज शिवाजी। ३११—२

फलोत्प्रेक्षा—देखिए उत्प्रेक्षा। १०४—५

भाविक Vision—जहाँ भूत तथा भविष्य काल की बातें वर्तमान काल में वर्णित हों। जैसे, आज भी मुंड-माला लेकर महादेव जी प्रसन्न होते हैं और अब तक रुहेले सूर-लोक की ओर चले जा रहे हैं। ३३०—२

भाविक छवि Vivid Description—जहाँ दूर पर स्थित वस्तु का ऐसा वर्णन किया जाय कि वह प्रत्यक्ष-सा सामने हो। जैसे, दिल्लीपति दिनरात यही देखता रहता है कि शिवाजी ने सूरत घेर रखा है। ३३३—४

भेदकातिशयोक्ति Hyperbole depending on distinction—जहाँ सब से भिन्न कहकर किसी बात का वर्णन किया जाय। यथा, सभी स्थानों के राजे औरंगजेब को कर देते हैं, केवल एक राजा शिवाजी ही की इससे भिन्न गति है। ११०—२

भ्रम Mistake—जहाँ सादृश्य के कारण कवि-कल्पना द्वारा एक बात में दूसरी बात का भ्रम उत्पन्न किया गया हो। यथा, पहाड़ों के पास जाते हुए भी स्त्रियाँ अपने पति को मना करती हैं, उन्हें भ्रम होता है कि वहाँ भी शिवाजी के सिपाही न हों। यह उदाहरण ठीक नहीं है। ७६—७७

भ्रान्तापह्नुति Concealment depending upon a mistake—जहाँ भ्रम के पैदा होते ही वह दूर कर दिया जाय। जैसे, शिवाजी केडर से भाग कर मेरु पर्वत में लुके हुए शत्रु "शिवाजी" का नाम सुनते ही भागने की तैयारी करते हैं; तब यक्षगण उन्हें धैर्य देते हुए कहते हैं कि 'यह सरजा शिवाजी नहीं है, महादेव हैं।' ८८—९०

मालादीपक Serial Illuminator—दीपक तथा एकावली अलंकारों के मिलने से यह अलंकार बनता है। यथा, साधुओं के सत्संग ने शिव-भक्ति को तथा शिव जी का भक्ति ने भूषण के मन को जीत लिया है। २३५---३

मालोपमा Serial Simile---जहाँ एक उपमेय के कई उपमान दिए जायँ। जैसे, शिवाजी की म्लेच्छवंश पर वैसी ही धाक है जैसी शेर की हाथियों पर, चीता का मृगों पर और परशुराम जी की सहस्रार्जुन पर था। ५५--६

मिथ्याध्यवसित False supposition---जहाँ झूठे साध्य का अन्य झूठे साधन से समर्थन किया जाय। यथा, शिवाजी का पैर रण में वैसा ही चल है जैसे अंगद का था और उनकी प्रतिज्ञा भी मेरु पर्वत, ध्रुव तथा पृथ्वी के समान चल है। अर्थात् शिवाजी के पैर युद्धभूमि में अचल हैं और उनके वचन भी अटल हैं। पौराणिक गाथाओं में पृथ्वी अचल ही मानी जाती है। २७१—३

मीलित Lost—जहाँ समान वस्तु में मिल जाने से भिन्नता न मालूम हो। यथा, शिवाजी के यश में मिल जाने से कैलाश पर्वत को महादेव जी और पार्वती जी महादेव जी को खोज रही हैं। ३००—१

यमक-अनुप्रास Pun—जहाँ उन्हीं शब्दों की भिन्न भिन्न अर्थों में आवृत्ति हो जैसे, 'यशवंत यशवंत'। पहिले का अर्थ यशस्वी है और दूसरा नाम है। ३६३—४

यथासंख्य Relative Order—जिस क्रम से पहिले एक से अधिक वस्तुओं का उल्लेख हो उसी क्रम

से बाद को उनका वर्णन दिया जाय। जैसे, अफजल खाँ, रुस्तमजमां तथा फतेखाँ को कूटा, लूटा और जूटा। २३८—९

रूपक Metaphor—जहाँ उपमेय तथा उपमान में कुछ भी भेद न दिखलाया जाय। रूपक के दो मुख्य भेद तद्रूप और अभेद हैं और फिर प्रत्येक के अधिक, सम और न्यून के अनुसार तीन तीन उपभेद हुए। भूषण ने केवल तीन उपभेद ही लिए हैं जो तद्रूप के हैं।

(१) सम—शिवा जी के यशरूपी जहाज का रूपक।

(२) न्यून—दो ही कर होने पर शिवा जी को सहस-कर (सूर्य) मानते हैं।

(३) अधिक—पृथ्वी के इंद्र शिवाजी उस इंद्र से बढ़कर हैं कि पर्वतों को कोट-युत कर फिर सपच्छ कर दिया है। ६०—६६

रूपकातिशयोक्ति Hyperbole depending on Metaphor—जहाँ केवल उपमान ही दिया गया हो और उसी से उपमेय का भान हो। जैसे कनकलता (देह) में चन्द्र (मुख), चन्द्र में कमल (आँखें) और कमल से पराग की बूँदें (अश्रु-कण) झरती हैं अर्थात् शत्रु-नारियाँ रोती हैं। १०९—१०

ललितोपमा Graceful Simile—जहाँ उपमेय तथा उपमान का सादृश्य दिखलाने के लिए लीलादिक क्रिया-पद दिए जाय। लीला, विलास, ललित आदि दस हाव होते हैं। हँसी उड़ाना, खिलवाड़ करना आदि इनकी क्रियाएँ हैं। जब उपमेय द्वारा ऐसी क्रियाओं का उपमान के लिए प्रयोग होता है

तभी यह अलंकार बनता है। जैसे, शिवाजी के दुर्ग पर की दीपावली चाँदनी को हँसती है। ५७—९

लाटानुप्रास Verbal Alliteration—जहाँ एक ही प्रकार के स्वर-युक्त पद बार बार आवें। अन्वय-भेद से अर्थ भी इस अनुप्रास में भिन्न हो जाते हैं। यथा, औरों की याचना करने से क्या हुआ जो शिवाजी से नहीं माँगा? तथा औरों को याचना से क्या जब शिवा जी से माँग ही लिया। ३५३—६२

लुप्तोपमा Incomplete Simile—जिस उपमा में उसके चारों अंग में से एक, दो या तीन अंग न हों वह लुप्तोपमा कहलाती है। जैसे, शिवाजी शत्रुओं के लिए अग्नि के समान हैं। यहाँ अग्नि का जलाना धर्म लुप्त है। ३६—८

लोकोक्ति Idiom—जहाँ लोगों में प्रचलित कहावत लेकर कुछ कहा जाय। जैसे, स्त्री कहती है कि दक्षिण के सूबेदार होकर तो जा रहे हैं, पर प्राण कहाँ रक्खे जा रहे हो। ३१७—८

लेश Unexpected Result—जहाँ गुण को दोष और दोष को गुण कह के वर्णन किया जाय। जैसे, उदयभानु ने धैर्य, गढ़ तथा हठ रखने का यही फल पाया कि स्वर्ग को प्रयाण किया। यहाँ गुण को दोष ठहराना हुआ। अब दोष का गुण-वर्णन इस उदाहरण में लीजिए। यथा, हे प्रिय, अच्छा किया कि युद्धभूमि से भागकर अपना प्राण तो बचा लाए। २८४—६

वक्रोक्ति Crooked Speech—जहाँ श्लेष या काकु से

दूसरा ही अर्थ लगाया जाय। जैसे, सरजा (सिंह या शिवाजी) के डर से हम यहाँ भाग आए। ३२१—३

वस्तूत्प्रेक्षा--देखिए उत्प्रेक्षा ९९—१०२

विकल्प Alternative—'यह किया जाय या वह किया जाय' इस प्रकार अनिश्चयात्मक वर्णन जहाँ हो। जैसे मोरग जाओ, कमायूँ जाओ या कहीं और जाओ, पर शिवाजी तक पहुँचे बिना मनचाहा नही मिलेगा। २४८—५०

विचित्र Strange—जहाँ फल की इच्छा कुछ है और प्रयत्न उसके विपरीत किया जाता है। जैसे यश ही के लिए शिवाजी ने कई बरस में लिए गए दुर्गों को झट जयसिंह को दे दिया। २११—३

विनोक्ति Speech of Absence—जहाँ गुण या दोष 'बिना' शब्द के साथ वर्णित हो। जैसे, शिवाजी का बिना गुमान का दान संसार में विख्यात है। १५१—५

विभावना Peculiar Causation—विभावना छ प्रकार की होता है। भूषण ने निम्नलिखित भेद दिए हैं:—

(१) बिना कारण के कार्य का होना। जैसे, साथ सेना और हथियार के न होते हुए भी शिवाजी ने औरंगजेब का गव दूर कर दिया।

(२) अपूर्ण कारण से काय का होना। जैसे, दो सौ सवारों से शिवाजी ने सौ हजार असवार के सरदार को जीत लिया।

(३) जो कारण न हो पर उससे भी कार्य हो जाय। जैसे, काले बादलों से अंगारे बरसते हैं। अग्नि-वर्षा का कारण बादल नहीं हैं, पर उसी से अग्नि बरस कर शत्रु-सेना को विचलित कर रही है।

कारे घन से तात्पर्य बारूद के धुएँ का छा जाना है।

(४) जहाँ कार्य से कारण की उत्पत्ति का आभास मिले। जैसे, तलवाररूपी धूम से प्रतापरूपी अग्नि उत्पन्न हुई। यहाँ तलवार ही के द्वारा प्रताप का अर्जित होना ठीक है, पर धुएँ से अग्नि का पैदा होना अशुद्ध है।

भूषण ने अन्य दो विभावनाएं नहीं दी हैं। १८५—६

विरोध Contradiction—जहाँ वस्तु के गुणों के विरुद्ध कार्य होता दिखलाया जाय। जैसे, शिवाजी के श्वेत यश से शत्रुओं का मुख काला हो जाता है।

विरोधाभास Apparent Contradiction—जहाँ विरोध वास्तविक न हो केवल उसका आभास मात्र मिले। यथा. हे शिवाजी, तू दीनदयाल होकर म्लेच्छों के दीन (मत) को मारता है। १८३—४

विशेष Extraordinary—जहाँ बिना आधार के आधेय का वर्णन किया जाय। जैसे, अमरसिंह अमरपुर पर गए, उनकी राज्यश्री युद्धभूमि में रह गई। २२४—६

विशेषोक्ति Peculiar Allegation—जहाँ उपयुक्त कारण के होते भी कार्य का न होना दिखलाया जाय। जैसे, इंद्र-सा ऐश्वर्य होते हुए भी शिवाजी में जरा भी गर्व नहीं है १६४—५

विशेषक Distinguisher—सादृश्य होते हुए भी किसी विशेषता से जहाँ भिन्नता दिखलाई जाय। यथा, ललकारने ही से शिवाजी के सिपाही और भागने से मीर लोग पहिचान पड़ते हैं। ३०६—७

विषम Incongruity—'कहाँ यह और कहाँ वह' कह कर जहाँ कुछ वर्णन किया जाय। जैसे, कहाँ यह

राजकुमार इतना सुकुमार हैं और कहाँ ये पर्वत इतने विकराल हैं ! २०५—७

विषादन Disappointment---इच्छित कार्य करने पर भी जब उसके विरुद्ध कार्य हो जाय । जैसे, औरंगजेब ने शिवाजी के गढ़ लेने को सेना भेजी, पर उसे अपने ही गढ़ गँवा देने पड़े । २१६--८

व्यतिरेक Contrast---जहाँ समान उपमेय तथा उपमान में किसी एक को बढ़ कर कहा जाय । जैसे, पंच पांडव रात्रि में लाख के भवन से निकल आए, पर शिवाजी अकेले दिन में लाख चौकी के बीच से निकल आए । १४६---८

व्याघात Frustration---किसी कार्य का करने वाला जब उससे विपरीत कार्य करता हुआ दिखलाया जाय । यथा, यवनी कहती है कि पालनहार विष्णु के अवतार शिव जी, हमारे पतियों को मत मारो । व्याघात का एक और भेद होता है, जिसमें किसी के तर्क को उलट कर उसी के विपरीत पक्ष का समर्थन किया जाय । जैसे, शिवाजी की तलवार संसार की रक्षक है और इसीसे म्लेच्छों के काल (यम) की भी रक्षक है । २८७---९

व्याजोक्ति Dissembler---जहाँ दूसरा कारण बतला कर वास्तविक बात छिपाई जाय । यथा, शिवाजी द्वारा लूटे-पिटे सरदार साधु-से हो वन में घूमते हैं, पर पूछने पर कहते हैं कि हम आप ही संसार से अब विरक्त हो गए हैं । ३१४---६

व्याजस्तुति Artful Praise---जहाँ प्रशंसा में निन्दा और निन्दा में प्रशंसा की जाय । जैसे, हे शिवाजी ! प्रसन्न

होकर सभी हमें हाथी देते हैं, यदि आपने भी दिया तो क्या हुआ ? १७४—६

शुद्धापह्नुति Simple Concealment—जहाँ सत्य बात छिपा कर दूसरी बात कही जाय। जैसे, यह बिजली नहीं चमकती प्रत्युत् विलायती तलवार है। ८०—८१

श्लेष Paronomasia—जहाँ एक बात का कई अर्थ लगाया जा सके। जैसे, शिवाजी सूर-कुल-भूषन है, अर्थात् वह सूर्य-कुल-भूषण या शूर-कुल-भूषण है। १६५—७

संकर Mixed—जहाँ कई अलंकारों का मेल हो। जैसे, ऐसे बाजिराज देत महाराज सिवराज भूषन जो बाज की समाजैं निदरत है। इसमें अनुप्रास के साथ प्रतीप लिये हुए ललितोपमा अलंकार है। ३६९—०

संदेह Doubt—जहाँ यह है या वह है, कह कर संशय दिखलाया जाय। यथा, शिवाजी के कार्य को देख कर लोग कहते हैं कि ऐसा काम न जाने गंधर्व, देव, सिद्ध करते हैं या शिवाजी करता है। ७८—९

सम Equal—जहाँ एक दूसरे के अनुरूप दो बातों का ठीक वर्णन किया जाय। यथा, शिवाजी अनर्थ अवश्य ही कर बैठता, पर अच्छा हुआ कि उसको हथियार नहीं मिला।

समाधि Convenience—जहाँ अन्य कारण के उपस्थित होने से कार्य शीघ्र हो जाय। जैसे, शिवाजी यों ही म्लेच्छों के शत्रु थे और उस पर क्रोध में भरे हुए थे, इसलिए अफजल खाँ को झट मार डाला। २५१—२

समासोक्ति Model Metaphor—जहाँ वर्णन एक का किया जाय और ज्ञान हो किसी दूसरे का। यथा,

हाथी के भारी डील को देख, कर सब भागे, पर सरजा सिंह ने उसका घमंड हरण किया। यहाँ वर्णन सिंह तथा हाथी का है, पर ज्ञान शिवाजी तथा अफजल खाँ का हो रहा है। १५६--६

समुच्चय Conjunction--जहाँ कई कार्य साथ ही दिखलाए जायें। जैसे शिवाजी के आतंक से बीजापुर खाक हो गया, खवास खाँ के मुख में फेन आ गया और आदिलशाही सेना धक् हो गई। २५३—५६

संभावना Suppositon —'ऐसा हो तो यह हो सके' इस प्रकार जहाँ दिखलाया जाय। यथा, भीम से सहस्र गुण साहस हो तो शिवाजी से जाकर युद्ध करे। २६६--७०

सहोक्ति Connected Description--जब दो या अधिक बात साथ होती हुई मनोरंजक चाल पर कही जाय। यथा, दक्षिण की सूबेदारी पाकर दिल्ली के अमीर प्राण की आशा तथा उत्तर लौटने की आशा साथ ही छोड़ते हैं। १४६---५०

सामान्य Sameness--सादृश्य के कारण जहाँ भिन्नता न ज्ञात हो। जैसे, तलवारों की बिजली चमकने से मीरों के होश उड़ गए। ३०४—५

सामान्य विशेष Enhanced Description—सामान्य बात का जहाँ बढ़ाकर वर्णन किया जाय। जैसे, और राजे सहज कार्य नहीं कर सकते, पर शिवाजी का यश मात्र कठिन कार्य कर डालता है। १२१—३

सार Climax—जहाँ उत्कर्ष की उत्तरोत्तर वृद्धि वर्णित हो। जैसे, मनुष्यों में राजे बड़े होते हैं और राजाओं में शिवाजी सब से बढ़कर हैं। २३५—७

स्मृति Reminiscence—जहाँ वैसी ही वस्तु देखकर किसी अन्य वस्तु का स्मरण होना दिखलाया जाय। जैसे, हे शिवाजी, आप हरि के अवतार हैं इससे ब्राह्मणों को देखकर आपको सुदामा की याद पड़ती है, पर हमें देखकर भृगु का क्यों स्मरण करते हैं ? ७४—५

स्वभावोक्ति Natural Description—प्रकृति के अनुसार ही ठीक ठीक वर्णन जहाँ किया जाय। यथा, युद्ध की चर्चा चलने ही से शिवाजी की आँखों में उत्साह छलकने लगता है। ३२५—६

हेतु Cause—'इसी कारण ऐसा हुआ' कहकर जहाँ वर्णन किया जाय। जैसे, म्लेच्छों को मारने ही के लिए शिवाजी का अवतार हुआ है। ३४७—८

हेतु-अपह्नुति Concealment depending on a cause—युक्ति के साथ सत्य हेतु छिपाते हुए दूसरा कारण बतलाया जाय। जैसे, शिवाजी के हाथ में तलवार नहीं है, प्रत्युत् भुजारूपी सर्प की यह नागिन है जो शत्रुओं के प्राणरूपी वायु का भक्षण कर रही है। ८२—४

हेतूत्प्रेक्षा—देखिए 'उत्प्रेक्षा'। १०३

परिशिष्ट (घ)

ग्रन्थावली में आए हुए छंदों की

व्याख्यायुक्त सूची

अमृतध्वनि—२४ मात्रा का यह एक यौगिक छंद है। आरंभ में एक दोहा देकर उसके बाद दो रोला देने से यह छंद बनता है। दोहे का अंतिम चरण आगे के रोला का प्रथम चरण होता है। दोहे के आरम्भ तथा दूसरे रोले के अंत के कुछ शब्द समान होने चाहिए। इस छंद के रोला में आठ आठ मात्राओं पर ही यति होनी चाहिए। कुंडलिया छंद का यह एक भेद मात्र है, जिसके रोला में इस प्रकार की यति का होना बंधन नहीं होता।

दोहे का लक्षण दिया गया है। रोला मात्रिक छंद है जिसमें ग्यारह तथा तेरह मात्रा पर यति होती है। अंत में, कुछ का मत है कि दो गुरु होने चाहिए, पर यह नियम सर्वसम्मत नहीं है। भूषण ने शि० भू० के द्वितीय पद में छप्पय के रोला के अंत में दो लघु दिए हैं।

अमृतध्वनि के लिए शि० भू० छं० ३५४—७ देखिए।

अलसा—यह सवैया का एक भेद है। सात भगण के बाद एक रगण रहता है, अर्थात् २४ अक्षर होते हैं। भगण में एक गुरु और दो लघु तथा रगण में मध्य का लघु और दोनों गुरु होते हैं। उदाहरण के लिए छं० २५८ देखिए।

किरीटी—यह सवैया का एक भेद है, जिसमें आठ भगण होते हैं। एक भगण में एक गुरु और दो लघु होते हैं। शि० भू०

छं० ३२० इसी प्रकार का सवैया है। 'औरंग जो चढ़ि दक्खिन आवै तो' में प्रथम तीन भगण हैं पर चौथे समूह में तीनों वर्ण गुरु हैं, पर उन्हें भी 'आवत' के समान भगण बनाकर पढ़ना होगा।

गीतिका—छब्बीस मात्रा का यह छंद होता है, जिसमें चौदह तथा बारह मात्रा पर यति होती है और अंत में लघु गुरु होता है। शि० भू० की ग्रन्थालंकार नामावली इसी छंद में है।

छप्पय—इस छंद में छ पद होते हैं, जिससे यह षट्पद या छप्पय कहलाया। पहिले दो रोला और बाद को एक उल्लाला रहता है। शि० भू० छं० २दे खिए। उल्लाला अट्ठाईस मात्रा का छंद है, जिसमें पंद्रह तथा तेरह पर यति होती है। इसे चंद्रमणि भी कहते हैं।

दोहा—यह मात्रिक छंद है जिसमें चार चरण होते हैं। प्रथम तथा तृतीय में तेरह मात्रा और द्वितीय तथा चतुर्थ में ग्यारह मात्रा होती हैं। अंतिम दोनों के तुकांत मिलने चाहिए। शि० भू० में दोहों की संख्या अन्य सभी छंदों से अधिक है।

मनहरण—छब्बीस वर्णों से अधिक वर्ण वाले छंद दंडक कहलाते हैं। इनके दो प्रधान भेद हैं। जिनमें गणों का बंधन होता है वे गणात्मक और जिनमें यह बंधन नहीं होता वे मुक्तक कहलाते हैं। दूसरे में केवल अक्षरों की संख्या ही रहती है। मनहरण मुक्तक दंडक है जिसे घनाक्षरी या कवित्त भी कहते हैं।

माधवी—सवैया छंद का एक भेद। इसमें आठ सगण अर्थात् चौबीस अक्षर होते हैं। सगण में दो लघु तथा एक गुरु होता है। शि० भू० का ३६८ वाँ पद देखिए।

मालती—सवैया का एक भेद। इसमें सात भगण और दो गुरु अर्थात् तेईस अक्षर होते हैं। भगण में एक गुरु और दो लघु होते हैं। शि० भू० के ३५, ३७, ४० आदि छंद देखिए।

लीलावती—यह बत्तीस मात्रा का छंद है जिसमें लघु गुरु का कोई बंधन नहीं है। सोलह सोलह मात्रा पर यति होती है। अंत में जगण होता है, ऐसा भी मत है।

हरिगीतिका—यह अट्ठाईस मात्राओं का एक छंद है जिसमें प्रवाह ठीक रखने के लिए पाँचवीं बारहवीं, उन्नीसवीं और छब्बीसवीं मात्राएँ ह्रस्व होनी चाहिए। अंत में एक लघु तथा गुरु रहना चाहिये। शि० भू० छंद १६—२२ देखिए।

परिशिष्ट (ङ)

कालचक्र

१० अप्रैल १६२७ शिवाजी का शिवनेरि दुर्ग में जन्म हुआ जो जुनार के पास पूना जिले में है। यह शाहु जी के द्वितीय पुत्र थे। इनकी माता का नाम जीजा-बाई था।

१६३७ विठो जी मोहिते नेवासकर की पुत्री सईबाई से शिवाजी का प्रथम विवाह हुआ। इन्हीं के पुत्र शंभा जी थे। यह पति के सामने ही स्वर्ग गईं।

१६४६ शिवाजी ने बाजी पसालकर, येसा जी कंक और ताना जी मालूसरे को भेजकर तोरण दुर्ग पर अधिकार कर लिया। दो लाख हून सरकारी तहसील यहीं लूटा। इस दुर्ग का नाम कुछ दिन के लिए प्रचंडगढ़ रक्खा गया। मोरो पिंगले ने इसी वर्ष मोरबद की पहाड़ी पर राजगढ़ दुर्ग बनाया।

१६४७ दादा जी कोणदेव की मृत्यु हुई। पूना की जागीर के सभी राजकर्मचारियों ने शिवाजी को अपना अफसर माना, पर शाहु जी की द्वितीय स्त्री के भाई शम्भू जी मोहिते के अस्वीकार करने पर उससे सूपा छीन लिया और शाहु जी के पास भेज दिया। कोंढाना के मुसलमान दुर्गाध्यक्ष को घूस देकर उस पर अधिकार कर लिया और

उसका सिंहगढ़ नाम रक्खा गया। पुरंधर दुर्ग भी अधिकृत हुआ। इनके सिवा सिवाजी ने पूना के पश्चिमोत्तर के नौ दुर्ग छीन लिए, जिनमें लोहगढ़, राजमाचो, रैरो प्रसिद्ध हैं। अंतिम ही बाद को रायगढ़ के नाम विख्यात हुआ।

१६४८--५० बोजापुर के सुलतान ने शाह जी को कैद कर लिया। शिवाजी शाहजहाँ से सन्धि की बातचीत करने लगे और शरजा खाँ तथा रनदौला खाँ के जामिन होने पर सन् १६४९ ई० में छोड़े गए। इसी बीच बीजापुर के बाजी श्यामराजे दस सहस्र सैनिकों के साथ शिवाजी को धोखे से पकड़ने को भेजा गया, पर कुछ कर न सका।

१६५५ कृष्णा जी बाजी मोरे चंद्रराव मारा गया और जावली पर अधिकार हो गया। प्रतापगढ़ दुर्ग बनवाया। शृङ्गारपुर राज्य विजय हुआ। गोलवाडी पर अधिकार हो गया।

१६५७ शिवाजो के प्रथम पुत्र शम्भा जी का जन्म हुआ। पहिली बार मुगल-साम्राज्य में लूट आरम्भ किया। जुनेर लूटा। नासिरी खाँ, एरिज खाँ, रावकर्ण आदि दमन करने भेजे गए। शाहजहाँ की बीमारी सुनकर औरङ्गजेब ने बीजापुर से संधि कर ली तब शिवाजी ने भी संधि कर ली।

१६५९ अफजल खाँ मारा गया, शृङ्गारपुर पर अधिकार हुआ और पवनगढ़, वसंतगढ़, रङ्गाना, खेलना, विशालगढ़ तथा पन्हाला दुर्ग विजय हुआ।

रुस्तमेंजमाँ परास्त हुआ। बीजापुर नगर तक मराठी सेना पहुँची।

१६६० राजापुर लूटा गया और दाभोल छीन लिया गया। बीजापुर ने सीदी जौहर, सलाबत खाँ और फज्लमुहम्मद को ससैन्य शिवाजी पर भेजा। शिवाजी पन्हाला में घिर गये। वहाँ से निकलकर विशालगढ़ गए। बाजी प्रभु ने पंढरपानि में शत्रु को रोका। सीदी जौहर शिवाजी से मिल गया। अली आदिल शाह स्वयं लड़ने आया। कई दुर्ग विजय कर फतेह खाँ तथा सावंतवाड़ी के सावंतों को कोंकण पर अधिकार करने को भेजा। शिवाजी ने डंडा राजपुरी लूट कर सिंधु दुर्ग बनवाया, बहलोल खाँ सावंतों के सहायतार्थ आया। बाजी घोरपदे मारा गया और मुधोल लूटा गया। खवास खाँ हार गया। संधि हुई। मुगलों ने चाकण और पूना पर अधिकार कर लिया।

१६६१ कल्याण भिअंडी पर मुगलों का अधिकार हो गया।

१६६२ शाह जी की मध्यस्थता में बीजापुर से संधि हुई। रायगढ़ दुग बनने लगा।

१६६३ घुड़सवारों का सेनापति नेता जी पालकर मुगल साम्राज्य में लूट करने गया था। इसका मुगल सवारों ने पीछा किया। रुस्तमेजमाँ की सहायता से रक्षा हुई। शायस्ता खाँ पूना में था कि शिवाजी के रात्रि-आक्रमण से डर कर भागा।

वह बङ्गाल भेजा गया और उसके स्थान पर शाहजादा मुअज्जम नियुक्त हुआ।

१६६४ १५ जनवरी को शाहजादा पहुँचा। शिवाजी ने प्रथम बार सूरत लूटा। शाह जी घोड़े से गिर कर मर गए। जसवंतसिंह और भाऊसिंह ने कोंदाना घेरा, पर नहीं ले सके।

१६६५ जयसिंह तथा उनके सहकारी दिलेर खाँ, दाऊद खाँ, रायसिंह सिसौदिया, इहतिशाम खाँ, कुबाद खाँ. सुजानसिंह, कीरतिसिंह, यहिया आदि जसवन्तसिंह के बदले नियुक्त हुए। पुरंधर और रुद्रमाल किले विजय हुए। शिवाजी ने जयसिंह से मिल कर २३ दुर्ग देकर संधि कर लिया। शिवाजी ने सेनासहित बीजापुर की चढ़ाई में जयसिंह की सहायता की। शरजा खाँ तथा खवास खाँ को शिवाजी ने दिलेर खाँ के साथ परास्त किया। युद्ध में याकूत खाँ मारा गया।

१६६६ शिवाजी आगरे की ओर लौट आये।

१६६७ जयसिंह की मृत्यु हुई। शिवाजी ने कई दुर्ग कोंकण में विजय किए।

१६६८ मुगलों से शिवाजी की संधि हो गई।

१६७० मुगलों से युद्ध आरंभ हुआ। ताना जी ने उदैभान को मार कर सिंहगढ़ विजय किया, पर स्वयं मारा गया। पुरंधर छीन लिया। कल्याण लेकर कोंकण पर अधिकार कर लिया। सूरत दूसरी बार लूटा गया। दाऊद खाँ को वानी युद्ध में परास्त किया। बरार और बगलाना में लूट किया। सल्हेर दुर्ग ले लिया। जंजीरा लेने

में असफल रहे। वहाँ का अध्यक्ष फतेह खाँ शिवाजी से मिल गया था, पर सीदियों ने उसे मार डाला।

१६७१ छत्रसाल बुँदेला शिवाजी के यहाँ आये। महाबत खाँ सेनापति होकर आये। सल्हेर घेरा गया। महाबत के लौट जाने पर दिलेर खाँ तथा बहादुर खाँ आये। अमरसिंह के मारे जाने, मुहकमसिंह और मियाना के कैद होने पर मुगल सेना नष्ट हो गई। बहलोल खाँ और इखलास खाँ मोरो पिंगले और प्रतापराव गूजर से हार गये।

१६७२ बहादुर खाँ और दिलेर खाँ हार कर लौट गए। जावरि को कोली राजा से छीन लिया। रामनगर राज्य भी अधिकृत हो गया। बरार और तैलिं-गाना में लूट-मार किया। हैदराबाद जाकर बीस लाख पैगोडा लेकर लौट आया। सीदियों ने डंडा राजापुरी पर अधिकार कर लिया। अली आदिल शाह की १५ दि० सं० मृत्यु हुई।

१६७३ पन्हाला पुनः जीत कर कनारा तथा दक्षिण महाराष्ट्र में लूट आरंभ किया। हुबली लूट कर बीजापुर पर जल और स्थल से आक्रमण किया। बहलोल खाँ उमरानी युद्ध में प्रतापराव गूजर से हार गया और फिर नेसारी युद्ध में आनंदराव से हारा। बिदनोर के राजा से कर लिया और सितारा के पास के कई दुर्ग ले लिये।

१६७४ दिलेर खाँ की हार। रायगढ़ में ६ जून को शिवाजी की राजगद्दी। बहादुर खाँ का कैंप लूटना। जीजाबाई की मृत्यु।

१६७५ बहादुर खाँ से संधि का प्रस्ताव। कुल कनारा के किनारे के दुर्ग विजय कर लिए। बिदनोर तथा कनारा के पहाड़ी प्रान्त पर अधिकार हो गया।

१६७६ पोंडा और कोल्हापुर ले लिया। फाल्टन प्रांत में कई दुर्ग बनवाये जिनमें दो का नाम भूषणगढ़ तथा सदाशिवगढ़ था। जंजीरा पर असफल चढ़ाई। बहलोल अफगान द्वारा खवास खाँ मारा गया तथा बीजापुर में दोनों पक्ष वालों में युद्ध।

१६७७-८ कर्णाटक पर चढ़ाई। बहादुर खाँ के स्थान पर दिलेर खाँ सूबेदार हुआ। दिलेर खाँ और अब्दुल्ला खाँ की गोलकुंडा पर चढ़ाई। हार कर लौट गया। बीजापुर पर मुगलों की चढ़ाई हुई, तब शिवाजी से सहायता माँगी। शिवाजी ने बुरहानपुर लूट कर रनमस्त खाँ से युद्ध किया। फाल्टन प्रांत में हुसेन खां मियाना आदि परास्त हुए।

१६७९ शिवाजी बीजापुर गए। शंभा जी भाग कर दिलेर खाँ के भतीजे इखलास के साथ उसके पास गए। बीजापुर का घेरा शिवाजी द्वारा उठा दिया गया। दिलेर खाँ हार कर लौट गया। शिवाजी का बीजापुर में स्वागत और संधि

शिवाजी के बेड़े ने खंडेरी और उंडेरी ले लिया, पर अंग्रेजी तथा मुगल बेड़ों से हार गया।

१६८० ५ अप्रैल (चैत्र की पूर्णिमा) को शिवाजी स्वर्ग सिधारे। शंभा जी की राजगद्दी।

१६८३-८५ पुर्तगाल युद्ध. कलश का अधिकार बढ़ना।

१६८४-६ मुगलों की चढ़ाई, बीजापुर राज्य का अंत।

१६८६-७ गोलकुंडा राज्य का अंत।

१६८७-८ मराठों के राज्य का बढ़ना, औरंगजेब क चढ़ाई।

१६८९ ११ मार्च १६८९ को शंभा जी तथा कलश मारे गए। शंभा जी के पुत्र शिवाजी राजा और शंभा जी के भाई राजाराम अभिभावक नियुक्त हुए। रायगढ़ पर १९ अक्तूबर को अधिकार हुआ और शिवाजी पकड़े गए।

१६९०-९८ मुगलों से युद्ध, मराठों के राज्य पर जिंजी तक मुगलों का नाम मात्र को अधिकार हो गया।

१७०० राजाराम की मृत्यु।

१७०६ वाकिनकेरा का घेरा, मुगलों की हार और लौटना।

१७०८ शिवाजी उपनाम साहू का बहादुर शाह द्वारा छुटकारा पाना, राजगद्दी।

१७४७ साहू की मृत्यु।

परिशिष्ट (च)

ऐतिहासिक पुरुषों तथा स्थानों का

विवरण युक्त अनुक्रम

अकबर—यह मुगल साम्राज्य के संस्थापक बाबर का पौत्र, हुमायूँ का पुत्र तथा प्रसिद्ध तृतीय मुगल सम्राट् था। सन् १५४५ ई० में अमरकोट में इसका जन्म हुआ। सन १५५६ ई० में प्रथम पानीपत युद्ध-विजय हुआ तथा इन्हें राजगद्दी हुई और सन १६६० ई० में बैराम खाँ से इन्होंने राज्य-प्रबन्ध ले लिया। इन्होंने प्रायः बीस वर्ष में पड़ोसी राज्यों को जीत कर समग्र उत्तरापथ में मुगल साम्राज्य स्थापित कर दिया। इसके अनंतर दक्षिण की ओर इन्होंने चढ़ाइयाँ कर उधर के भी कई राज्य विजय किए। सन् १६०५ ई० में इनकी मृत्यु हुई। इनमें धार्मिक कट्टरता नहीं थी और यह गुण-ग्राहक थे।

अनवर खाँ—मुगल दरबार का एक सरदार था, जो छत्रसाल के विरुद्ध भेजा गया था। यह युद्ध में हार कर भाग गया। बहादुर शाह तथा फर्रुखसियर के समय यह बुरहानपुर का फौजदार था। यह उसी शहर का एक शेखजादा था।

अनिरुद्धसिंह—पौरच क्षत्रिय राजा अमरेश के पुत्र थे। इसके विषय में विशेष कुछ नहीं ज्ञात हुआ।

अफजल खाँ—इसका नाम अब्दुल्ला खाँ भटारी पठान था और यह बीजापुर का एक बड़ा सरदार था। यह कई दुर्ग का अध्यक्ष रह चुका था। सन् १६५९ ई० के सितम्बर महीने में शिवाजी से युद्ध करने को यह बीजापुरी १०००० सेना के

साथ रवाना हुआ। मार्ग में पंढरपुर तथा तुलजापुर के मन्दिरों को इसने भ्रष्ट किया। राजनीति-कुशल शिवाजी ने युद्धस्थल में इससे सामना कर अपने नये राज्य को विषम समस्या में डालना अनुचित समझ कर षड्यंत्र रचा और उसमें अफजल अपनी सेना सहित नष्ट हो गया। यह स्वयं शिवाजी को धोखे से पकड़ना चाहता था, पर फल उलटा हुआ।

अब्बास शाह—यह ईरान अर्थात् फारस के बादशाह थे।

अमरसिंह चन्द्रावत—रामपुरा के राव दुर्गा सिसौदिया के प्रपौत्र, राव चन्द्रभान के पौत्र तथा हरिसिंह के पुत्र थे। यह सं० १७०७ वि० में शाहजहाँ की सेवा में आया और एक हजारी ६०० सवारों का मंसब पाकर सम्मानित हुआ। औरङ्गजेब के साथ कंधार गया। धर्मत युद्ध में यह महाराज जसवन्तसिंह के साथ था, पर बिना युद्ध किए स्वदेश लौट गया। शुजाअ का पीछा करने पर नियुक्त हुआ। इसके अनंतर मिर्जाराजा जयसिंह के साथ दक्षिण आया और सं० १७२३ वि० में सलहेर युद्ध में मारा गया। इसका पुत्र मुहकम सिंह उसी युद्ध में कैद हुआ था।

अमीन खाँ मुहम्मद—यह मुगल दरबार का एक सरदार था, जिसने पन्नानरेश छत्रसाल पर चढ़ाई की थी। औरङ्गजेब के समय के तथा बाद के दो प्रसिद्ध अमीन खाँ ज्ञात हैं। (१) मुहम्मद सैयद मीरजुम्ला का पुत्र था, जिसने शाहजहाँ तथा औरङ्गजेब के राज्यकाल में बहुत कार्य किया था। यह पाँच हजारी मंसबदार था। गुजरात के अहमदाबाद में सन् १६८२ ई० में इसकी मृत्यु हो गई। (२) निजामुलमुल्क आसफजाह के भाई बहाउद्दीन का पुत्र था, जो औरङ्गजेब के समय दरबार में आया।

सैयद भ्राताओं के मारे जाने पर यह मुहम्मद शाह का प्रधान मंत्री हुआ, पर कई महीने बाद इसकी मृत्यु हो गई।

अरब—एशिया महाद्वीप के दक्षिण के तीन बड़े प्रायद्वीपों में से एक जो पूर्व के कोने पर है, इसका विशेष भाग रेगिस्तान है। मुसल्मानी मत यहीं से आरम्भ हुआ।

अवधूतसिंह—सं० १७५७ वि० के लगभग इनके पिता अनिरुद्धसिंह मऊगञ्ज के सेंगर ठाकुरों के हाथ मारे गए। उस समय इनकी अवस्था छः मास की थी। पन्नानरेश छत्रसाल के पुत्र हृदयशाह ने रावाँ पर चढ़ाई कर उस पर अधिकार कर लिया। दिल्ली के बादशाह बहादुरशाह की सहायता से अवधूतसिंह को उनका राज्य फिर मिला।

अहमदनगर—यह राज्य सन् १४८९ से १६३७ ई० तक रहा। इसका विस्तार उत्तर में खानदेश राज्य से दक्षिण में नीरा नदी तक और पश्चिम में समुद्र से पूर्व बरार तथा बीदर तक रहा। इन दोनों राज्यों के नष्ट होने पर उनका कुछ अंश अहमदनगर राज्य में मिल गया था। दमन से बंबई तक का समुद्री किनारा इसी के अधिकार में था। यहाँ निजामशाही राज्य था। अहमदनगर राजधानी भीमा नदी पर समुद्र से साठ कोस पूर्व हटकर है।

आकुत—देखो याकूत।

आगरा—यह प्रसिद्ध नगर संयुक्तप्रांत में यमुना नदी के किनारे पर बसा है। यह मुगल सम्राटों की राजधानी थी।

आमेर—प्रसिद्ध नगर जयपुर के पास एक पहाड़ी पर इस नाम का दुर्ग बना हुआ है जो जयपुर बसाए जाने के पहिले कछवाहा राज-वंश की राजधानी थी।

आलमगीर—मुगल सम्राट औरङ्गजेब की पदवी थी। यह शाहजहाँ का पुत्र था। इसका जन्म १६१८ ई० में हुआ था। सन् १६५६

ई० में अपने भाइयों को मार कर तथा पिता को कैद कर दिल्ली की राजगद्दी पर बैठा। यह अपनी धर्मांधता तथा राजविस्तार की लालसा में मुगल साम्राज्य को नष्टप्राय करता हुआ सन् १७६० ई० में मरा।

आसाम—बंगाल की पूर्व सीमा पर स्थित एक प्रान्त।

इखलास खाँ मियाना—बीजापुर के पठान सरदार अब्दुल कादिर बहलोल खाँ का पुत्र था। यह मुगल सम्राट् की सेवा में चला आया। वानी डिंडोरी युद्ध में जो सन् १६६० ई० के अक्तूबर महीने में हुई थी, घायल हुआ था, जो शिवाजी और दाऊद खाँ के बीच में हुई थी। यह सल्हेर युद्ध में मुहकमसिंह के साथ कैद हुआ।

इखलास खाँ—दिलेर खाँ पठान का भतीजा था।

इखलास खाँ मुहम्मद, खवास खाँ का भाई तथा खानखाना इखलास खाँ का बड़ा पुत्र था। सं० १७२० में यह रुस्तमजमाँ के बदले में मीराज का सूबेदार हुआ। पर दूसरे ही वर्ष यहाँ से उत्तर कनारा को इसकी बदली हुई। सं० १७२२ ई० में शिवाजी ने इसे परास्त कर इसके दो सहस्र सैनिकों को मार डाला और उस प्रान्त पर अधिकार कर लिया। यह कुडाल लौट कर ठहरा जहाँ से बीजापुर चला गया।

इङ्गलैंड—यूरोप के पश्चिम का एक टापू है, जिसके निवासी अंग्रेज हैं।

ईरान—प्रसिद्ध नाम फारस है। पश्चिम में एशियाई टर्की, पूर्व में अफगानिस्तान और बिलोचिस्तान, उत्तर में कैकेशस पहाड़ और काला सागर तथा दक्षिण में फारस की खाड़ी है।

उज्जैन—यह मालवा प्रान्त की राजधानी है और चंबल नदी पर बसा हुआ है।

उदैभान—महाराज जयसिंह से परास्त होने पर शिवाजी द्वारा दिए गये दुर्गों में से प्रसिद्ध दुर्ग कोंदाना उपनाम सिंहगढ़ का यह किलेदार नियुक्त हुआ था। यह राठौर था। सन् १६७० ई० के आरम्भ में ताना जी मालूसरे से द्वंद्व युद्ध करते हुए अपने प्रतिद्वन्द्वी को मार कर यह मारा गया और दुर्ग शिवाजी के अधिकार में चला गया।

एदिलशाह—बीजापुर का राजवंश आदिलशाही कहलाता था, जिस वश का राज्य सन् १४८९ से सन् १६८६ ई० तक रहा। ४ नवंबर सन १६५६ ई० को पिता की मृत्यु होने पर अली आदिलशाह गद्दी पर बैठा। इसी के समय में शिवाजी ने इस राज्य का कुछ अंश दबा लिया था। इसीने प्रथम बार अफजल खाँ और दूसरी बार उसके पुत्र रुस्तम खाँ तथा सीदी जौहर को शिवाजी को दमन करने भेजा था। यह सन् १६७२ ई० मरा और इसका पुत्र सिकन्दर आदिलशाह सुलतान हुआ।

कमाऊँ—यह नैपाल के पश्चिम हिमालय की तराई में है। सन् १६६५ ई० में मुगल सम्राट् ने यहाँ के राजा बहादुर चंद को परस्त कर इसे साम्राज्य में मिला लिया था, पर सन् १६७३ ई० में प्रसन्न होकर पुनः वह राज्य उसे फेर दिया। यह पुराना जागीरदार था।

कर्ण, राव—यह बीकानेर के राजा थे। इनके पिता राव सूर सिंह भुरटिया थे जिनकी मृत्यु पर यह सन १६३१ ई० में गद्दी पर बैठे। उसी वर्ष से बराबर यह बादशाह के कार्य करते रहे। औरंगजेब ने बादशाह होने पर सन् १६५७ ई० में पोंडा में मराठों को रोकने को इन्हें नियत किया। सन् १६६५ ई० में जयसिंह के पुरंधर घेरने पर दाहिने ओर के मोर्चे पर नियुक्त हुए। यह बादशाह की आज्ञानुसार यहाँ इस कार्य में लगे

हुए थे कि इनके सुपुत्र अनूपसिंह ने बादशाह से बीकानेर राज्य अपने नाम करा लेने का प्रयत्न किया। यह सुनकर अपने कार्य में यह सतर्क न रहने लगे, जिस पर बादशाह ने दिलेर खाँ को इन्हें कैद करने को लिखा। भाऊसिंह हाड़ा इन्हें बचा कर औरंगाबाद ले गए। यह सन् १६६७ ई० की घटना है। इसके दो वर्ष बाद इनकी मृत्यु हुई।

कर्णाटक—कृष्णा नदी की घाटी से रासकुमारी तक फैला हुआ प्रांत इसके पूर्व कारोमंडल घाट है। वर्तमान मदराज प्रांत का पश्चिम दक्षिण भाग तथा मैसोर इसी के अंतर्गत है। कुछ भाग बंबई प्रांत में भी आ गया है।

कलकत्ता—हुगली नदी पर बसा हुआ प्रसिद्ध नगर है।

कलिंग—उड़ीसा प्रांत का प्राचीन नाम।

कल्याण—एक कल्याण थाना जिले के अंतर्गत है और बंबई से लगभग तीस मील उत्तर-पूर्व है। दूसरा कल्याण बीदर से लगभग चालीस मील ठीक पश्चिम में स्थित है। छं० २११ में इसी दूसरे कल्याण का उल्लेख है। यह भूषण के समय में बीजापुर राज्य में था।

कश्मीर—पंजाब के उत्तर का एक बड़ा देशी राज्य।

काबुल—भारत के पश्चिम-उत्तर सीमा पर स्थित अफगानिस्तान की राजधानी, जो इसी नाम की नदी पर बसा है।

कारतलब खाँ—सन् १६५७ ई० में यह जुनेर के पास थानेदार नियुक्त हुआ। सन् १६७० ई० के मई महीने में इसे खिलअत, घोड़ा, तलवार तथा जमधर मिला था।

काशी—गंगा जी के तट पर बसा हुआ प्रसिद्ध तीर्थ-स्थान। यहीं सन् १६६६ ई० में विश्वनाथ जी तथा विंदुमाधव के मन्दिर तोड़ कर औरंगजेब ने मसजिदें बनवायी थीं।

किशोरसिंह—कोटानरेश माधोसिंह के पाँच पुत्रों में यह सबसे छोटे थे। धर्मत युद्ध में इन पाँचों भाइयों ने महाराज यशवंतसिंह का साथ दिया और युद्ध में एक को छोड़ कर सभी ने वीर-गति पाई। किशोरसिंह को इतने घाव लगे थे कि वह मृत्यु-मुख से ही मानों बच निकले थे। यह सन् १७२६ वि० में गद्दी पर बैठे। यह दक्षिण ही में बराबर नियुक्त रहे, जहाँ सन् १७४२ वि० में अर्काट दुर्ग के घेरे के समय मारे गए।

कुडाल—सावंतवाड़ी में काली नदी पर स्थित है। बाद को वाड़ी के सावंत ही कुडाल के देसाई कहलाने लगे। सन् १६६३ में इस पर, राजापुर तथा वेनगुर्ला बंदर पर शिवाजी का अधिकार हो गया।

कुतुबशाह—सुलतान कुली को बहमनी सुलतान महमूदशाह ने कुतुबुल् मुल्क की पदवी सहित गोलकुंडा जागीर में दिया। इसने अठारह वर्ष सूबेदारी करने के बाद सन् १५१? ई० में स्वतंत्रता की घोषणा की और सुलतान कुली कुतुबशाह प्रथम कहलाया। इसके बाद क्रमशः जमशेद, सुभान, इब्राहीम तथा मुहम्मद गद्दी पर बैठे। सन् १६३५ ई० में अबुल्ला कुतुबशाह गद्दी पर बैठा। मुगलों को बराबर कर देते हुए संधि बनाए रखता था, पर सन् १६५६ ई० में औरंगजेब की कुटिल नीति के कारण मीर जुमला के बहाने उस पर चढ़ाई की गई। उससे जुर्माना आदि लेकर संधि की गई। सन् १६६६ ई० में जब बीजापुर पर जयसिंह ने चढ़ाई की थी तब इसने सहायता की थी। सन् १६७२ ई० में इसकी मृत्यु पर अबूहुसेन गद्दी पर बैठा जिससे मुगलों ने यह राज्य छीन लिया।

कंधार—बीर से ६० मील ठीक पूर्व गोदावरी की एक सहायक

नदी मेनादा पर बसा है। यह निजाम हैदराबाद के राज्य में है।

खजुआ—इलाहाबाद जिला में यह एक ग्राम है। यहीं औरंगजेब ने शाहशुजाअ पर युद्ध में विजय प्राप्त किया था जिसकी स्मृति में यहाँ बादशाही बाग, सराय आदि बनवाए गए थे। यहाँ अच्छी बस्ती हो गई है।

खवास खाँ—भूमिका देखिए।

खानदौराँ—ख्वाजः हिसारी नक्शबंदी को यह तथा खाँ नसरत जंग की उपाधि मिली थी। यह सात हजारी मंसबदार था, जिसे १२ जुलाई सन् १६४५ ई० को लाहौर में एक काश्मीरी ब्राह्मण ने मार डाला था। इसके लड़के को भी यही उपाधि तथा पाँच हजारी मंसब मिला। राज्य के लिए भाइयों में युद्ध होने पर यह औरंगजेब ही के पक्ष में रहा। दक्षिण में कुछ दिन नियुक्त रहने के अनंतर यह उड़ीसा का सूबेदार नियत हुआ, जहाँ सन् १६६७ ई० में मर गया।

खुरासान—फारस देश के उत्तर तथा पश्चिम का प्रांत।

गढ़ा—जबलपुर ज़िले में एक पुरानी बस्ती है। गढ़ामांडल के गोंड राजाओं की यहीं राजधानी थी जिनका कोट मदनमहल पहाड़ पर अभी तक वर्तमान है।

गढ़नेर—इससे गढ़नगर से तात्पर्य ज्ञात होता है। चांदा प्रान्त में गढ़ नाम की कई बस्तियाँ हैं जिनमें यह एक हो सकता है। नेर नगर ही का छोटा रूप है।

गुजरात—इसका दूसरा नाम काठियावाड़ है। यह भारत के पश्चिम ओर का एक प्रायःद्वीप है जिसके दक्षिणी तट तथा बंबई तट के मिलने से खंभात की खाड़ी बनी है।

गोर—बङ्गाल प्रांत का गौड़ नगर या अफगानिस्तान का गोर दुर्ग और शहर हो सकता है।

गोलकुडा– यह कुतुबशाही सुलतानों की राजधानी थी। दक्षिण के प्रसिद्ध नगर हैदराबाद के पास है। दोनों ही मूसा नदी पर बसे हुए हैं।

गोंडवाना—मध्य प्रांत का वह भाग जहाँ पहिले विशेषतः गोंड जातियाँ बसती थीं।

चालकुड–बंबई तथा डंडा राजपुरी बन्दरों के बीच में स्थित एक बंदर है। यह कोलाबा के पास ही है।

चाँदा—मध्यदेश के दक्षिण में प्रांत तथा एक नगर है। यह नागपुर से दक्षिण है। इसी प्रांत से होकर बानगङ्गा इसी की सीमा पर की प्रणहीत नदी में मिलती है।

चित्तौड़– मेवाड़ राज्य के अन्तर्गत इस नाम का एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक दुर्ग है।

चिंतामणि– सुप्रसिद्ध बाजीराव पेशवा के भाई चिमना जी आप्पा का यह नाम है। विशेष भूमिका में देखिए।

चीन—भारतवर्ष के उत्तर एक बहुत बड़ा साम्राज्य है जिसकी राजधानी पीकिन है। उत्तर में साइबीरिया, पूर्व में शांत (पासिफिक) महासागर और जापान तथा पूर्व में मध्य तुर्की और कास्पियन समुद्र है।

चौरागढ़—मध्य प्रदेश के नरसिंहपुर जिले में गहरवार स्टेशन से पाँच कोस दक्षिण और पूर्व है। यह गढ़ामांडल प्रांत की राजधानी था।

चन्द्रराव—इनके पूर्वज पर्सोजी बाजीराव मोरे को यूसुफ आदिलशाह ने जावली जागीर में और चंद्रराव उपाधि दी थी। सन् १५२४ ई० के युद्ध में इनके पुत्र यशवन्तराव ने अहमदनगर का हरा झंडा छीन लिया था जिसके उपलक्ष में इन्हें

राजा की पदवी मिली। पर्सोजी की आठवीं पीढ़ी में कृष्णा जी हुए, जिसके पाँच पुत्र थे। पहिला बाला जी राजा हुआ। जीजाबाई ने इसीसे शिवाजी के लिए उसकी पुत्री माँगी थी, पर उसने अस्वीकार कर दिया। बाजी श्यामराजे को इसीने सहायता दी थी और इसीके राज्य में शिवाजी को मारने का उसने षड्यंत्र रचा था. पर शिवाजी की सतर्कता से वह निष्फल गया। शिवाजी ने इन्हें मिलाने का प्रयत्न किया. स्वयं जाकर मिले पर कुछ फल न निकला। दो राजदूत रघू बल्लाल आत्रे तथा शंभा जी कावा जी भेजे गए, जिन्होंने सन् १६५५ ई० में बाला जी तथा उसके भाई को मार डाला। शिवाजी ने ससैन्य जाकर जावली पर अधिकार कर लिया।

छत्रसाल बुँदेला—देखो भूमिका।

छत्रसाल हाड़ा—बूँदी-नरेश रावरत्न के यह पौत्र थे, जिनकी मृत्यु पर सन् १६३१ ई० में यह गद्दी पर बैठे। दक्षिण में इन्होंने बहुत दिनों तक बीजापुर आदि के सुलतानों के विरुद्ध लड़ाइयों में कार्य किया था। कंधार की चढ़ाइयों में भी यह साथ गए थे। दारा आदि भाइयों के युद्ध में इन्होंने सब से बड़े दारा ही का साथ दिया और सामूगढ़ के युद्ध में सन् १६५७ ई० में मारे गए।

जगतसिंह—राजा मानसिंह का यह सब से बड़ा पुत्र था। सन् १५९९ ई० में यह बङ्गाल का सहकारी प्रांताध्यक्ष नियुक्त हुआ, पर आगरे से यात्रारम्भ करने के पहिले ही जवानी ही में मर गया। यह योग्य सेनापति था और कई युद्धों में वीरता दिखला चुका था।

जवारि—नासिक जिले के पास सूरत से सौ मील दक्षिण में है। ५ जून सन् १६७२ ई० में शिवाजी ने इसे इसके कोली राजा विक्रमसाह से छीन लिया।

जयसिंह—जयपुर के राजा थे। सन् १६१७ ई० में बारह वर्ष की अवस्था में राजा हुए। यह बहुत ही योग्य थे। सन १६६४ ई० में शिवाजी को दमन करने के लिए नियुक्त हुए। सन् १६६५ ई० में शिवाजी से संधि कर ली। सन् १६६६ ई० में बीजापुर तक पहुँच कर लौटे और शिवाजी को आगरे भेजा। सन् १६६७ ई० में यह दक्षिण से राजधानी बुला लिए गए, पर मार्ग ही में २ जुलाई को इनकी मृत्यु हो गई।

जसवन्तसिंह—जोधपुर-नरेश गजसिंह के द्वितीय पुत्र थे। सं० १६९४ में गद्दी पर बैठे। दारा तथा औरङ्गजेब के साथ दो बार कंधार की चढ़ाई पर गये। सं० १७१४ में धर्मत युद्ध में औरङ्गजेब परास्त हुए, जिसके बादशाह होने पर यह गुजरात के सूबेदार नियत हुए। सं १७१९ में शायस्त खाँ के साथ दक्षिण गए। दो-तीन वर्ष यहाँ रहने पर यह दिल्ली बुला लिए गए, पर सं० १७२४ में फिर दक्षिण भेजे गए। मुअज्जम को पिता के विरुद्ध उभाड़ने की शंका में यह फिर राजधानी बुला लिए गए और जमरूद के फौजदार नियुक्त हुए, जहाँ सं० १७३५ में इनकी मृत्यु हुई। यह सुकवि तथा कवियों के आश्रयदाता थे।

जावली—चंद्रराव मोरे वंश की यह राजधानी थी, जो कोयना नदी की घाटी में महाबलेश्वर के ठीक नीचे बसा है। अब यह एक छोटा सा गाँव है। यह सितारा जिले के उत्तर-पश्चिम कोने में है तथा पहाड़ी है और जङ्गल भी बहुत है। पश्चिम की ओर सह्याद्रि पर्वतमाला है।

जोधपुर—मारवाड़ राज्य की राजधानी है। यह राज्य राजपूताना में अरावली के पश्चिम में है।

झारखंड—उड़ीसा प्रांत का वह भाग जो बङ्गाल की सीमा के पास है।

ढुंढार—जयपुर राज्य का यह भी एक नाम है।

तहव्वर खाँ—यह मुगल दरबार का एक सरदार था जो पन्नानरेश महाराज छत्रसाल के स्वातंत्र्य के लिए युद्ध आरम्भ करने पर उन्हें दमन करने को भेजा गया था। यह प्रयत्न करने पर भी अन्त में असफल होकर लौट गया।

त्रिबिटमपुर—तिकवाँपुर, देखो भूमिका 'कवि-परिचय'।

दलेल महम्मद—यह दिलेर खाँ या दिलेर हिम्मत खाँ हो सकता है। प्रथम का परिचय अन्यत्र दिया हुआ है। दूसरा एक सेनाध्यक्ष था जो अमरसिंह आदि के साथ दक्षिण में युद्ध करने आया था। (औरङ्गजेब नामा हिंदी भा० २ पृ० ३०)

दाऊद खाँ—यह सन् १६६४ ई० में दक्षिण में नियत हुआ। पुरंधर के घेरे में यह उपस्थित था और सेना के साथ शिवाजी के राज्य में लूट-मार करने भेजा गया। इसके बाद यह खानदेश का सूबेदार नियत हुआ। यहीं से बादशाह की आज्ञानुसार मुअज्जम के सहायतार्थ सेना-सहित दक्षिण गया। सन् १६७० ई० में यह वानी डिंडोरी युद्ध में मराठों से परास्त हुआ। इसके बाद अहमदनगर के पास मराठों को रोकने को भेजा गया। सन् १६७२ ई० में राजधानी चला गया।

दारा—शाहजहाँ का सब से बड़ा पुत्र था। इसमें धार्मिक कट्टरता नहीं थी। इसके पिता ने इसे ही यौवराज्य दिया था, पर औरङ्गजेब ने राज्यतृष्णा में पड़कर इसे तीन युद्धों में परास्त कर मरवा डाला और स्वयं पिता को कैद कर बादशाह बन बैठा।

दिलेर खाँ—इसका नाम जलाल खाँ था और यह दाऊदजई अफगान था। इसका बड़ा भाई बहादुर खाँ रुहेला था। सन् १६६४ ई० में यह जयसिंह के साथ दक्षिण में नियत हुआ। पुरंधर और रुद्रमाल दुर्गों को घेर कर उसे विजय किया। सन् १६६७ ई०

में जयसिंह के लौट जाने तथा शाहजादा मुअज्जम सूबेदार होने पर यह उसके साथ नियत हुआ। यह कुछ दिन गोंडवाना में लूट-मार करता रहा। सन् १६७० ई० में शाहजादा से भेंट करने आया, पर शंका से दरबार नहीं गया और अपनी सेना के साथ उत्तर भागा। बहादुर खाँ की सहायता से औरंगजेब से इसे क्षमा प्राप्त हुई। इसी के साथ यह फिर सन् १६७१ ई० में दक्षिण गया। इसका मंसब पाँचहजारी था और यह दक्षिण ही में सन् १६८३ ई० में मर गया

देवगिरि—इससे देवगढ़ से तात्पर्य ज्ञात होता है। यह रत्नगिरि जिले का एक भाग है। इसके उत्तर में राजापुर, पूर्व में कोल्हापुर राज्य, पश्चिम में अरब खाड़ी और दक्षिण में सावंतवाड़ी है।

द्राविड़—कर्णाटक प्रांत का वह भाग जिसमें द्राविड़ जाति बसती है।

निजामशाह—अहमदनगर के सुलतानों की यह पदवी थी। इन की बहरी अर्थात् समुद्री भी उपाधि थी। बहमनी सम्राट महमूदशाह के वजीर निजामुल्मुल्क का पुत्र अहमद सन् १४६० ई० में अपने स्वामी की सेना को हरा कर स्वतंत्र बन बैठा। सन् १४९९ ई० में अहमदनगर की नींव डाली। सन् १६३३ ई० में शाहजहाँ के समय में इस राज्य का अंत हो गया और अंतिम निजामशाह हुसेन कारागार में मरा।

नैपाल—आगरा और अवध के संयुक्त-प्रान्त के उत्तर, कमायूँ कमिश्नरी के पूर्व सिक्किम के पश्चिम तथा तिब्बत के दक्षिण में स्थित यह एक राज्य है।

नौसेरी खाँ—शुद्ध नाम नासिरी खाँ था। सन् १६५७ ई० में शिवाजी ने पहिली बार मुगल साम्राज्य में लूट-मार आरम्भ किया, तब औरंगजेब ने इसे ३००० सेना सहित भेजा। इसने मराठा

सेना को परास्त किया। इसके बाद राव कर्ण के साथ पोंडा में नियत हुआ था।

परनाला—कृष्णा नदी की दो सहायक वर्णा तथा हिरण्यकेशी नदियों के बीच में एक दुर्ग है।

परेंदा—यह दुर्ग धरूर से ६० मील पश्चिम-दक्षिण सीना नदी पर शोलापुर से अहमदनगर जाने वाली सड़क पर है।

पलाऊ—शुद्ध नाम पलामऊ है। बिहार तथा छोटा नागपुर की सीमा पर एक जिला है। यह बिलकुल पहाड़ी है। यहाँ का राजा प्रतापराय चेरु था जिसे शायस्त खाँ ने सन् १६४२ ई० में हराकर करद बनाया था। सन् १६६१ ई० में दाऊद खाँ ने इसे विजय कर खालसा कर लिया।

पार—जावली के पास का एक ग्राम।

पुर्तगाल—यूरोप के दक्षिण-पश्चिम आइबीरिया प्रायद्वीप में स्थित एक राज्य है। यह स्पेन के पश्चिम में है। यहाँ के निवासी-गण भारत में व्यापार करने आते थे।

पूना—यह नगर बम्बई प्रान्त में भीमा की एक सहायक नदी मूता-मूला पर स्थित है। बम्बई नगर से लगभग ६५ मील पूर्व दक्षिण हटकर है।

फतेह खाँ—जंजीरा के सीदियों का एक सरदार था। शिवाजी से लड़ाई में कई बार परास्त होने पर उनसे संधि की बातचीत कर रहा था कि इसके तीन सहकारियों ने विद्रोह कर इसे मार डाला और मुगल सम्राट् औरंगजेब से संधि कर उसके अधानस्थ सरदार बन गए। यह घटना सन् १६७४ ई० की थी।

फ्रांस—यूरोप के पश्चिम ओर समुद्र से किनारे पर बसा हुआ एक देश है। यहीं के निवासी फ्रेंच या फरासीसी कहलाते हैं, जो शिवाजी के समय भारत में आ चुके थे।

फिरंगान—फिरंगियों अर्थात् यूरोप-निवासियों का निवास-स्थान। एक सज्जन ने इसे मध्य एशिया का फरगानः माना है, पर वह ठीक नहीं ज्ञात होता।

बक्खर—सिंध नदी में एक टापू है, जिस पर दुर्ग बना हुआ है। यह बंबई के सिंध प्रांत में है। इसी के सामने सक्खर है।

बब्बर—मुगल सम्राट् अकबर का पितामह था। इसी ने पानीपत के प्रथम युद्ध में इब्राहीम लोदी पर तथा कन्हवा युद्ध में महाराणा संग्रामसिंह पर विजय प्राप्त कर भारत में अपना राज्य स्थापित किया था। इसने अपना आत्मचरित लिखा है, जो वास्तव में एक सच्चे वीर तथा सहृदय पुरुष के योग्य है।

बलख—अफगानिस्तान के उत्तर तथा बुखारा के दक्षिण खीवा में स्थित एक शहर है जो वंक्षु नदी के पास है। यह तैमूरलंग की राजधानी थी।

बहलोल—यह बीजापुर का प्रधान अमात्य था और इसका नाम अब्दुलकादिर था। इसके दो पुत्र और एक भतीजा थे। शाह जी के साथ कर्णाटक शांति स्थापित करने गया था। शिवाजी के विद्रोह पर ये दोनों बुलाए गए थे, पर यह बीमार हो कर सं० १७२२ में मर गया। इसके अधीन बारह सहस्र पठान सेना थी।

बहलोल—सन् १६६१-२ ई० में वाड़ी के सावंत तथा मुधोल के बाजी घोरपदे से मिलकर शिवाजी से युद्ध करने गया था, पर हार गया। सन् १६७३ ई० के आरम्भ में प्रतापराव गूजर ने हुबली लूटा, पर उसके बाद बहलोल द्वारा परास्त हुए। बंकापुर में एक मराठी सेना को इसने परास्त किया। सन् १६७३ ई० के अंत में यह बारह सहस्र सेना के साथ शिवाजी का मार्ग रोकने के लिए गया, जो कनारा में लूट के लिए गए हुए थे। प्रतापराव गूजर ने इसे परास्त कर बीजापुर

लौटा दिया। नई सेना के साथ फिर लौटा, पर आनंदराव ने उसे फिर परास्त किया। इसके बाद हंबीरराव के साथ इसे परास्त कर इसकी सेना लूट ली। इसके बाद यह बीजापुर का प्रधान अमात्य हुआ। (११ नवं० सन् १६७५) इसका नाम अब्दुर्रहीम था।

बहादुर खाँ—यह पहिले गुजरात का सूबेदार था और इसने दिलेर खाँ की सहायता की थी। सन् १६७२ ई० में यह दिलेर खाँ के साथ दक्षिण में महाबत खाँ के स्थान पर भेजा गया। इसी के समय सल्हेर युद्ध में मुगल हारे, और यह तथा मुल्हेर दुर्ग छिन गया। मराठे रामगिरि तक लूटते चले गए और बहादुर व्यर्थ ही वहाँ तक पीछा करता गया था। सन १६७४ ई० में खैबरी पठानों के विद्रोह करने पर मुगल सेना का अच्छा भाग उत्तर लौट गया, जिससे दक्षिण में लड़ाई रुक गई।

बाजीराव—बाला जी विश्वनाथ के प्रथम पुत्र विसा जी का जन्म सं० १७५५ में हुआ था। यही बाजीराव के नाम से प्रसिद्ध हुए। दूसरे पुत्र चिमना जी आप्पा इनसे दस वर्ष छोटे थे। सं० १७७७ वि० में पिता की मृत्यु पर यह द्वितीय पेशवा हुए। सं० १७८४ वि० में यह ससैन्य निजाम के राज्य में से होते गुजरात तक लूटते चले गए और लौटकर पालखेड़ के पास उसे परास्त किया। इसके बाद सं० १७८८ में त्र्यंबकराव धाबदे को परास्त किया। दो वर्ष बाद छत्रसाल की सहायता करते हुए मुहम्मद खाँ बंगश को परास्त किया। सं० १७९४ वि० में यह दिल्ली गए और उसे लूटा। सं० १७९७ वि० में इन्होंने हैदराबाद के निजाम नासिरजंग को फिर से पराजित किया, पर इसी वर्ष इनकी मृत्यु हो गई।

बादर खाँ—मेरे विचार से यह बहादुर खाँ का बिगड़ा रूप है।

जब जरूर से जोर बन सकता है तो ऐसा हो जाना बिलकुल संभव है। बहादुर खाँ देखिए।

बाँधव—रीवाँ राज्य में एक प्राचीन दुर्ग है। राजा विक्रमाजीत के रीवाँ को राजधानी बनाने के पहिले यहाँ के राजा बांधव-नरेश ही कहलाते थे।

बीर—या बीड, अहमदनगर से ६८ मील ठीक पूर्व है। वर्तमान समय में यह हैदराबाद राज्य के अंतर्गत है।

बावनीगिरि—यह दक्षिणी कर्णाटक में एक स्थान है।

बिदनोर—यह तुंगभद्रा नदी के उद्गम-स्थान के पास है। यह पहाड़ी राज्य है और कनाड़ी भाषा में इसे मालनद कहते हैं, जिससे फारसी इतिहासों में यहाँ का राजा मालनंद के राजा के नाम से लिखा गया है। अली आदिलशाह ने इस राज्य को विजय कर करद बनाया था। इस पराजय के एक वर्ष बाद यहाँ का राजा शिवप्पा मर गया और उसका पुत्र ब्राह्मणों द्वारा मारा गया। इसकी रानी चेनम्मा थी, तथा पुत्र सोमशेखर राजा हुआ। यह रानी तथा तिमैय्या राज्य का प्रबन्ध करते थे। अली ने फिर चढ़ाई की। सं० १७३२ वि० में शिवाजी को कर देना स्वीकार किया।

बिलायत—अर्थ देश है पर साधारणतः अन्य देशीय राजाओं के स्वदेश को कहते हैं। जैसे, मुसलमानों के राज्य के समय अफगानिस्तान फारस आदि और वर्तमान समय में इंगलैंड।

बीजापुर—यह कृष्णा तथा भीमा के बीच में एक प्रसिद्ध नगर है। यह बीजापुर राज्य की राजधानी थी। वर्तमान समय में यह बम्बई प्रान्त के अंतर्गत है।

बीदर—यह नगर गोदावरी की सहायक नदी मानजेरा के किनारे पर कल्याण के ठीक पूर्व अठारह-बीस कोस पर है। यहाँ दुर्ग भी है और यह बारीदशाही राज्य की राजधानी थी।

बीरबर—यह सम्राट् अकबर के अंतरंग मित्रों में से थे। इनका जन्म सं० १५८५ वि० में हुआ था। इनका नाम महेशदास था और यह ब्राह्मण थे। सन् १५७४ ई० में इन्हें राजा की पदवी मिली। सन् १५८६ ई० में अफगानिस्तान के युद्ध में यह मारे गए।

बुद्धसिंह—राव राजा, यह अनिरुद्धसिंह के पुत्र थे, जिनकी मृत्यु पर यह बूँदी के राजा हुए। जाजऊ के युद्ध में इन्होंने बहादुरशाह का साथ दिया था, जिसकी मृत्यु पर जहाँदारशाह बादशाह हुआ। सं० १७६९ वि० में इसके मरने के बाद फर्रुखसियर की रक्षा में इन्होंने दिल्ली ही में युद्ध किया था, पर उस बादशाह का इन पर विशेष विश्वास नहीं था, इससे यह अपने राज्य को चले गए। सवाई जयसिंह के यहाँ कुछ दिन यह अतिथि रहे, पर इन्होंने राज्य-लिप्सा में पड़कर इन्हें अपना करद बनाने का प्रस्ताव किया और इनके अस्वीकार करने पर इन्हें कैद करना चाहा जिससे लड़भिड़ कर यह निकल गए, पर राज्य खो बैठे। इनके पुत्र उम्मेदसिंह ने इनकी मृत्यु पर अपना राज्य कोटा-नरेश की सहायता से पुनः प्राप्त किया था।

बुँदेलखंड—वह प्रांत जिसकी उत्तरी सीमा यमुना, पश्चिमी चंबल तथा दक्षिण-पूर्वी सीमा नर्मदा नदी है। बुँदेलों के निवास के कारण इसका यह नामकरण हुआ।

बेतवा—बुँदेलखंड की एक नदी है जो यमुना में गिरती है। इसी के किनारे ओड़छा नगर बसा है।

बङ्ग—बङ्गाल प्रांत।

भगवंतसिंह—यह जयपुर-नरेश भारामल के पुत्र थे। इनकी सन् १५८९ ई० में मृत्यु हुई। मानसिंह इनके भाई के पुत्र थे। इनका दूसरा नाम भगवानदास भी था।

भड़ोच—यह नर्मदा नदी के उत्तर के तट पर स्थित है। यह सूरत से प्रायः चालीस मील उत्तर है।

भाऊसिंह—राव छत्रसाल के पुत्र थे। सन् १६५७ ई० में गद्दी पर बैठे। इसके तीसरे वर्ष यह दक्षिण में नियुक्त हुए और ३० अप्रैल सन् १६६० ई० को मराठों को परास्त कर चाकण दुर्ग विजय किया। सिंहगढ़ घेरते समय यह भी जसवंतसिंह के साथ थे, पर उसमें ये लोग असफल रहे। सन् १६६७ ई० में यह औरंगाबाद के फौजदार नियुक्त होकर वहीं सन् १६८७ ई० तक रहे जब उनकी मृत्यु हो गई।

भागनगर—गोलकुंडा का प्राचीन नाम जिसे वहाँ के सुल्तान ने अपनी एक प्रेयसी भागमती के नाम पर बसाया था।

भिलसा—मालवा प्रांत में भूपाल के पूर्व तथा उत्तर बेतवा नदी पर स्थित एक नगर है।

भूषण—देखो भूमिका।

मक्का—अरब प्रायःद्वीप के हेजाज प्रांत में एक नगर है जो मुहम्मद का जन्मस्थान होने के कारण मुसलमानों का तीर्थ-स्थान है।

मधुरा यह वैगाई नदी पर कर्णाटक के दक्षिणी भाग में एक नगर है।

महाबत खाँ—इसका पिता जमाना बेग बिन गोरबेग काबुली था, जिसे महाबत खाँ की पदवी मिली थी। इसीने जहाँगीर को कैद किया था। इसकी मृत्यु के ८ वर्ष बाद इसके द्वितीय पुत्र लहरास्प को सन् १६३४ ई० में महाबत खाँ की पदवी मिली। दो बार काबुल का सूबेदार हुआ। सन् १६७० ई० के अंत में यह दक्षिण का प्रधान सेनापति नियुक्त हुआ। सन् १६७२ ई० के मध्य में आज्ञानुसार यह उत्तर लौट गया। सन् १६७४ ई० में इसकी मृत्यु हो गई।

महासिंह—महाराजा मानसिंह के पुत्र जगतसिंह का यह पुत्र था। सन् १६१७ ई० में दो वर्ष राज्य करने पर अत्यंत मदिरा-पान करने के कारण इसकी मृत्यु हुई। इसी के पुत्र मिर्जा राजा जयसिंह थे।

महेवा—बुंदेलखंड के छत्रपुर राज्यांतर्गत एक स्थान है, जो मऊ-महेवा के नाम से प्रसिद्ध है। यह नौगाँव छावनी से चार मील पूर्व है। यह पन्नानरेश छत्रसाल के पूर्वजों की राजधानी थी।

मारवाड़—जोधपुर राज्य। यह राजपूताने में अरावली पर्वतमाला के पश्चिम में है। यहाँ के राजे राठौड़ हैं। शिवाजी के समकालीन यहाँ के राजा यशवंत सिंह थे।

माल मकरंद—शिवाजी के पितामह मालो जी, देखिए भूमिका।

मालवा—मध्यदेश तथा राजपूताने के बीच में स्थित एक प्रांत जिसकी राजधानी उज्जैन थी। वर्तमान काल में इंदौर, ग्वालियर आदि कई राज्यों में यह प्रांत बटा हुआ है।

मीर सहबाल—इस नाम का ठीक पता नहीं मिला और न यह शुद्ध नाम ही ज्ञात होता है। फारसी शहबाला शब्द हो सकता है जिसका अर्थ ऊपरी बादशाह या बड़ा शाह है।

मुराद—शाहजहाँ का सब से छोटा पुत्र था। पिता के विरुद्ध युद्ध करने में उसने औरंगजेब का साथ दिया था। पर अंत में उसने इसे कैद कर लिया जहाँ इसकी कुछ दिन बाद विष से मृत्यु हो गई।

मुलतान—यह पंजाब प्रांत में चिनाब नदी के किनारे एक नगर तथा जिला है।

मेवाड़—राजस्थान में अरावली पर्वत के पूर्व में राज्य है, जिसकी रजाधानी उदयपुर है। यहाँ का सिसौदिया राजवंश

बहुत प्राचीन है। शिवाजी के समय महाराणा राजसिंह यहाँ के नरेश थे।

मोहकमसिंह -रामपुरा के जागीरदार अमरसिंह चंद्रावत का पुत्र था। सन् १६७२ ई० के आरंभ में मल्हेर युद्ध में इसके पिता मारे गये और यह कैद हुआ। कुछ दिन बाद छूटने पर अहमदनगर लौट गया और बहादुर खाँ कोका की सहायता से इसे राव की पदवी मिली। सन् १६६० ई० के लगभग इसकी मृत्यु हुई। इसके पुत्र का नाम गोपालसिंह था।

मोरङ्ग -कूच बिहार के पश्चिम तथा पूर्णिया के उत्तर का एक राज्य। इस नाम की एक प्राचीन जाति के बसने से इस स्थान का यह नामकरण हुआ था। यहीं एक जाली शुजाअ पैदा हुआ था. यह राज्य सन् १६६४ ई० में तथा सन् १६७६ ई० में दो बार विजय किया गया था।

रतनाकर—भूषण के पिता का नाम।

रनदूलह खाँ देखो रुस्तमजमाँ।

राजगढ़ -सन् १६४६ ई० में शिवाजी ने तोरण दुर्ग से छ मील हट-कर मोरबद पहाड़ी पर एक दुर्ग बनवाया। इसको बनाने वाले का नाम मोरो पिंगले था। इसी दुर्ग का नाम राजगढ़ हुआ। यह नीरा नदी के तट पर है और रायगढ़ के पास ही है।

रामगिरि—निजाम हैदराबाद के राज्य के यलगंदल प्रांत में गोदावरी नदी के पास है। यह १८°३५ उ० ७९°३५ पू० अक्षांश पर है। मराठों ने सन् १६७२ ई० में इसे लूटा था।

रामनगर—यह सूरत से केवल साठ मील दक्षिण है। यह भी कोली राज्य था। इस राज्य की नई राजधानी अब धर्मपुर है, जो रामनगर से १३ कोस दक्षिण-पश्चिम है। सन् १६७२ ई० के जुलाई में इस पर मराठों का अधिकार हो गया।

रामसिंह—मिर्जा राजा जयसिंह के पुत्र थे। मिर्जा राजा के दक्षिण में नियुक्त होने पर यह इनके प्रतिनिधिस्वरूप दरबार में रहे। सन् १६६७ ई० में पिता की मृत्यु पर राजा हुए। उसी वर्ष यह आसाम में नियुक्त हुए, जहाँ से नौ वर्ष के अनन्तर लौटने पर इनकी सन् १६७६ ई० में मृत्यु हुई।

रायगढ़—पश्चिमी घाट के एक शृङ्ग पर बना हुआ दुर्ग, जिसे पहले रैरी कहते थे। शाह जी की सम्मति से सन् १६६२ ई० में शिवाजी की आज्ञा से अंबा जी सोनदेव ने यह दुर्ग बनाया। इसके बाद यह राजधानी हुई। यह महाबलेश्वर से दक्षिण कुछ हट कर है।

रुद्रसाह—देखो भूमिका।

रुस्तमजमा—इसकी पहिले रणदूलह खाँ उपाधि थी। यह बीजापुर की ओर से उस राज्य के दक्षिण-पश्चिम भाग का सूबेदार था। मीराज में रहता था। सं० १७१७ में इसने अफजल खाँ के लड़के फज्ल के साथ शिवाजी से युद्ध किया था। इसने शिवाजी से मित्रता कर ली थी। इसीकी सहायता से सं० १७२० में नेता जी पालकर बच कर निकल गए थे। इस मित्रता के कारण उसी वर्ष इसकी सूबेदारी छिन गई, पर दूसरे वर्ष फिर उसी पद पर बहाल हो गया। सं० १७२३ ई० में पन्हाला के पास समय पर डंका बजा कर इसने शिवाजी को शत्रु-सेना के आने की सूचना दी थी। इसके अनन्तर इसने अपने स्वामी को प्रसन्न करने के लिए पोंडा के सामने पड़ी हुई मराठी सेना को धोखा देकर नष्ट करा डाला, जिससे यह मित्रता टूट गई। इसके अनन्तर इसने अपने सुलतान के विरुद्ध बलवा किया, जिसमें इसकी सब जागीर छिन गई। इसीके आसपास इसकी मृत्यु हुई और

इसका पुत्र रुस्तमजमाँ द्वितीय के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इसने शिवाजी से मैत्री नहीं रखी।

रुहिलान—अफगानिस्तान के रुह प्रांत से आए हुए पठानगण, जिनके बसने से रुहेलखंड कमिश्नरी का नामकरण हुआ है।

रूम—एशियाई तुर्की को रूम कहते हैं। इटली की राजधानी का नाम भी रोम है।

रूसियान—यूरोप के उत्तर-पश्चिम के बड़े राज्य रूस के निवासी-गण। इसी राज्य का एशिया के उत्तर के विशाल प्रांत साई-बीरिया पर अधिकार है।

रेवा—नर्मदा नदी ही को रेवा कहते हैं।

लोहगढ़—जुनेर के दक्षिण में इन्द्रायणी की घाटी के पश्चिम ओर पहाड़ पर यह दुर्ग है। इसी के पास तिकोना दुर्ग भी है।

शाइस्ता खाँ—इसका असली नाम अबूतालिब मिर्जा मुराद था। यह शाहजहाँ के प्रधान मंत्री आसफ खाँ का पुत्र तथा मुमताजमहल बेगम का भाई था। यह दारा आदि भाइयों का मामा था। सन् १६४१ ई० में वजीर नियत हुआ। सन् १६५९ ई० में यह दक्षिण का सूबेदार नियुक्त हुआ। सन् १६६० ई० में पूना तथा चाकन दुर्ग विजय हुआ। सन् १६६३ ई० में शिवाजी रात्रि में थोड़े आदमी लेकर पूना गए और जहाँ शायस्ता खाँ सोया हुआ था वहाँ पहुँच कर उसके पुत्र तथा कई साथियों को मारते हुए निकल गए। शायस्ता खाँ ऐसा डर गया कि वह तुरन्त औरंगाबाद चला गया और वहाँ से बंगाल की सूबेदारी पर भेज दिया गया। सन् १६९४ ई० की ३१ मई को ९३ वर्ष की अवस्था में इसकी मृत्यु हुई।

शाहजहाँ—अकबर का पौत्र तथा जहाँगीर का पुत्र था। सन् १६२७ ई० में गद्दी पर बैठा। अपनी शाहजादगी में इसने कई बार दक्षिण के सुलतानों को परास्त किया था। पिता के

विरुद्ध विद्रोह किया। सन् १६५८ ई० में इसके पुत्रों ने इसके अधिक रोगग्रस्त होने पर राज्य के लिए युद्ध किया जिसमें औरंगजेब विजयी होकर बादशाह हुआ। सन् १६६६ ई० में यह मरा।

शाह जी—यह शिवाजी के पिता और अहमदनगर के जागीरदार थे, जिस राज्य का अंत होने पर यह बीजापुर राज्य के एक सर्दार बन गए। विशेष भूमिका देखिए।

शिवाजी—देखिए भूमिका।

शुजाअ—शाहजहाँ का द्वितीय पुत्र था। यह बंगाल का प्रांताध्यक्ष था। यह शाहजहाँ की बीमारी का वृत्तांत सुनकर ससैन्य राज्य के लिए युद्ध करने आया। औरंगजेब से परास्त होने पर यह अराकान भाग गया जिसके बाद का उसका कुछ सत्य वृत्तांत नहीं मिला।

शंभा जी—देखिए भूमिका।

सक्खर—सिंध प्रात में सिंध नदी के किनारे एक नगर है जो शिकारपुर के पास पूर्व की ओर है। इसी के दूसरी ओर भक्कर है।

सफजंग—(फा० शैफ जंग—युद्ध की तलवार) यह उपाधि हो सकती है। जैसे सैफ खाँ सेफुद्दौला आदि हैं। इस उपाधि के कई मंसबदार दक्षिण के युद्ध में औरंगजेब द्वारा भेजे गये थे।

समद खाँ—पूरा नाम सैफुद्दौला नवाब अब्दुस्समद खाँ दिलेर जंग था। इसने सिक्खों के युद्ध में बड़ी वीरता दिखलाई थी। कसूर के एक विद्रोही अफगान हुसेन खाँ को परास्त कर मार डाला था। इसने बुन्देलखंड पर भी चढ़ाई की थी, पर वहाँ सफल-प्रयत्न नहीं हो सका। छत्रप्रकाश में इस चढ़ाई का वर्णन है।

सलहेरि—बगलाना प्रांत में एक दुर्ग तथा कसबा है। यह पश्चिमी घाट पहाड़ के नीचे है। समुद्र तट तथा धूलिया नामक प्रसिद्ध नगर के बीच में है।

साम—अंग्रेजी में इसे सीरिया प्रांत कहते हैं। मध्यसागर के पूर्वी तट तथा अरब के बीच में है।

साहि—देखिए शाह जी।

साहू—देखिए भूमिका।

सितारा—कृष्णा नदी के तट पर पश्चिमी घाट के नीचे बसा है। सन् १८४९ ई० में यह राज्य बृटिश भारत में मिला लिया गया। यह शिवाजी के वंशधरों का राज्य था।

सिरीनगर—काश्मीर की राजधानी। मध्य प्रदेश में भी एक नगर इस नाम का है। भूषण का इसी दूसरे ही से तात्पर्य ज्ञात होता है, क्योंकि उनके समय में काश्मीर साम्राज्य का एक प्रांत मात्र था।

सिलहट—आसाम प्रांत की सरमा घाटी में एक नगर है। इस प्रांत का यह सब से बड़ा शहर है।

सिंगारपुर यह नीरा नदी के दक्षिण सितारा से लगभग पचीस कोस पूर्व है। सितारा तथा शोलापुर के बीच में पड़ता है।

सिंहगढ़—इसका प्राचीन नाम कोंदाना था। यह पूना के पास उसके दक्षिण में है। शिवाजी ने इस दुर्ग को ठीक कर सिंहगढ़ नाम रखा था।

सिंहल—हिंदुस्तान के दक्षिण का सिंहल टापू जिसे सीलोन भी कहते हैं।

सुजानसिंह बुन्देला—राजा, सन् १६५४ ई० में पिता पहाड़सिंह की मृत्यु पर ओड़छा का राजा हुआ। सन् १६६४ ई० में जयसिंह के साथ नियत हुआ। पुरंधर दुर्ग के घेरे में अच्छी वीरता दिखलाई। आँनर में मराठी सेना को हराया। सन् १६६२

ई० में चाँदा पर दिलेर खाँ के साथ नियत हुआ। सन् १६७१ ई० इसकी मृत्यु हुई।

सूरत—ताप्ती नदी के बाएँ तट पर बसा हुआ व्यापारी नगर जो समुद्र के पास ही है। मुगलों के समय विशेषतः यहीं से अरब आदि स्थानों को यात्रीगण जाते थे।

सैद अफगन—एक मुगल सर्दार, जो बुन्देलखंड में ससैन्य महाराज छत्रसाल को दमन करने भेजा गया था। छत्रप्रकाश में इसका उल्लेख है।

हबसान—हब्शियों का निवास-स्थान हब्श देश, जो अफ्रीका महाद्वीप में है। आजकल के नक्शों में वह ऐबिसीनिया नाम से लिखा जाता है।

हुमायूँ—मुगल सम्राट् अकबर के पिता थे। बाबर की मृत्यु पर उसके संस्थापित राज्य के यह अधिकारी हुए, पर कुछ ही दिनों में उसे खोकर फारस भागे। वहाँ से लौटकर यह फिर भारत आए और दिल्ली पर अधिकार कर लिया। यह सन् १५५६ ई० में मर गए।

हृदयराम—भूषण के आश्रयदाता रुद्रराम के पिता का नाम था। देखिए रुद्रराम।

मुद्रकः—महावीर प्रसाद, प्रेम प्रेस, कटरा, प्रयाग।